अनुक्रमणिका

प्रस्तावना

गत बीस-पचीस वर्षोंमें हमारे भूगोल-विषयक दृष्टिकोणमें एक क्रांति हो गई है। पहले किसी देशका भूगोल सिखानेका मतलब होता था: उस देशके शहरों, पर्वतों, नदियों, फसलों और आयात-निर्यात मालके नामोंकी सूची रटा देना। इसीमें शिक्षकके कर्तव्यकी इतिश्री समझ ली जाती थी। चाहे स्वदेशका भूगोल हो और चाहे ऐसे परदेशोंका भूगोल जिनसे विद्यार्थियोंको जीवन-भर सहसा कभी काम नहीं पड़ना है, उनके पढ़ानेमें कोई अन्तर नहीं किया जाता था। कोई भी नया देश आया नहीं कि पहले उसकी सीमाएँ, मुख्य मुख्य बन्दरगाह, अन्तरीप आदि क्रमसे रटाने ही पड़ते थे। यह दृष्टि पहले थी ही नहीं और अब तक भी बहुतसे शिक्षकोंको प्राप्त नहीं हो पाई है कि लड़कोंको स्वदेशका, और विशेष तौरसे उस भागका जहाँ कि उनका जन्म हुआ है, विशेष परिचय होना चाहिए,—इतना ही नहीं बल्कि जहाँ तक हो सके उसका प्रत्यक्ष अनुभव भी होना चाहिए, इसके बाद स्वदेशसे जिन जिन देशोंका विशेष सम्बन्ध है उनका जितना जरूरी है उतना और जिन देशोंसे कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है उनका सिर्फ कामचलाऊ ज्ञान होना चाहिए।

भूगोल पढ़ानेकी पद्धतिमें एक बड़ा दोष और भी था। पहले इसकी कल्पना

भी नहीं थी कि मनुष्य और पृथ्वी इन दोनोंमें कोई सजीव सम्बन्ध भी है। मानो उस समय भूगोलमें मनुष्यके लिए कोई स्थान ही नहीं था! अन्तरीप, खाड़ी, नदी, पर्वत आदिके नाम बतलाने और इसी तरह उन देशोंके नाम रटानेके आगे मनुष्योंका कुछ विचार ही नहीं किया जाता था और न यह बताना आवश्यक समझा जाता था कि उस देशके लोगोंके जीवनका तथा वहाँकी भौगोलिक परिस्थितियोंका परस्पर क्या कार्य-कारण सम्बन्ध है और अन्तरीपों, खाड़ियों तथा नदियों और पर्वतोंका मनुष्यके जीवनपर क्या विशेष प्रभाव पड़ता है। खास तौरसे आबोहवा और भू-पृष्ठ-रचनाका मनुष्यके जीवन और उद्योग-धंधोंके साथ कितना सजीव सम्बन्ध है यह भी विद्यार्थियोंको नहीं बताया जाता था।

भूगोलकी नवीन शिक्षण-पद्धतिमें जो नई बात आई है वह है कार्य-कारण भावका ज्ञान, और ऐसा कार्य-कारण भाव जिसके तागे मनुष्य-प्राणी तक पहुँच जावें। पृथ्वीकी पीठके विभिन्न प्रदेशोंके मनुष्य अपने लिए अन्न-वस्त्र किस तरह प्राप्त करते हैं, मकान कैसे बनाते हैं, फुरसतके वक्त कलाकी आराधना करके संस्कृतिका विकास किस तरह करते हैं, बड़े बड़े कार्य सहकारिताके द्वारा किस तरह सफल करते हैं आदि बातोंकी शिक्षा नवीन भूगोल देती है। विनोदमें कभी कभी मैं शिक्षकोंसे कह दिया करता हूँ कि नवीन भूगोल 'सेल्फिश' या स्वार्थी है। मनुष्य-प्राणीके जन्मके लाखों वर्ष पहलेसे पृथ्वीका रहँट चल रहा है और शायद मनुष्य-प्राणियोंका संहार हो जानेके बाद भी लाखों वर्ष तक चलता रहेगा। एक फकीर या संन्यासी किसी धर्मशाला या सरायमें आता है, चार दिन रहता है और चला जाता है। परन्तु, धर्मशाला उसके साथ नहीं जाती। उसमें दूसरे मुसाफिर भी आते हैं, रहते हैं, दो दिन गृहस्थी करते हैं और फिर चल देते हैं। मनुष्य-जाति भी उक्त फकीर या संन्यासीके समान ही है। वह भी कुछ लाख वर्ष उसमें रहेगी और चली जायगी। सराय बनी रहेगी, फकीरके बिना उसका काम नहीं अटक रहेगा।

पृथ्वीका भी मनुष्यके बिना कुछ अटकेगा नहीं। सूर्यके चारों ओर तथा अपनी धुरीपर उसका भ्रमण जारी है और आगे भी जारी रहेगा। परन्तु, नवीन भूगोलका अपना एक स्वार्थी दृष्टिकोण भी है। पृथ्वीका अस्तित्व मनुष्य-प्राणीके जन्मके पहले था और उसकी मृत्युके बाद भी रहेगा; पृथ्वीपर मनुष्यके सिवाय अन्य पशु-पक्षी आदि असंख्य प्राणी हैं और रहेंगे, पर हम लोग अपने सुभीतेके लिहाजसे

यही मानते हैं कि पृथ्वी मनुष्यके लिए ही है। वह मनुष्यकी कर्म-भूमि है। परमेश्वरने वह मनुष्यको इनामके तौरपर दी है, इसलिए बालकोंको पृथ्वीका जो परिचय कराना है, सो सिर्फ मनुष्यके सुभीतेके लिहाज़से।

प्रस्तुत पुस्तकमें इसी दृष्टिको सामने रक्खा गया है। स्थूल दृष्टिसे पृथ्वीके कुछ भाग कर दिये गये हैं। भयंकर ठंड और भयंकर गर्मीवाले प्रदेश, समशीतोष्ण प्रदेश, पहाड़ी देश, चरागाहोंके प्रदेश आदि विशिष्ट प्रदेश छाँट लिये गये हैं और फिर उन प्रदेशोंमें मनुष्य अपना जीवन किस तरह बिताते हैं, प्रकृतिसे लड़कर अपनी उन्नति किस तरह और कहाँतक कर ले जाते हैं आदि दिखानेका प्रयत्न किया गया है। यह सारी दुनियाका भूगोल नहीं है। अनेक महत्वके देशोंके तो इसमें नाम तक नहीं मिलेंगे। मेरा उद्देश्य संसारके सभी देशोंका परिचय करा देना है भी नहीं। सैकड़ों नाम और अन्य बातें विद्यार्थियोंके मस्तकमें ठूँस देनेकी मेरी इच्छा नहीं है। मेरा उद्देश सिर्फ इतना ही है कि विद्यार्थियोंके भूगोलविषयक एक तरहकी वैज्ञानिक दृष्टि प्राप्त हो जाय और मनुष्य प्राणी और भौगोलिक परिस्थितियोंके बीचका पारस्परिक कार्य-कारण-भाव स्पष्टताके साथ उनकी नज़रमें आ जाय। यह उद्देश्य यदि सफल हो गया तो शेष देशोंमें मनुष्य-प्राणी किस तरह रहता है और उन देशोंकी परिस्थितियोंका उसके जीवन-पर क्या प्रभाव पड़ता है, आदि बातें विद्यार्थी स्वयं ही खोज निकालेगा। थोड़ेसे ही देशोंका चुनाव मैंने दो उद्देश्योंसे किया है। एक तो यह कि थोड़ेसे देशोंका परिचय विस्तारके साथ अच्छी तरह दिया जा सकता है और सभी प्रदेशोंका थोड़ा थोड़ा कहने-भरका परिचय देनेकी अपेक्षा कुछ चुने हुए प्रदेशोंका अच्छी तरह विगतवार परिचय देकर विद्यार्थियोंके समक्ष उनका मूर्तिमान चित्र खड़ा कर देना ज्यादा अच्छा है। मुझे मालूम होता है कि मेरा यह उद्देश्य बहुत कुछ सिद्ध हुआ है क्योंकि मेरा अनुभव है कि इस पुस्तकके मराठी और गुजराती संस्करण बच्चे उपन्यासकी तरह रुचिसे पढ़ते हैं और बच्चोंकी तरह बड़े बूढ़ोंने भी उन्हें दिलचस्पीसे पढ़ा है। यदि मैंने प्रदेशोंका चुनाव करके उनका दिलचस्प वर्णन इतने अधिक चित्रोंकी सहायतासे न किया होता तो मेरा उपर्युक्त उद्देश्य सिद्ध न होता।

दूसरा उद्देश्य यह है कि एस्किमो, बौने आदि बिल्कुल असभ्य मनुष्य-समाजोंसे शुरू करके रेगिस्तानों और पठारोंके खानाबदोशों, चरागाहोंके चरवाहों, मैदानोंके खेती-किसानी करनेवालों, लोहे और कोयलेके तथा सर्द हवाके मुल्कोंके

कारखाने चलानेवालों तकके समाजोंमेंसे संस्कृति और सुधारकी सभी सीढ़ियोंपरके समाज चुनना और उनके जीवन तथा भौगोलिक परिस्थितियोंका अन्योन्य संबंध बतलाना। मेरा चुना हुआ एक एक प्रदेश संस्कृतिके सोपानकी एक एक सीढ़ी है। उन सीढ़ियोंपर मेरे चुने हुए प्रदेशोंके सिवाय और भी प्रदेश आ सकते हैं। मेरा उद्देश्य नमूनेके तौरपर कोई-सा एक प्रदेश दिखाना-भर रहा है। बस।

अपनी पुस्तकमें मैंने और भी एक दृष्टि रक्खी है। नवीन भूगोल-शास्त्रके कुछ प्रवर्तक एक अतिशयोक्तिपूर्ण सिद्धान्त मानते हैं जो कि अनिष्टकारी है। उनके मतानुसार मनुष्य-प्राणी प्रबल प्रकृति-शक्तिका गुलाम है और इस लिए पृथ्वीपर जगह जगह उसने जिस संस्कृतिकी स्थापना की है उसका कारण वह स्वयं नहीं किन्तु उस स्थानकी भौगोलिक परिस्थिति है। उनकी समझमें बुद्ध, ईसा, मुहम्मद आदि पैगम्बर एशिया खण्डमें ही उत्पन्न हुए, इसका कारण केवल यहाँकी भौगोलिक परिस्थिति ही है! भारतकी संस्कृति यदि सब तरफसे सन्दूककी तरह बन्द है, तो इसका कारण भी यह है कि इसके तीन तरफ समुद्र और एक तरफ पर्वत है!

यह एकान्त सिद्धान्त मुझे मान्य नहीं है।—यह मैं मानता हूँ कि प्रकृति और मनुष्यका कलह सभी प्रदेशोंमें चल रहा है। यह भी मुझे मान्य है कि मानवी संस्कृतिकी वृद्धि भौगोलिक परिस्थितियोंके द्वारा मर्यादित रहती है; फिर भी मनुष्य प्राणीमें इच्छा-शक्ति है, उत्साह है, बौद्धिक बल है और है प्रकृतिको वशमें करके उसके द्वारा अपने कार्योंको करानेकी सनातन कालसे चली आती हुई महत्त्वाकांक्षा। यही कारण है कि प्राचीन कालके अनन्त प्राणी नष्ट हो गये, परन्तु यह छह फुटका मनुष्य आज तक कायम है। जहाँपर प्रकृति अत्यन्त प्रतिकूल है वहाँका मनुष्य यद्यपि विकासकी सीढ़ियोंपर नहीं चढ़ पाता परन्तु वहाँ भी वह चुप नहीं बैठा रहता। हाथ-पाँव चलाता है: भले ही बर्फका हो पर वह मकान बनाता है, मछलीके चमड़ेका ही हो पर वस्त्र बनाता है, शिकार करता है और जीता है, मर नहीं जाता। जहाँ परिस्थितियाँ अनुकूल होती हैं वहाँ खेती करता है, ढोर रखता है, सुंदर मकान और शहरोंका निर्माण करता है, आवागमनके नये नये साधन जुटाता है और धर्म तथा दर्शन-शास्त्रका संस्थापन और विकास करता है। इतना ही नहीं, अपने सामर्थ्यसे वह भौगोलिक परिस्थितियोंको बदलकर विश्वामित्रकी तरह नई सृष्टिका भी निर्माण करता है: सिंध और मिस्रकी मरु-भूमियोंमें नहरें निकालकर नंदनवन बना देता है, मध्य एशियामें नदियोंके बहनेकी

दिशाको बदलकर उन्हें रूक्ष मरुस्थलोंपरसे बहा ले जाता है और झीलकी जगह समुद्रमें मिलनेको लाचार करता है। गरज यह कि पृथ्वी मनुष्यकी कर्म-भूमि है। इस पुस्तकमें मैंने भौगोलिक परिस्थिति अथवा मानवी शक्ति, इन दोनोंमेंसे किसीको भी अनुचित महत्त्व न देकर उनके बीच समतोलता बनाये रखनेका और यह बतानेका प्रयत्न किया है कि मनुष्य जगह जगह अपना सिर ऊपर उठानेका किस तरह प्रयत्न करता है और उसमें कहाँ तक सफलता प्राप्त करता है।

यह पुस्तक इंग्लैण्डमें फुरसतके समय मराठीमें लिखी गई थी। महाराष्ट्रके ट्रेनिंग स्कूलों, हाईस्कूलों और प्राथमिक स्कूलोंमें यह पढ़ाई जाती है। मेरे अहमदाबादके मित्र प्रोफेसर आठवलेकी नज़रपर यह पुस्तक चढ़ गई और उन्हें लगा कि इसका गुजराती अनुवाद होना चाहिए। मैंने अनुमति दे दी और फिर भूल भी गया। एक दिन सबेरे देखा कि प्रो० आठवलेने गुजराती अनुवादकी हस्त-लिखित प्रति भेज दी है। मैं चकित हो रहा। आखिर मुझे उसे प्रकाशित करनेकी व्यवस्था करनी पड़ी। उक्त गुजराती अनुवादका प्रूफ देखनेका कार्य मेरे मित्र श्री झीणाभाई देसाई (कवि ‘ स्नेहरश्मि ’) ने किया। प्रूफ जैसे जैसे आते जाते थे वैसे वैसे उनकी विदुषी पत्नी श्रीमती विजया बहन उन्हें पढ़ती जाती थीं। आखिर एक दिन गुजराती पुस्तक तैयार हो गई और मैं एक दिन उनके यहाँ भोजन करने गया। भोजन करके जैसे ही आरामकुर्सीपर लेटा कि देखता हूँ कि पुस्तकके कुछ अध्यायोंके हिन्दी अनुवादकी हस्तलिखित कापी मेरे सामने मेजपर रखकर विजया बहन विजयी मुद्रासे मुसकराती खड़ी हैं। मुझे अचरज हुआ। मुझे क्या पता था कि विजया बहनके लिए हिन्दी करीब करीब मातृभाषाकी तरह ही है और गुजराती अनुवाद छपते न छपते वे इसका हिन्दी अनुवाद भी कर देंगीं।

श्रीमती विजया बहनको इस कार्यमें गुरुकुल कांगड़ीके स्नातक उनके भाई श्रीनरेन्द्र नायकने मदद दी और मेरे नवीन मित्र श्रीनाथूरामजी प्रेमीने, जो यथानाम प्रेमी हैं, हस्तलिखित प्रतिको पढ़कर उसका उचित संशोधन और संस्करण किया और प्रकाशित करनेकी अनुमति चाही। सहर्ष मैंने अनुमति दे दी। इस पुस्तकका यही विचित्र इतिहास है। मैं आशा करता हूँ कि गुजराती और मराठीकी तरह हिन्दीमें भी यह पुस्तक विद्यार्थियों और शिक्षकोंको रुचिकर सिद्ध होगी।

हिन्दू कॉलनी,
दादर, बम्बई
१५-१-३९

वि० द० घाटे

देश देशके लोग

१ देश देशके लोग

सभी आदमी एक जैसे,—बिलकुल एक जैसे होते तो क्या होता ? सबकी एक ही तरहकी नाकें, एक ही तरहकी आँखें, एक जैसा रंग, एक जैसे कपड़े, खाना-पीना, खेलना वगैरह सब एक जैसा ही होता तो हम एक दूसरेसे उकता गये होते। हम एक दूसरेसे अलग हैं, इसीलिए हमें एक दूसरेके विषयमें जाननेकी और एक दूसरेका परिचय पानेकी इच्छा रहती है।

अपने देशका ही विचार करें तो हमें मालूम पड़ जायगा कि यहाँ रहनेवाले आदमी एक दूसरेसे कितने भिन्न हैं। ताड़ जैसा ऊँचा, गोरा, नोकीली नाकवाला, हुक्का पीनेवाला, केवल गेहूँकी रोटी खानेवाला और मिर्चको हाथ भी न लगानेवाला पंजाबी ठिंगने, काले, लम्बी चोटी रखनेवाले और केवल चावल तथा मिर्च खानेवाले मद्रासीकी अपेक्षा कितना भिन्न दिखाई देता है ! बंगाली बाबू सिरपर कुछ भी नहीं पहनता और पूनेका पंत बिलकुल गोल पगड़ी धारण

करता है ! सिन्धका आदमी ऊँची छबड़ी (=डलिया) जैसी टोपी पहनता है और संयुक्त प्रान्तके लोग फुलके जैसी मलमलकी टोपी पहनते हैं। हम लोग घर बनाकर रहते हैं और पारधी हमेशा भटकते रहते हैं। हम लोग शहरोंमें रहते हैं तो गोंड-भील भयंकर जंगलों और पहाड़ोंमें रहते हैं।

हमारे हिन्दुस्तानमें रहनेवाले लोग ही जब इतने भिन्न भिन्न प्रकारके हैं तो पृथ्वीके अलग अलग भागोंमें रहनेवाले लोग कितने भिन्न भिन्न न होंगे ? हिन्दुस्तानसे पृथ्वी तो अनेक गुणा बड़ी है। इसलिए भिन्न भिन्न देशोंके लोगोंका वर्णन बहुत ही मज़ेदार मालूम होगा। इस पुस्तकमें मैं तुम्हें कुछ मुख्य मुख्य लोगोंकी हकीकत सुनाऊँगा और वे एक दूसरेसे कैसे और क्यों भिन्न हैं, यह भी बताऊँगा।

दूसरे देशोंके कपड़े-लत्ते, रीति-रिवाज, उद्योग-धंधे हमसे अलग तरहके हैं और हमें विचित्र प्रतीत होते हैं। इसलिए हमें उनपर हँसना नहीं चाहिए। हम उनसे भिन्न प्रकारके हैं, विचित्र हैं, इसलिए वे लोग हमपर अगर हँसेंगे तो क्या हमें अच्छा लगेगा ? हरगिज नहीं।

परमात्माने मनुष्यको जिस स्थानपर और जिस परिस्थितिमें उत्पन्न किया है उस स्थान और उस परिस्थितिके अनुकूल बनकर उसे रहना पड़ता है। इसमें कोई ख़राबी नहीं, हँसनेकी बात नहीं; उलटे, इसके लिए हमें उनकी प्रशंसा ही करनी चाहिए कि विकट परिस्थितियोंके होते हुए भी बहुत-से लोग उद्योग, परिश्रम और अपनी बुद्धिमत्तासे वहाँ टिके रहते हैं,—इतना ही नहीं, बल्कि प्रतिकूल परिस्थितियोंसे टक्कर लेकर अपनी स्थिति सुधारते हैं।
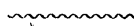
२ पृथ्वीके भाग

पृथ्वीके सभी भाग एक जैसे नहीं हैं। कहीं सपाट मैदान हैं और कहीं ऊँचे ऊँचे पर्वत। कहीं बीरान मरुस्थल हैं तो कहीं घनी बस्तीके शहर। कई जगह भयंकर गर्मी है और कई जगह भयंकर ठंड। कहीं वर्षा ही नहीं होती और कहीं हमेशा मूसलधार मेह बरसता है।

छोटे मोटे भेदोंको ध्यानमें रखनेकी हमें ज़रूरत नहीं, पर किन्हीं खास कारणोंसे पृथ्वीके जो स्थूल विभाग बन गये हैं, उन्हींपर हम विचार करेंगे।

पृथ्वीको प्रकाश और गर्मी सूर्यके द्वारा मिलती है। पृथ्वीको यदि गर्मी न मिलती तो पेड़, पशु और मनुष्य पृथ्वीपर न जी सकते। दोपहरको बारह बजे सूर्य हमारे सिरपर आया हुआ दिखाई देता है। सबेरे जब सूर्य पूर्वमें क्षितिजके पास उगता हुआ दिखाई देता है, उस समय उसकी किरणें पृथ्वीपर तिरछी पड़ती हैं; इसलिए, उस समयकी धूप कोमल होती है। पर, ऊँचा चढ़नेपर जब वह दोपहरको आकाशमें ठीक हमारे सिरपर होता है तब उसकी किरणें पृथ्वीपर सीधी अथवा लम्बरूपमें पड़ती हैं। इसलिए, उस समयकी धूप तेज होती है। वहाँसे पश्चिमकी ओर जाते हुए पश्चिमी क्षितिजके नीचे सूर्य अस्त होता हुआ दिखाई पड़ता है। किन्तु, पृथ्वीके सब भागोंमें दोपहरको सूर्य इस तरह सिरपर दिखाई नहीं देता। बहुत-से भागोंमें वह क्षितिजसे बहुत ऊँचा नहीं आता।

आगेका चित्र देखो। इस चित्रमें ०से जो रेखा पृथ्वीके बीचोंबीच खींची गई है वह पृथ्वीका मध्यभाग है। ऐसी कोई रेखा
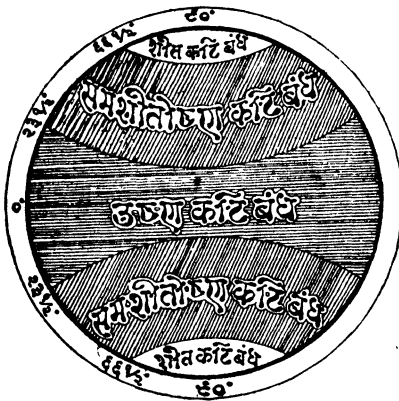
पृथ्वीके मध्यमेंसे सचमुच जाती हो, ऐसी बात नहीं। यह रेखा तो एक कल्पित रेखा है। इसको विषुववृत्त कहते हैं। इस विषुववृत्तके ऊपर, अर्थात् पृथ्वीके मध्यभागके देशोंमें, सूर्यकी किरणें सीधी पड़ती हैं। इसलिए, वहाँ उष्णता ज़्यादह रहती है। विषुववृत्तके उत्तरमें २३½ अंश ऊपर खींची हुई रेखाके और दक्षिणमें २३½ अंश नीचे खींची हुई रेखाके प्रदेशमें सूर्यकी किरणें सीधी पड़ती हैं। इसलिए इस भागको 'उष्ण कटिबंध' कहते हैं। उष्ण कटिबंधके उत्तर और दक्षिणमें जैसे जैसे आगे बढ़ते हैं वैसे वैसे सूर्यसे पृथ्वीको मिलनेवाली गर्मी कम होती जाती है; क्योंकि, इस प्रदेशमें सूर्यकी किरणें सीधी नहीं पड़तीं। उत्तरमें २३½ से ६६½ अंशतक खींची हुई रेखावाले प्रदेशको 'उत्तर समशीतोष्ण कटिबंध' और दक्षिणमें २३½ से ६६½ अंशतक खींची हुई रेखाको 'दक्षिण समशीतोष्ण कटिबंध' कहते हैं। इन कटिबंधोंको 'समशीतोष्ण' कहनेका यह कारण है कि यहाँ सर्दी और गर्मी साधारण होती है। गर्मी साधारण पड़नेका कारण इस प्रदेशमें सूर्यकी किरणोंका सुबहके सूर्यकी किरणोंकी तरह तिरछा पड़ना है। उत्तर समशीतोष्ण कटिबंधके उत्तरमें तथा दक्षिण समशीतोष्ण कटिबंधके दक्षिणमें आये हुए प्रदेशोंमें सूर्यकी किरणें बहुत तिरछी पड़ती हैं और बहुत दिनोंतक तो वहाँ सूर्य-किरणें पड़तीं ही नहीं। इसलिए, इन दोनों प्रदेशोंमें अँधेरा

और अतिशय ठंड रहती है। ये उत्तरी और दक्षिणी शीत-कटिबंध कहे जाते हैं।

इसपरसे हमें मालूम होता है कि जैसे जैसे हम विषुववृत्तके दक्षिण या उत्तरमें चलते जाते हैं वैसे वैसे गर्मी कम होती जाती है। उष्णताकी कम-अधिक मात्रापरसे मोटे तौरपर हम पृथ्वीके तीन भाग कर सकते हैं—

(१) बहुत गरम भाग—अर्थात् उष्णकटिबंध यह पृथ्वीका मध्यभाग है। यहाँपर वर्षा खूब होती है। अनेक भयंकर जंगल हैं जिनमें भयंकर हिंस्र प्राणी बहुत मिलते हैं। ऐसे उष्ण प्रदेशमें यह संभव नहीं कि मनुष्य सुख-शांतिसे रह सके, इसलिए यहाँ मनुष्योंकी बस्ती बहुत कम है।

(२) बहुत ठंडे और अँधेरे भाग—अर्थात् उत्तर और दक्षिण शीत-कटिबंध। इस भागमें प्रकाश और गर्मीके अभावसे सारे देशमें बर्फ छाई रहती है। वृक्ष या पौधे बढ़ नहीं सकते। खेती करना असंभव है। बहुत ठंड होनेसे बस्ती भी ज़्यादह नहीं।

(३) साधारण ठंड और गर्मीवाले भाग—अर्थात् उत्तर और दक्षिण समशीतोष्ण कटिबंध। ये भाग मनुष्यके स्वभावके अनुकूल हैं और इन भागोंमें मनुष्यको रहना अच्छा लगता है। यहाँकी हवा उत्साहवर्धक होनेसे यहाँ उद्योग-धंधे, खेती आदि अच्छी तरह किये जा सकते हैं। इस भागमें मनुष्यकी बस्ती स्वाभाविक तौरपर ही ज़्यादह होती है और यहाँ रहनेवाले मनुष्य अन्य कटिबंधोंमें रहनेवाले लोगोंकी अपेक्षा बहुत सुधरे हुए हैं।

जल-वायुका एक कारण तो ऊपर दिया जा चुका है अर्थात् विषुववृत्तसे दूरी। परंतु, यही एक जलवायुका कारण नहीं है। दूसरा

भी एक महत्त्वपूर्ण कारण है, वह है प्रदेशकी ऊँचाई। जितना ऊँचा प्रदेश उतनी ही ठंडी वहाँकी आबोहवा। पहाड़ोंपर मैदानकी अपेक्षा अधिक ठंडी हवा होती है। शिमला अंबालासे थोड़े ही मील दूर है, पर गर्मियोंमें शिमलेकी हवा ठंडी होती है और अंबाला पास होते हुए भी गरम रहता है। इसीलिए, एक ही कटिबंधमें पास पास आये हुए भागोंमें प्रकाश और गर्मीमें बहुत फ़र्क पड़ जाता है।

ऊपर कहे गये भिन्न भिन्न प्रकारके प्रदेशोंमें रहनेवाले आदमी वहाँकी परिस्थितिके अनुसार भिन्न भिन्न प्रकारके बन जाते हैं। कहावत है, 'जैसा देश वैसा वेष।' जैसा देश है वैसा वेष न भी हो, फिर भी खाना-पीना, घर-बार, उद्योग-धंधे, रीति-रिवाज आदि अलग अलग तरहके तो होते ही हैं। कहा जा सकता है कि मनुष्य अपने चारों ओरकी परिस्थितियोंका गुलाम होता है। वह घर किस तरह बनावे, क्या खावे, क्या पहने, कौन-से उद्योग-धंधे करे, किस तरह रहे, कैसे बरते, आदि बातें जिस देशमें वह रहता है उसपरसे निश्चित होती हैं और उन्हें उसे चुपचाप स्वीकार कर लेना पड़ता है।

तो भी, मनुष्यमें और मूक प्राणियोंमें अन्तर है। मनुष्यके पास बुद्धि है, इच्छा-शक्ति है, महत्त्वाकांक्षा है। जीवन सुखसे बितानेके लिए उसकी दौड़-धूप रहती है और विकट परिस्थितियोंके होनेपर उनसे लड़कर वह अपने लिए सुख-सुविधा निर्माण करता है। परिस्थितियों और मनुष्यके बीचका झगड़ा बहुत मनोरंजक होता है। इस पुस्तकमें इस प्रकारके झगड़े जगह जगह मिलेंगे। कई जगह तो हम देखेंगे कि मनुष्यने प्रतिकूल परिस्थितियोंको अपने अथाह प्रयत्नों और बुद्धिमत्तासे बिलकुल बदलकर अपने अनुकूल कर लिया है।

अब हम देखेंगे पृथ्वीके अलग अलग भागोंपर रहनेवाले लोग क्यों और किस प्रकार भिन्न भिन्न हैं।

अभ्यास

१ सूर्यकी किरणें जब तिरछी होती हैं तब धूप कम लगती है और जब सीधी पड़ती हैं तब ज्यादह। पर किरणें तो एक-मात्र सूर्यमेंसे ही आती हैं, इसलिए उनकी गर्मीमें कमी नहीं होनी चाहिए। फिर भी, गर्मी कम ज्यादह हो जाती है, इसका क्या कारण है? हो सके तो इस अन्तरको दर्शानेवाली एक आकृति खींचो।

२ लोग गर्मियोंमें हवा बदलनेके लिए पहाड़ोंपर जाते हैं। पहाड़ोंके सिवाय हवा बदलनेके और कौनसे स्थान हैं? वहाँ हवा ठंडी क्यों होती है?

३ 'मनुष्य अपने आसपासकी परिस्थितिका गुलाम होता है,' यह कथन गुजरातके भील, मारवाड़ी और मराठोंके जीवन और रहन-सहनके उदाहरण देकर सिद्ध करो।

४ हिन्दुस्तानके भिन्न भिन्न लोगोंके उदाहरण देकर बताओ कि प्राकृतिक परिस्थितियोंका मनुष्यके पहिनावे और भोजनपर क्या असर होता है?

३ बर्फीले प्रदेशके एस्किमो

पहले हम उत्तरके शीत कटिबंधके प्रदेशकी सफ़र करें और फिर वहाँ किस तरहके लोग रहते हैं, उनके घर कैसे होते हैं, वे क्या खाते हैं, किस तरहके कपड़े पहनते हैं, कौनसे उद्योग-धंधे करते हैं आदि सब बातोंका परिचय प्राप्त करें।

बिलकुल उत्तरके इस प्रदेशमें भयंकर ठंड होती है। यहाँ सूर्य कभी आकाशके मध्यमें दिखाई नहीं देता, इसलिए यहाँ रहनेवाले लोगोंको पर्याप्त प्रकाश कभी नहीं मिलता। यह सारा प्रदेश बर्फवाला है। यहाँ सर्दियोंमें पानी जमकर पत्थर-सा कठोर बन जाता है।

इसलिए ठंडके कारण वृक्ष उगते ही नहीं। कहीं कहीं एक-दो हाथके ऊँचे पौधे दिखाई दे जाते हैं और गर्मियोंमें कुछ थोड़े फूल और फल दिखाई देते हैं।

यहाँ रहनेवाले लोगोंको 'एस्किमो' कहते हैं। ये लोग पीले रंगके ठिंगने और चपटी नाकके होते हैं। वे इस प्रदेशमें अपना जीवन कैसे बिताते होंगे? पेड़ नहीं, पत्ते नहीं, खेती नहीं, पासमें ढोर या घोड़े वगैरह पशु तक नहीं। तो फिर ये लोग जीते कैसे होंगे? मनुष्यको खानेके लिए अन्न और शरीरके लिए वस्त्र चाहिए। एस्किमो-देशमें हाड़ कँपा देनेवाली ठंड होनेके कारण उनको गरम कपड़ोंकी कितनी जरूरत पड़ती होगी? पर, अन्न और वस्त्र कहाँसे मिलते हैं? ज़मीनमेंसे? जमीनमें अनाज उगे तो उसमेंसे अन्न मिले, रुई पैदा हो अथवा पास भेड़ें हों तो सूतके अथवा ऊनके कपड़े उन्हें मिलें। पर ये दोनों चीजें एस्किमोके देशमें मिलनी कठिन हैं। तो फिर, ये लोग क्या करते होंगे? मनुष्यका स्वभाव है कि उसको किसी भी चीज़की जरूरत हो और वह चीज़ न मिले तो वह बैठा नहीं रहता। वह उस चीज़के बदले दूसरी किसी एकाध नई ही चीज़का उपयोग करता है और अपना काम निकाल लेता है।

वहाँकी जमीन अन्न-वस्त्र देनेको तैयार नहीं, इसलिए एस्किमो भूखे रहकर या ठंडसे ठिठुरकर मर नहीं जाते। उनका ध्यान पासके समुद्रकी ओर जाता है और समुद्रमेंसे मिलनेवाले प्राणियोंपर वे अपना गुजारा कर लेते हैं।

एस्किमोके घर

पहले हम एस्किमोके घर देखें। हमारे घर पत्थरोंके, ईंटोंके, लकड़ियोंके या केवल मिट्टीके बने होते हैं। एस्किमोके घर किस चीज़के

होते होंगे ? वे पत्थर, ईंट आदि कहाँसे लाएँ ? उनके देशमें जहाँ नज़र डालो वहाँ बर्फ़के पर्वत ही पर्वत! सारी जमीनपर बर्फ़की तहोंपर तहें ! इसलिए वे बर्फ़के ही घर बनाते हैं। हम जिस तरह लकड़ी काटकर उसके खंभे, तख़्ते वगैरह बनाते हैं या आरेसे पत्थरोंको चीरकर उनको घरके कामके लायक बनाते हैं, उसी तरह बेचारा एस्किमो पत्थर जैसे मज़बूत बने हुए बर्फ़के टुकड़ोंको एक दूसरेपर रखकर अपना घर तैयार करता है। पहले तो वह ज़मीनको खूब गहरा खोदता है और अपने कुटुम्बके रहनेके लिए प्रायः अपने सिरतकका गहरा गढ़ा तैयार करता है। फिर गढ़ेपर बर्फ़के टुकड़े एकपर एक अर्ध गोलाकार चिनकर उसको ढक देता है। यह हो गया एस्किमोका घर।
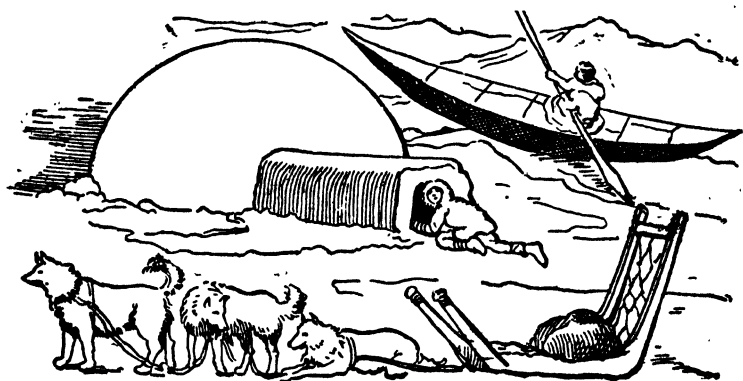
एस्किमोका बर्फ़का घर, नाव और ठेलागाड़ी

एक प्यालेको जमीनपर उलटा कर रख दें तो जैसा उसका आकार होगा उसी तरह एस्किमोके घरका आकार होता है। और इस घरमें घुसनेका दरवाज़ा ? ऊपरके चित्रमें देखो। एक तंग सुरंगमेंसे पेटके बल रेंगकर एक एस्किमो अपने घरमें जा रहा है। यही है इसके

घरका दरवाजा। इस अर्ध-गोलाकार वर्फ़के टुकड़ेके छप्परमें वह छोटा-सा छेद बनाता है और उसीसे सुरंग तैयार करता है। इस सुरंगमें सिर झुकाकर रेंग-रेंगकर जायँ तब कहीं एस्किमोके घरमें घुस सकते हैं।

एस्किमोके घरमें दीवारसे लगी हुई बर्फ़की ही बनी हुई ऊँची जगह बेंचके आकारमें होती है। इसीपर एस्किमो रातको सो जाता है। इस देशमें जलानेके लिए ईंधन न होनेसे चूल्हा या अंगीठी जलाकर उसके चारों ओर बैठनेकी सुविधा नहीं है। यह काम एस्किमो अपने दीएसे पूरा करता है। वह हमारे दीएकी तरह दीया बनाता है, उसमें गर्मियोंमें जहाँ तहाँ उगी हुई सिवारकी बत्ती बनाकर रखता है और समुद्रमें सील नामकी मछलियाँ होती हैं उनका तेल उसमें डालता है। इस प्रकार उसका दीया तैयार हो जाता है। यह दीया सारी रात धीमे धीमे जलता रहता है। उसका प्रकाश भले ज़्यादा न हो, पर उसकी गर्मी इतनी ज़्यादह होती है कि एस्किमो सोते समय लगभग शरीरके सब कपड़े उतारकर सोता है। फिर, उसको अंगीठीकी क्या ज़रूरत? एस्किमो उस दीएपर ही अपने कपड़े सुखाता है।

सारी रात उस गहरे गढ़ेके छोटेसे कमरेमें दीया जलता रहनेसे उसके काजलकी तहेंकी तहें एस्किमोके शरीरपर चढ़ जाती हैं। इसलिए, उसका असली रंग चीनी या जापानीकी तरह पीला होते हुए भी, वह काले रंगका दिखाई देता है। एस्किमो अपनी सारी उम्रमें कभी नहाता नहीं। बच्चोंको साफ़ करनेकी माताकी मर्जी हुई तो वह बिल्लीकी तरह अपने बच्चोंको जीभसे चाट लेती है, बस। यह पढ़कर आप नाक सिकोड़ेंगे और उसकी दिल्लगी करेंगे, पर मैं आपसे पूछता हूँ कि आपको यदि उस देशमें ले जाकर छोड़ दिया जाय तो आप क्या

करेंगे ? अवश्य आप कभी न नहाएँगे। स्नान करेंगे काहेसे ? पानीसे न ? पर उस ठंडे प्रदेशमें सालमें कितने ही महीने दवाईके लिए भी पानी मिलना मुश्किल होता है। बर्फको बड़ी मेहनतसे पिघलाओ तब कहीं पीनेको पानी मिले। फिर स्नानकी तो बात ही दूर रही। और भयंकर ठंडमें कपड़े उतारकर बर्फ़के पानीसे स्नान करनेका किसमें दम है ?

एस्किमोके घरमें बर्तन-अर्तन तो मिलेंगे ही कहाँसे ? अनाज ही न हो तो रसोई काहेकी करे ? सूत या ऊन तकके कपड़े ओढ़ने-पहननेको मिलते नहीं। उनके बदलेमें सील मछली और वालरस नामके एक प्राणीके चमड़ेका बिछौना और रज़ाई एस्किमोके घरमें होती है। बैठनेकी चटाई भी इसी मछलीकी खालकी होती है।

एस्किमोके दो घर होते हैं। ऊपर वर्णन किया गया घर तो सर्दियोंके लिए ही होता है। गर्मियोंमें वह इस घरमें नहीं रहता। इन दिनोंमें बर्फ़ पिघलने लगती है इसलिए बर्फ़वाले घरमें रहा कैसे जा सकता है ? गर्मियोंमें एस्किमो तंबूमें रहता है। यह तम्बू सील मछलीकी खालोंको एक दूसरेके साथ सींकर तैयार किया जाता है। तंबूके बीचमें एक खंभा होता है। उसके सहारे ये तम्बू टिके रहते हैं।

उनका भोजन

एस्किमो क्या खाते होंगे, इसकी साधारण कल्पना आपने कर ही ली होगी। वे खेती करते ही नहीं इसलिए हमारी तरह उन्हें चावल दाल, रोटी, शाक वगैरह चीज़ें खानेको नहीं मिलतीं। उनके पास गौएँ, बकरियाँ या भैंसें नहीं होतीं कि वे दूध, दही, छाछ वगैरह पी सकें। उनके देशमें पेड़ ही नहीं तो आम, जामुन, सन्तरे, अंजीर वगैरह फल कहाँसे खाएँ ? बिछौने ओढ़नेकी तरह खानेके पदार्थ

भी एस्किमोको समुद्रमेंसे ही मिलते हैं और इसीलिए वे हमेशा समुद्रके किनारे रहते हैं। समुद्रसे वे लोग दूर रहें तो भूखों मर जायँ। पहले जैसे लिखा जा चुका है कि वहाँ समुद्रमें सील नामकी मछलियाँ होती हैं और व्हेल मछली तथा वालरस होते हैं। शिकार करके एस्किमो इनका कच्चा मांस खाते हैं। 'एस्किमो' शब्दका मूल अर्थ भी 'कच्चा मांस खानेवाला आदमी' है। इस कच्चे मांसके साथ वह व्हेल मछली और सीलकी चर्बी पेट भरकर खाते हैं।

समुद्रके प्राणियोंसे अन्न, कपड़े, ओढ़ना और गर्मियोंका वर मिलनेसे समुद्रपर शिकारके लिए जाना एस्किमोके लिए बहुत ही जरूरी है। सर्दियोंमें समुद्रका पानी जमकर बर्फ हो जाता है और बर्फके नीचे सील मछलियाँ छिपी रहती हैं। पर, बीच-बीचमें उन्हें बर्फकी तहके ऊपर खुली हवामें श्वासोच्छ्वासके लिए आना पड़ता है। एस्किमो बर्फकी तहपर बिना हिले-डुले घंटों पड़ा रहता है। सील मछलीके सिर ऊपर निकालते ही नोकीला भाला भोंककर वह उसे मार डालता है और बाहर निकाल लेता है।

क्याक नाव

गर्मियोंमें बर्फ पिघलकर समुद्र खुल जाता है। उस समय एस्किमो क्याक नामकी चमड़ेकी नावमें बैठकर समुद्रमें मछलियाँ पकड़ने जाते हैं। पिछले चित्रमें नाव देखो। ये नावें बड़ी मजेदार होती हैं और इन्हें तैयार करनेमें एस्किमोकी होशियारी दिखाई देती है। व्हेल मछलीका अस्थि-पंजर लेकर उसपर चमड़ा चढ़ाकर एस्किमो नाव तैयार करते हैं। हमारी नावोंकी तरह ये नावें ऊपरकी ओर खुली नहीं होतीं। ऊपरका भाग भी चमड़ेसे ढका हुआ होता है। एक आदमीका शरीर अन्दर घुस सके, केवल इतना बड़ा छेद उनमें

रखा जाता है और सब ऊपर-नीचे चमड़ेसे बंद होती हैं। ये नावें बहुत हलकी होती हैं। इसीलिए उनमें बैठते हुए या बैठनेपर भी चलाते समय वज़न सँभालना बड़ी कुशलताका काम होता है। एक तरफ़ ज़रा-सा भी ज्यादह झुकाव हुआ कि नाव उलटनेमें देर नहीं लगती। पर एस्किमोको बचपनसे ही इन नावोंको खेनेकी आदत पड़ जाती है, इसीलिए वह आसानीसे उनमें बैठ जाते है और आसानीसे उसे खेते हैं।

रेनडीअर

हमेशा कच्चा मांस खाते खाते उकता जानेपर कभी कभी एस्किमो तीर कमान लेकर शिकारके लिए निकलते हैं। इस ठंडे प्रदेशमें गर्मियोंमें सफ़ेद रीछ मिल जाते हैं और बहुत-से पक्षी भी मिलते हैं। रेनडीअर नामका एक हरिण भी यहाँ पाया जाता है। एस्किमो अपने तीर कमानसे इनका शिकार करता है। उसके आसपास रेनडीअरके झुंडके झुंड होते हैं। गर्मियोंमें वह इन झुंडोंको चट कर जाते हैं। मारे हुए पशुओंका खून गन्नेके रसकी तरह गरम गरम गटगटा जाना ही उन्हें पसंद है। एस्किमो अपने तीर-कमान समुद्रमें बह आई हुई लकड़ीके बनाते हैं और तीरोंके सिरोंपर हड्डियोंकी नोक लगाते हैं। एस्किमोका निशाना अचूक होता है। छोटे छोटे बच्चे भी उड़ते हुए पक्षीको अपने तीरसे अचूक मार गिराते हैं। पक्षी और रीछ सर्दियाँ शुरू होनेके समय इस प्रदेशके दक्षिणकी ओर कम ठंडके प्रदेशमें चले जाते हैं। केवल रेनडीअर ही वहाँ रहते हैं और अपने खुरोंसे बर्फ़ हटाकर अंदरकी जमीनपर उगी हुई घासपर अपना गुज़ारा करते हैं।

एस्किमो जमीनकी बर्फ़पर मुसाफ़िरी करनेके लिए हड्डियोंकी और बहकर आई हुई लकड़ियोंकी बिना पहियोंकी गाड़ी तैयार करते

हैं। इस गाड़ीमें कुत्ते जुतते हैं। एस्किमोके पास घोड़ा, गाय, भैंस वगैरह जानवर नहीं होते, यह पहले कहा जा चुका है। पर उसके पास कुत्ते बहुत होते हैं। ये कुत्ते बड़े कद्दावर और देखनेमें भेड़िए जैसे होते हैं और अपने मालिकोंकी तरह कच्चा मांस खाकर रहते हैं। ये हड्डियोंकी बनाई हुई गाड़ीको बर्फपर वेगसे खींचते हुए ले जाते हैं। पिछला चित्र देखो।

कपड़े

एस्किमो सील मछलीकी खालके वस्त्र पहनते हैं। सर्दियोंमें वह शरीरपर दो कपड़े पहन लेते हैं। पुरुष और स्त्रियोंकी पोशाक एक-सी होती है। दोनोंके ही कोटके पीछे झोल होता है। स्त्रियोंके कोटका झोल बड़ा होता है। इसका उपयोग बच्चोंकी झोलीके तौरपर किया जाता है। स्त्रियाँ चलती हैं तो उनकी पीठपरके झोलमें उनके बच्चे रहते हैं।

एस्किमो मा और उसका लड़का

जब शरीरपर दो कोट होते हैं तब अंदरके कोटके बाल शरीरकी तरफ रहते हैं और बाहरके बाल बाहरकी ओर रहते हैं। दूरसे देखनेवालेको ये लोग बालोंवाले जानवरसे दिखाई देते हैं। कोटकी तरह पाँवोंमें भी वे दो-दो जूते पहनते हैं जिनमें कोटकी तरह ही बाल होते हैं। हाथमें

वे बालवाले चमड़ेके दस्ताने पहनते हैं। यह चमड़ा अकसर कुत्तेका होता है। अन्दरकी कुरती पक्षियोंके नरम चमड़ेकी होती है।

कपड़े तैयार करनेका काम स्त्रियोंका होता है। जानवरके चमड़ेको दाँतोंसे चबा चबाकरके वे नरम कर डालती हैं और फिर उसके कपड़े बनाती हैं। उनकी सुई नोंकदार हड्डी और धागा जानवरोंकी पेटकी आँतें होती हैं। शार्क नामकी मछलीके जबड़ेकी हड्डीका वे चाकूकी जगह उपयोग करते हैं।

हथियार

एस्किमोके तीर-कमानका वर्णन ऊपर दिया जा चुका है। इसके अलावा शिकारके लिए वे भालेका भी उपयोग करते हैं। इसके सिवाय भाले जैसा ही एस्किमोका और भी एक हथियार होता है। लकड़ीकी एक लम्बी छड़ी लेकर उसके सिरेपर वे एक नोंकदार पत्थर अथवा हड्डी बाँधते हैं और दूसरे सिरेपर वे एक छोटी-सी रस्सी बाँधते हैं। समुद्रमें मछलियोंका शिकार करते हुए एस्किमो इस छोटे भालेको मछलीके पेटमें भोंक देते हैं। यह नोकदार हड्डीका सिरा मछलीके पेटमें घुस जाता है और लकड़ी ऊपर तैर आती है। भालेकी लकड़ियोंको ये लोग बहुत सँभालकर रखते हैं; क्योंकि, जब उनके देशमें पेड़ ही नहीं तो फिर लकड़ी कैसे मिलेगी? समुद्रमें जब कभी बहकर आ जाती है तभी लकड़ी मिलती है। बहुतसे एस्किमो तो किनारेके जिन भागोंमें अक्सर लकड़ियाँ बहकर आती हैं उन्हीं भागोंमें ही घर बनाकर रहते हैं।

ये लोग मछलियाँ पकड़नेके लिए हड्डियोंकी ही बंसी बनाते हैं। परंतु, ये बंसियाँ हमारे सभ्य देशोंके लोगोंद्वारा तैयार की हुई बंसियोंसे भी अच्छी होती हैं।

मनुष्य अपनी परिस्थितियोंका गुलाम है। वह जहाँ रहता है वहाँ उसे जो कुछ मिलता है उसीपर अपना गुज़ारा कर लेता है। इसके उत्तम उदाहरण एस्किमो लोग हैं, यह अब तकके वर्णनसे स्पष्ट हो गया होगा। तो भी, एस्किमो इस परिस्थितिमें भी अपनी होशियारी दिखाते हैं। वह सुन्दर हथियार बनाते हैं, नावें तैयार करते हैं और अद्भुत चतुराईसे उन्हें समुद्रमें खेते हैं। हमको और आपको जिस प्रकार अपने गाड़ी-घोड़ोंका अभिमान होता है, उसी तरह एस्किमोको बिना पहियोंकी हड्डीकी गाड़ियोंका होता है। आप जितने चावसे गन्नेका रस पीते हैं उतने ही चावसे वे ताजा खून पीते हैं। यदि आप उनसे कहें कि मछलियोंकी चर्बी छोड़कर चावलकी रोटी खाओ तो कभी न मानेंगे। आप उन्हें दिल्ली या बंबई आकर रहनेको कहें तो कभी न मानेंगे। क्योंकि, कैसी भी हो, है तो उनकी जन्मभूमि ही। और उन्हें वह अच्छी लगेगी ही।

अभ्यास

१ एस्किमोका जीवन कौनसे दो प्राणियोंपर अवलंबित है? उनके बिना एस्किमोकी क्या हालत होती, वर्णन करो।

२ कल्पनाके सहारे किसी एस्किमोके घरका वर्णन करो।

३ एस्किमोके घरमें घुसनेका दरवाजा सुरंग जैसा और नीचा क्यों होता है? इस घरके ऊपर धुआँ निकलनेके लिए एक छेद न हो तो कैसा? बर्फ़के टुकड़ोंके बने हुए घरमें क्या उनको ज्यादह ठंड नहीं लगती होगी?

४ निम्न शीर्षकोंके अनुसार एस्किमोके लिए आवश्यक चीजोंकी सूचियाँ तैयार करो—(१) भोजन (२) पोशाक (३) प्राणी (४) उद्योग।

५ कोई एस्किमो कुटुंब हिन्दुस्तानमें रहने आवे तो उसे अपने भोजन, पहिनावे आदिमें क्या क्या परिवर्तन करने पड़ेंगे?

६ एस्किमो लोग किस प्रदेशमें रहते हैं ? उनके देशका क्या नाम है ? वे किन लोगोंसे मिलते जुलते दिखाई देते हैं ?

७ एस्किमो लोगोंके देशकी आबोहवाके विषयमें संक्षिप्त टिप्पणी लिखो। वहाँकी ऋतुओंकी हमारे देशकी ऋतुओंसे तुलना करो।

८ उत्तरके ठंडे प्रदेशमें सूर्य कभी आकाशके मध्यमें नहीं दिखाई देता, इसका क्या कारण है ? वहाँ कई दिनोंतक रात ही क्यों बनी रहती है ?

---

४ भयंकर गर्मी और घोर वर्षाके देशके बौने

अब हम एक और देशके लोगोंके पास चलें। यह प्रदेश विषुव-वृत्तपरका एक भाग है। यह देश एस्किमो-देशसे बिलकुल उलटा है। एस्किमो-देशमें भयंकर ठंड और यहाँ भयंकर गर्मी ! इस प्रदेशमें हमेशा घोर वर्षा होती रहती है। खूब वर्षा और खूब गर्मीवाला प्रदेश पेड़ोंके लिए बहुत अच्छा होता है। इस प्रदेशमें ऊँचे ऊँचे और एक दूसरेसे सटकर लगे हुए पेड़ोंके बड़े बड़े जंगल हैं। उनमें कोई कोई तो दो दो सौ तीन तीन सौ फुट ऊँचे होते हैं। इन पेड़ोंके चारों ओर साँपकी कुँडलियोंकी तरह बेलें लिपटी होती हैं। वे एक पेड़से लिपटकर फिर दूसरे पेड़ोंपर चढ़कर उनको जालमें बाँध लेती हैं। दोपहरके बारह बजे भी इन जंगलोंमें अंधकार रहता है। जमीन पेड़ोंकी डालों और सूखे पत्तोंसे ढकी रहती है। ऊपरसे हमेशा वर्षा होती रहती है, पर ठंड नहीं लगती। जमीनमेंसे गरम भाफ ऊपर उठती रहती है। इन जंगलोंमें हवाके झोकोंके आनेके लिए जगह नहीं होती, इसलिए गर्मीके कारण शरीरमेंसे पसीनेकी धाराएँ छूटती रहती ह।

इन जंगलोंमें शरीरपर जोरसे डंक मारनेवाली अनेक प्रकारकी मक्खियाँ, डाँस और कीड़े होते हैं। चींटियोंकी तो बात ही न पूछो।

जरा जमीनपर पाँव रक्खा कि उन्होंने उसपर आक्रमण किया। इनके अलावा बन्दर और गिलहरियाँ होती हैं। जंगली सूअर, जंगली भैंसे, जंगली हाथी, जंगली बिल्लियाँ, बड़े बड़े जंगली चूहे और अनेक प्राणी इन जंगलोंमें घूमते फिरते हैं। और रातको चमगादड़ोंके झुंडके झुंड उड़ते दिखाई देते हैं।

ऐसे जंगलोंमें किस तरहके आदमी रहते होंगे? आप सोचते होंगे भला यहाँ आदमी तो क्या रहते होंगे, यह तो जंगली प्राणियोंका ही घर होना चाहिए। पर यह बात नहीं। यहाँ भी आदमी रहते हैं और वे बड़े मज़ेदार होते हैं। चित्र देखो, इसमें अपने यहाँका एक साढ़े पाँच-छः फुटका आदमी खड़ा है और उसके पास उसकी छातीकी ऊँचाईका एक प्रायः नंगा और ठिंगना आदमी खड़ा है। इसी प्रकारके ठिंगने आदमी इन जंगलोंमें रहते हैं।

ये बौने आदमी आम तौरपर अपने यहाँके चौदह वर्षके लड़केके बराबर ऊँचे होते हैं, पर, उनके शरीरका गठन अच्छा होता है। इन बौनोंके भी अनेक प्रकार हैं। कुछ गेहुँआ रंगके और लाल बालोंवाले होते हैं और कई काले बालोंवाले होते हैं।

एस्किमोके देशमें बहुत सख़्त ठंड होती है इससे वह दो दो मोटे कोट पहनता है। पर यहाँके जंगलोंमें शरीरमेंसे पसीनेकी धाराएँ बहानेवाली

गर्मी होनेसे बौना लगभग कपड़े ही नहीं पहनता। कमरपर हाथ-भरका कपड़ा मिला तो मिला, नहीं तो पेड़ोंके पत्ते ही लगा लिये कि सज गए बौने साहब! किन्तु, अकेले कपड़ेसे ही उनको सन्तोष नहीं होता। इसलिए ये लोग अपने निचले होठोंमें दो बड़े बड़े छिद्र करके उनमें जंगली जानवरोंकी हड्डियाँ बड़ी शानसे पहनते हैं!

इनके घर कैसे होते होंगे? एस्किमो बर्फ़के और खालोंके घर तैयार करता है। बौना जंगलके पेड़ जलाकर खुली जगह बनाकर वहाँ पेड़ोंकी डालियों और पत्तोंका घर बनाता है। वह पहले छोटी छोटी डालोंको जमीनमें गाड़ देता है और फिर उनपर बेलों और केलोंके पत्तोंसे छप्पर बना लेता है। झोंपड़ीके दो दरवाजे होते हैं और वे भी बहुत छोटे। पिछले चित्रमें बौनेकी झोंपड़ी देखो। अर्थात् एस्किमोकी तरह बौनेको भी अपने घरमें रेंग कर जाना पड़ता है। दो दरवाजे रखनेका कारण यह है कि शत्रु यदि एक दरवाजेसे घुसे तो दूसरे दरवाजेसे भागा जा सके। एक झोंपड़ीमें आम तौरपर आठ-नौ आदमी रहते हैं और अपने मुखियाकी आज्ञाका पालन करते ह। यह मुखिया उनके झगड़े मिटाता है और एक जगहसे झोंपड़ी दूसरी जगह कब कहाँ ले जानी, यह निश्चित करता है, क्योंकि एस्किमोकी तरह बौने लोग भी एक ही जगह घर बनाकर नहीं रहते, जहाँ खानेको मिलता है वहाँ चले जाते हैं।

इन बौने लोगोंकी कई जातियाँ ऐसी भी है जो एक ही जगह झोंपड़ियाँ बनाकर समूहमें रहती ह। इनके गाँवोंकी रचना गोलाकार होती है और बीचोंबीच मुखियाका घर होता है। गाँवके चारों ओर जगह जगह गहरे गढ़े खोदे हुए होते हैं और आसपास विषमें सने

हुए लकड़ीके टुकड़े बिखराये हुए होते हैं। स्पष्ट है कि यह सावधानी शत्रुओंके आक्रमणसे बचनेके लिए होती है।

जंगलमें खेती

घने जंगलमें खेती करना बड़ी मेहनतका काम है। बड़े बड़े पेड़ काटे जायँ तब कहीं खुली जमीन मिले और फिर उसमें खेती की जाय। पर हमेशा वर्षा होती रहनेके कारण यहाँ अनाज पकना भी मुश्किल होता है। जंगलमें जितने चाहिए उतने जानवर होते हैं। उनका शिकार करने और मांस खानेके सिवाय इन लोगोंके पास दूसरा मार्ग नहीं। इस कारण ये शिकार करनेमें बहुत ही होशियार होते हैं। बचपनसे ही बच्चोंको तीर-कमान देकर निशाना लगाना सिखाया जाता है। ये बौने एकके बाद एक बाण इतनी जल्दी छोड़ते हैं कि पहले बाणके निशानेपर पहुँचनेके पहले ही एकके बाद एक करके तीन बाण छूट चुके होते हैं। निशाना चूक जाय तो मारे गुस्सेके ये अपने तीर-कमानोंके टुकड़े टुकड़े कर डालते हैं।

ये लोग मनुष्यको छोड़कर सभी प्राणियोंका मांस खाते हैं। खास करके बन्दर, चूहे, साँप और पक्षियोंका मांस इन्हें बहुत अच्छा लगता है। बीरबहूटी, दीमक वगैरह छोटे-छोटे कीड़ोंको तो ये चनोंकी तरह चबा जाते हैं। हाँ, एस्किमोकी तरह ये कच्चा मांस नहीं खाते। इनकी स्त्रियाँ पुरुषोंद्वारा किये गए शिकारका मांस आगपर सेंक देती हैं।

मांसके अतिरिक्त बौने लोगोंको केले बहुत अच्छे लगते हैं। एक ही बारमें वे साठ साठ केले उड़ा जाते हैं। वे केलेके पेड़पर मारे हुए जानवरके मांसका एक टुकड़ा रख देते हैं और उस टुकड़ेको केलेकी कीमत मानकर केले तोड़ लेते हैं। केले पकनेपर पहचाने जा सकें इसलिए कच्ची हालतमें ही वे उनपर कभी कभी बाण लगा देते हैं। इस

लगाये हुए बाणसे मालूम पड़ जाता है कि ये किस बौनेकी मालिकीके केले हैं। फिर और कोई उनपर हाथ नहीं लगाता।

बौने लोग बंसीसे मछलियाँ पकड़ते हैं। जंगलोंमें गढ़े खोदकर उनको पत्तोंसे ढक देते हैं और जब जानवर उनमें गिर पड़ते ह तो उन्हें पकड़ लेते हैं। जंगली हाथियोंको तो वे बड़ी कुशलतासे पकड़ते हैं। दूरसे बाण मारकर वे हाथियोंको अंधा बना देते हैं, फिर उनको बाण मारते मारते खदेड़ते हुए उस खोदे हुए गढ़ेमें ला गिराते हैं और भालोंसे मार डालते हैं।

बौने लोगोंको घने जंगलोंकी भी छोटी-मोटी पगडंडियोंका पता होता है। हमें जहाँ घने पेड़ोंके सिवाय कुछ दिखाई ही न देता हो वहाँ ये लोग अचूक रास्ता ढूँढ़ निकालते हैं और जहाँ जाना हो वहाँ पहुँचा देते हैं। एस्किमोके लिए जिस प्रकार समुद्र उसी तरह बौनेके लिए जंगल साधारण-सी बात होती है।

ये बौने लोग अरसिक होते हों सो बात नहीं। ये नाच-गानके बड़े शौकीन होते हैं। सारी सारी रात नाचने-गानेमें बिता देते हैं। बहुत-से आदमी मिलकर एक गोल चक्करमें नाचते हैं और कुछ लोग तीर-कमान लेकर साथ देते हैं। प्रकृतिसे ये लोग बड़े डरपोक होते हैं। इनको पराए लोग अच्छे नहीं लगते। कोई पराया आदमी उनके जंगलमें घुस जाय तो वे उसे छिपकर बाणद्वारा मार डालते हैं।

साधारण तौरपर उनकी हालत अच्छी नहीं रहती। सालमें आठ महीने मूसलधार वर्षा पड़ती रहती है, इसलिए, खानेकी चीजें मिलना कठिन हो जाता है। चूहे, मेंढ़क वगैरह जो कुछ मिले उसे उन्हें खाना पड़ता है। हमेशा वर्षा होते रहनेसे उन्हें जुकाम और खाँसी भी बनी रहती है। इन जंगलोंमें रहना आरोग्यकी दृष्टिसे इतना हानिकारक है कि ये बेचारे ठिंगने लोग चालीस वर्षसे ज़्यादह नहीं जीते।

अभ्यास

१ उत्तरी ध्रुव और विषुववृत्तपर रहनेवाले लोगोंके जीवनकी तुलना करो।
२ विषुववृत्तके प्रदेशके लोगोंकी गृह-रचनाका वर्णन करो। इस प्रकारके घर क्या हमारे देशमें कहीं होते हैं? उनका वर्णन करो।
३ विषुववृत्तके प्रदेशकी खेतीका और वहाँके लोगोंके भोजनका वर्णन करो।

---

५ सहाराके रेगिस्तानके बद्दू

चलो, अब हम बौने लोगोंके प्रदेशके उत्तरकी ओरके 'सहारा' नामके विस्तीर्ण प्रदेशकी यात्रा करें। 'सहारा' शब्दका अर्थ है मनुष्योंकी बस्तीसे रहित भयंकर प्रदेश। सहारा वास्तवमें भयानक है। हमें अपना हिन्दुस्तान बहुत बड़ा मालूम होता है; पर, सहारा हिन्दुस्तानकी अपेक्षा लगभग ढाई गुना बड़ा है।

हिन्दुस्तानमें जहाँ जाइए वहाँ हमें बड़े बड़े गाँव, शहर, खेत, पर्वत और नदियाँ दिखाई देती हैं। जहाँ देखो वहाँ आदमी ही आदमी हैं पर, सहारामें यह बात नहीं है। यह एक बड़ा रेगिस्तान है। इसमें नदियाँ नहीं, पर्वत नहीं, कुछ भी नहीं, सारा प्रदेश रेतीला है। जहाँ जाओ वहाँ रेत। यह रेत एक ही रंगकी नहीं होती। वह भूरी, पीली और सफ़ेद होती है। कहीं कहीं हवासे रेत उड़ उड़कर बड़े बड़े टीले बन गये हैं, तो कहीं सैकड़ों मीलों तक केवल सपाट बालूका पठार दिखाई देता है। पेड़ नहीं, पौधे नहीं, पक्षी नहीं, पशु भी नहीं। यदि कभी हम दिल्लीसे चलकर इलाहाबाद पैदल जायँ और रास्तेमें मनुष्य नहीं, खेत नहीं, पर्वत नहीं, पशु नहीं, पक्षी नहीं, कुएँ, तालाब, नदी नाले नहीं,— इलाहाबाद तक केवल रेतीला निर्जल पठार ही पठार मिले, तो हमें सहाराके एकाध पठारका ख्याल हो जाय।

कहा जा सकता है कि इस प्रदेशमें वर्षा बिलकुल ही नहीं होती। ठिंगने लोगोंके जंगलकी अपेक्षा यह बिलकुल अलग ढँगका प्रदेश है। यहाँ वर्षा, खेती, घास, पशु वगैरह कुछ नहीं होते और वर्षा न होनेसे दोपहरको रेत खूब तपती है जो मनुष्यको हैरान कर डालती है। इतनी गर्मी होती है कि मनुष्य घबरा जाय। रातको रेत एकदम ठंडी पड़ जाती है जिससे भयंकर ठंड पड़ती है। ऐसी है यहाँकी आबोहवा।

सहाराके नख़्लिस्तान

परन्तु, सारा सहारा इस प्रकार निर्जन और निर्जल नहीं है। सहारामें भी कई जगह पानीके सोते और कुएँ हैं। इन सोतों और कुओंके चारों ओर लोग घर बनाकर रहते हैं और बागवानी और खेती करते हैं। रेगिस्तानके सोतोंके आसपासके इन उपजाऊ स्थलोंको नख़्लिस्तान (=ओआसिस) कहते हैं।

चलो हम रेगिस्तानके एक नख़्लिस्तानकी मुलाकत लें। वह देखो दूर रेगिस्तानमें एक ही जगह ऊँचे ऊँचे घने पेड़ उगे हुए दिखाई दे रहे हैं। ये खजूरके पेड़ हैं। दूरसे कहीं पेड़ दिखाई दें तो समझ लो कि वहाँ कोई नख़्लिस्तान है, क्योंकि जब दूसरी जगह वर्षा नहीं, कुएँ नहीं तो पेड़ कैसे उग सकते हैं ?
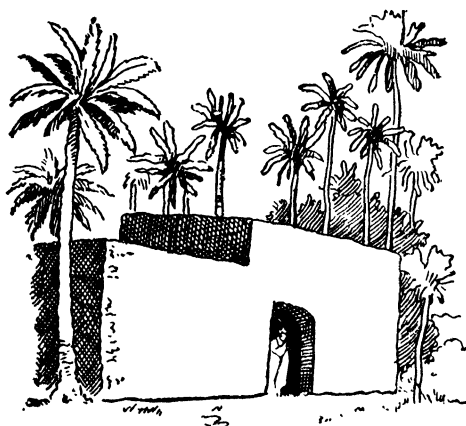
एक नख़्लिस्तान

कई नख़लिस्तान छोटे होते हैं और कई बड़े होते हैं। जहाँ पानी ज़्यादह होता है वहाँ मनुष्य भी ज़्यादह बसते हैं और खजूरके पेड़ भी ज़्यादह होते हैं। जहाँ सोता छोटा होता है उस स्थानपर बहुत थोड़े आदमी रहते हैं। अधिक आदमी यदि वहाँ रहें तो उन्हें पूरा पानी न मिले। बडे नख़लिस्तानोंमें खजूरके पेड़ बहुत होते हैं। 'बिस्का' नामका नख़लिस्तान तो एक अच्छा खासा शहर है। वहाँ लगभग दो लाख खजूरके पेड़ हैं।

यह लो, बोलते बोलते हम नख़लिस्तानमें आ पहुँचे। उन घरोंको देखो। जो मिट्टीके दिखाई देते हैं वे हैं अमीर लोगोंके घर। उनके नज़दीक जो पत्तोंकी झोंपड़ियाँ दिखाई देती हैं वे गरीब लोगोंकी हैं। देखो, इन घरोंमें खिड़कियाँ नहीं हैं। उनमें कितना अँधेरा है!

इन नख़लिस्तानोंमें रहनेवाले लोगोंको बद्दू कहते हैं। ये मुसलमान होते हैं। बंबईमें जो अरब लोग दिखाई देते हैं उन्हींकी जातिके ये लोग हैं। ये लोग नख़लिस्तानोंमें खेती करते हैं। वस्तुतः सहाराकी ज़मीन बहुत अच्छी है। यदि वहाँ वर्षा होती या नहरोंद्वारा या अन्य उपायोंसे पानी ले जाया जा सकता तो सहारा पृथ्वीका नन्दनवन बन जाता। बद्दू लोग बड़े अभिमानसे कहते हैं कि यदि हमारे रेगिस्तानमें तुम एक सूखी लकड़ी भी जमीनमें खोंस दो और उसे पानी दो तो उसका हरा पेड़ हो जायगा। पर वर्षा न पड़नेसे जमीन उत्तम होते हुए भी व्यर्थ है। इसको ईश्वरीय कोपके सिवाय क्या कहा जा सकता है? ख़ैर, नख़लिस्तानमें पानीकी सुविधा होनेसे बद्दू लोग नारंगी, नींबू, अलूचे और जैतूनके पेड़ोंके बग़ीचे बनाते हैं और गेहूँ तथा चावलकी खेती करते हैं। खजूरके पेड़ तो हर कोई लगाता है। जमीन इतनी उपजाऊ है कि एक बारमें ये लोग तीन तरहकी फ़सल तैयार कर लेते हैं। खजूरके ऊँचे पेड़

लगाकर उनके नचिे फलोंके पेड़ लगाते हैं और फलोंके पेड़ोंके नीचे शाक-तरकारियाँ। इसके अलावा नख़लिस्तानोंमें सुन्दर फूलोंके पौधे भी उगते हैं। कैसा चमत्कार है देखो! चारों ओर सैकड़ों मील केवल बीहड़ रेतीला मैदान और बीचमें छोटी-सी जगहमें फलोंके पेड़, फूल और तरह तरहके अन्नोंके पौधे! जब नख़लिस्तान स्वयं ही छोटे होते हैं तब वहाँके खेत कैसे बड़े हो सकते हैं? हरेक बद्दूके पास कोंकणके लोगोंकी तरह छोटा-सा खेत होता है। उसके चारों ओर वह मिट्टीकी मेंड़ बनाता है। जगह जगह कुएँ होते हैं। उनका पानी ऊँटोंद्वारा बाहर निकाल कर खेतोंमें सींचा जाता है। पानीकी कमी होनेसे हरेक किसानको जितना चाहिए उतना ही पानी दिया जाता है।

बद्दू और उनका भोजन : खजूर

बद्दू लोग बकरियाँ और भेड़ें पालते ह और उनके ऊनसे कंबल और दरियाँ बनाते हैं। वे मिट्टीके बरतन भी तैयार करते हैं। बद्दुओंका मुख्य व्यापार खजूरका है। सभी नख़लिस्तानोंमें खजूरका खूब लेन-देन होता है और बहुत बड़ी तादादमें खजूर विदेशोंको भेजी जाती है।

बद्दू लोगोंका मुख्य भोजन खजूर ही ह। खजूरकी कमसे कम दो सौ भिन्न भिन्न जातियाँ हैं। कुछ खजूरें नरम होती हैं, कुछ कड़ी होती हैं और कई इतनी सख़्त होती हैं कि उन्हें दाँतसे भी नहीं तोड़ा जा सकता। कुछ मीठी होती ह, कुछ फीकीं और किन्हींमें इतना अधिक रस होता है कि बद्दू लोग उसको इकट्ठा कर रखते हैं। इसे खजूरी शहद कहते हैं। ये लोग खजूरको सुखाकर या उबाल कर उसकी तरह तरहकी चीज़ें बनाकर खाते हैं। खजूर रेगिस्तानकी

रोटी कही जाती है । आदमियोंकी तरह यहाँ जानवर भी खजूर ही खाते हैं ।

रेगिस्तानके जहाज़

नख़लिस्तानमें रहनेवाले बद्दुओंको हमने देखा । सभी बद्दू घर बनाकर नहीं रहते । इन भिन्न भिन्न नख़लिस्तानोंमें आने-जानेके लिए, आवश्यक चीजें लाकर देनेके लिए और उनकी खजूर और अन्य चीज़ें बेचनेको ले जानेके लिए दूसरे आदमियोंकी जरूरत पड़ती ही है । यह लेन-देनका रोज़गार कुछ चलते-फिरते बद्दू करते हैं । वे हमेशा एक नख़लिस्तानसे दूसरे नख़लिस्तानमें आते-जाते रहते हैं । वे नख़लिस्तानोंमें खेत या घर बनाकर नहीं रहते । वे सारे सहारामें भटकते रहते ह । रेतीले मुल्कमें पैदल चलना असंभव ह । कहीं कहीं दो नख़लिस्तानोंके बीचका अंतर बहुत अधिक होता है । ऐसी हालतमें पैदल कैसे जाया जा सकता है ? इसीलिए परमात्माने इन भटकते हुए बद्दुओंकी सुविधाके लिए मानो ऊँट नामका प्राणी पैदा कर दिया है । ऊँट यदि न होते तो ये बद्दू कैसे जी सकते ? रेगिस्तानकी मुसाफ़िरीके लिए ही परमात्माने मानो ऊँटके शरीरकी रचना की है । वह अपने कोठेमें बहुत-सा पानी और अपने कोहानमें चरबी जमा कर रखता है जिससे रेगिस्तानमें बहुत दिनोंतक अन्न और पानीके बिना रह सकता है । उसके मुँहका चमड़ा बड़ा कड़ा होता है और इसलिए वह रेतमें उगनेवाले कँटीले पौधोंको आसानीसे खा सकता है । ऊँटका मांस भी ज़रूरत पड़नेपर बद्दुओंके काम आता है । ये लोग ऊँटके बालोंकी रस्सियाँ, कंबल और ओढ़नेके कपड़े भी तैयार करते हैं ।

पीठपरका घर

सवारीका तो प्रबंध हो गया पर रहनेको तो घर चाहिए न? बिच्छूकी तरह अपना घर अपनी पीठपर रखकर ले जानेवाले इन

बद्दुओंका तंबू
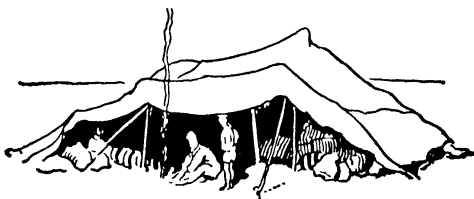
बद्दुओंके लिए पत्थर और मिट्टीके घर किस कामके? उनको तो हलका तंबू चाहिए। ये लोग बकरी और ऊँटके बालोंके बुने हुए ऊनके तंबू बनाते हैं। तंबूमें छः से आठ तक खंभे होते हैं। तंबूकी रस्सियाँ भी ऊँटके बालोंकी होती हैं। बीचमें परदा लगाकर स्त्रियों और पुरुषोंके लिए अलग अलग दो भाग कर दिये जाते हैं। दिनको मुलायम रेत बिछौना होती है। रातको रेत बहुत ठंडी हो जाती है इसलिए दरियाँ, जाजमें वगैरह बिछा देते हैं। ये भी पशुओंकी ऊनकी ही होती हैं। तंबूमें पानी और खजूरोंसे भरी हुई ऊँटके चमड़ेकी और दूधसे भरी हुई बकरेके चमड़ेकी छोटी छोटी थैलियाँ टँगी होती हैं। इनके अलावा गालीचे, जाजम, तकिए, गरम कंबल वगैरह सामान भी तंबूमें होता है।

तंबूके पास ही ऊँट, घोड़े, बकरियाँ और भेड़ें रहती हैं। डेरा उठानेका समय आया कि झट तंबू निकालकर एक ऊँटपर लाद देते हैं, दूसरे ऊँटपर कपड़े और बिछौने लाद देते हैं और तीसरेपर पानी, दूध और खजूरकी थैलियाँ रख देते हैं। फिर स्त्रियाँ और बच्चे ऊँटपर और पुरुष घोड़ोंपर चढ़ जाते हैं।

बद्दू अरबोंका अपने घोड़ोंपर पुत्र जैसा प्रेम होता है। कठिन धूपमें वे लोग घोड़ेको तंबूमें लाकर अपने पास बाँध लेते हैं और डेरेपर पहुँचनेपर उनके खुरोंपर तेल चुपड़ते हैं। ये घोड़े भी सुन्दर, मज़बूत और ग़रीब होते हैं।

इन भटकनेवाले बद्दुओंका मुख्य अन्न खजूर और बकरीका दूध तथा कठिनाईके समय ऊँटनीका दूध होता है। यदि और कुछ खानेको न मिले तो ये ऊँटका मांस भी खा लेते हैं। इसके अलावा नख़लिस्तानके किसानोंसे यदि गेंहूँ मिल जाता है तो उसकी रोटियाँ बनाकर खाते हैं।

बद्दुओंका जीवन

इनका सारा जीवन भटकनेमें ही बीतता है। बाल-बच्चे, स्त्रियाँ, नौकर-चाकर इन सबके साथ ये ऊँट बकरियाँ और घोड़े लेकर भटकते फिरते हैं। नख़लिस्तानके लोगोंको घोड़े और खजूर बेचकर उसके बदलेमें अपने लिए गेहूँ, कॉफी, कपड़े और घोड़ोंके लिए जौ ले लेते हैं। खानोंमेंसे नमक निकालकर नख़लिस्तानके लोगोंको पहुँचाकर उसके बदलेमें आवश्यक चीज़ें खरीदना भी बद्दू लोगोंका रोज़गार है। इसी तरह दूसरे यात्रियोंको रास्ता बताना और उन्हें अभीष्ट जगहपर पहुँचाना, यह भी इनका एक मुख्य पेशा है।

रेगिस्तानमें लुटेरे बहुत होते हैं जो मुसाफिरोंपर हमला करके उनका सामान लूट ले जाते हैं। इसलिए बद्दू लोगोंको अनेक बार अपनी रक्षा करनी पड़ती है। लुटेरे अचानक ही हमला कर देते हैं इस लिए बद्दू लोग लड़ाईके लिए हमेशा तैयार रहते हैं। लड़कोंको बचपनसे ही शत्रुपर सफ़ाईसे भाला फेंकना सिखाते हैं। इसी तरह उन्हें घोड़ेकी सवारीमें भी चतुर बनाते हैं। इन लड़कोंके सीखनेका दूसरा विषय होता है आकाशके तारोंका ज्ञान। सहाराके रेगिस्तानमें रास्ते वगैरह

कुछ नहीं हैं। हम किस दिशामें जा रहे हैं, यह जाननेका एक ही साधन है और वह है सिरके ऊपरके तारे। तारोंका ज्ञान न हो तो आदमी इस रेगिस्तानमें रास्ता भूलकर अन्न-पानीके बिना जरूर मर जाय।

लुटेरोंके डरसे बद्दू लोग टोलियाँ बनाकर घूमते हैं। एक टोली एक चलता-फिरता गाँव ही होती है। उसमें पशु, घोड़े, ऊँट, बाल-बच्चे, नौकर-चाकर वगैरह सभी कुछ होते हैं। इन टोलियोंको कारवाँ कहते हैं।

चलो, अब हम कारवाँके साथ रेगिस्तानकी मुसाफिरी करें। इससे हमें इस प्रदेशका अच्छा परिचय मिल जायगा और हम रास्ता भी नही भूलेंगे।

सहारामें बद्दुओंका कारवाँ

मुसाफ़िरीके लिए सबसे पहले हमारे पास तेज ऊँट होने चाहिए। कहते हैं कि अच्छे मज़बूत ऊँट दिनमें सौ सौ मीलकी मंज़िल तय कर लेते हैं। इसके अलावा विश्वासपात्र और होशियार फिरन्दर मार्गदर्शक ढूँढ़कर मज़दूरी ठहरा लेनी चाहिए। फिर यात्राके लिए काफ़ी पानी चमड़ेकी थैलियोंमें भर लेना चाहिए। इसी तरह

दो-चार थैली खजूर भी चाहिए, नहीं तो फाके करने पड़ेंगे। इसके अलावा रेगिस्तानके लायक कपड़े होने चाहिए। धोती, कोट या टोपी रेगिस्तानमें काम नहीं देती। वहाँ गरम गरम रेत उड़ती है जो कानोंमें घुस जाती है। देखो उन बद्दुओंको कि किस प्रकार उन्होंने अपना सारा शरीर कपड़ेसे ढक रक्खा है? हमारे यहाँ भी उत्तर हिन्दुस्तानमें दोपहरको घरके बाहर जाते हुए लोग कान बाँध लेते हैं। आँखोंको धूप न लगे इसलिए धूपकी ऐनक भी ले लेनी चाहिए।

चलो, हो गई तैयारी। वह देखो कारवाँ निकला। सबसे आगे मार्गदर्शक और कारवाँके मुखिया फुर्तीले ऊँटोंपर बैठकर जा रहे हैं। उनके हाथोंमें भरी हुई बंदूकें हैं और वे इधर उधर देखते हुए सावधानीसे चल रहे हैं। उनके पीछे उनकी स्त्रियाँ और बच्चे ऊँटोंपर बैठे हुए हैं। उनके पीछे देखो, चालीस-पचास सामानसे लदे हुए ऊँट आ रहे हैं। किन्हींकी पीठपर खजूर, नमक, ऊन वगैरह बिक्रीका माल है और किन्हींकी पीठपर तंबू, छोलदारियाँ, जाजमें, दरियाँ, पानीकी और खाने-पीनेके सामानकी मशकें और चमड़ेकी थैलियाँ हैं। इन थैलियोंके पानीमें चमड़ेकी गंध आती है, पर हमें यही पानी पीना है। आदत पड़ जानेपर आगे चलकर यह खराब न लगेगा। देखो, कारवाँके साथ कुत्ते, घोड़े और बकरियाँ भी जा रही हैं।

हमें रेतीले मुल्कमेंसे जाना है। यहाँ रास्ते नहीं हैं। दिनमें टीलों, पत्थरों वगैरहकी निशानियोंकी सहायतासे और रातमें तारोंकी सहायतासे ये मार्गदर्शक रास्ता ढूँढ़ते चले जाते हैं। हमें उनके पीछे पीछे चुपचाप चलना चाहिए। हम सबके प्राण उनके ही हाथोंमें हैं। ज़रा भी रास्ता भूले कि बिना पानीके मरना पड़ेगा।

हमें सबेरे या सूर्य अस्त हो जानेके बाद चलना और दोपहरको डेरा डालना चाहिए, क्योंकि इस रेगिस्तानमें भयंकर गर्मी पड़ती है और पाँवोंके नीचेकी रेत अंगारेकी तरह तप जाती है। ऊँटके पाँवोंद्वारा यह रेत उड़कर हमारे शरीरपर गिरनेका डर है, इसलिए हमको चाहिए कि अपना सारा शरीर कपड़ेसे ढक लें।

वह देखो, डेरेकी जगह आ गई। नौकर लोग जल्दी जल्दी तम्बू और छोलदारियाँ जमीनपर लगा रहे हैं। वह देखो कुछ आदमी ऊँटोंके पाँव उठाकर उनको बारीकीसे देख रहे हैं। उधर दूसरे नौकर घोड़ोंके खुरोंपर तेल चुपड़नेमें लगे हैं। इन प्राणियोंकी बदौलत ही तो हम मुसाफ़िरी कर रहे हैं। उनकी देख-भाल तो करनी ही चाहिए। चलो तंबूमें, देखो कैसे सुन्दर ज़ाजम बिछ गये हैं। मशकोंका पानी पियो। इतनेमें कॉफी तैयार होती है। देखो, परदेकी आड़में घर घर आवाज़ होने लगी। साथकी स्त्रियों और लड़कियोंने गेहूँ पीसना शुरू कर दिया है। हमारी खुश-किस्मती कि हमें गेहूँकी रोटी खानेको मिलनेवाली है! नहीं तो खजूर खाकर और बकरीका दूध पीकर ही हमें एकादशी करनी पड़ती। देखो उन लड़कोंको, कैसे बन्दरोंकी तरह खजूरके ऊँचे ऊँचे पेड़ोंपर झटपट चढ़ गये और खजूर खाने लगे! उधर, दूसरे लड़कोंको देखो, वे भाला फेंकनेका अभ्यास करने लगे।

अभीसे पाँवके जूते न निकालो, नहीं तो बालूसे पाँव भुन जाएँगे और छाले पड़ जाएँगे। वह देखो, बद्दू पूर्वकी ओर मुँह करके घुटने टेककर क्या कर रहे हैं? वे मुसलमान हैं। मक्केकी तरफ़ मुँह करके वे नियमपूर्वक रोज़ नमाज़ पढ़ते हैं। बड़े बड़े नखलिस्तानोंमें हमें इनकी मसजिदें मिलेंगीं।

चलो, खाना तैयार हो गया। बैठो जाजमपर। यहाँ चौका-चौका कुछ नहीं। उबाली हुई खजूर, रोटियाँ, मांस और किसी तरहकी दालका पानी ही हमें खानेको मिलेगा। मेज़बानीके समय बद्दू लोग पूरीकी पूरी भेड़को अंगारोंपर सेंक डालते हैं। वे लोहेकी एक सलाखको भेड़के पेटमें आरपार भोंक देते हैं और उसके सहारे भेड़को अंगारेपर रखकर उसे चारों ओरसे भून डालते हैं। इस तरह भुनी हुई भेड़को फिर वे बाँट लेते हैं और चाकूसे उसका एक एक टुकड़ा काटकर मुँहमें रखते जाते हैं। वाह, किस ठाठसे उनकी मेजवानी होती हैं! हमेशा खजूर खाकर एकादशी करनेके बाद बीच-बीचमें इस प्रकारका पारणा तो होना ही चाहिए!

ख़ैर, भोजन समाप्त हो गया। चलो, अब अँगीठीके पास बैठकर हम बद्दुओंकी बातें सुनें। कैसी भयंकर ठंड है! इसी जगह दोपहरको कितनी गर्मी थी! बद्दुओंकी बातें न सुननी हों तो चलो, सो जायँ। चार-पाँच कम्बल ओढ़ लो।—देखो, पौ फट गई। गरमागरम कॉफी पीकर और दो-चार खजूर मुँहमें डालकर चलो, चलनेकी तैयारी करें। वह देखो नौकरोंने तंबूको तहकर ऊँटोंपर सामान लाद दिया। उधर बद्दू घोड़ोंपर सवार हो गये। चलो हम भी चलें, पर जरा देर ठहरो! उधर देखो, वह क्या दिखाई दे रहा है? दूर पूर्वकी ओर काला बादल जैसा वह क्या दिखाई दे रहा है? अरे! वह देखते देखते कितना बड़ा हो गया! और अब तो पास ही आता जा रहा है! ये सारे बद्दू घोड़ों और ऊँटोंपरसे हड़बड़ाकर क्यों उतर पड़े?—क्या कहते हो, रेतका तूफ़ान आ गया? सचमुच भयंकर पवनके साथ रेत आकाशमें चढ़ रही है और हवाके साथ घर घर फिरती हुई आगे बढ़ रही है। अरे बापरे, यह क्या! ठीक दोपहरको अँधेरा हो गया! सारे आकाशमें

बालू ही बालू! ऊँटोंको देखो, कैसे जमीनमें मुँह डालकर औंधे पड़े हुए हैं! और बद्दू क्या कर रहे हैं? ऊँटोंकी आड़में वे भी जमीनपर बिलकुल मुँहके बल औंधे लेट गये हैं। चलो, हम भी वैसे ही लेट जायँ। नहीं तो, इस रेतके अंधड़में पड़कर न जाने कहाँ उड़ जायँगे! सिर अच्छी तरह जमीनमें छिपाकर लेट जाओ। कान बन्द कर लो और ऊपर मत देखो।—ठहरो, आँधी चली गई। वह देखो, धीमे धीमे सूरज दिखाई देने लगा। हमारे हिन्दुस्तानमें भी राजपूताना और मारवाड़के रेतीले प्रदेशोंमें इसी तरहकी आँधियाँ आती हैं।

यह देखो, हम अपने मुकामपर आ पहुँचे। हमारे मार्ग-दर्शक हमें सही-सलामत ले आये, इसलिए उन्हें अच्छा इनाम देना चाहिए।

अभ्यास

१ मरुस्थलके जल-वायुका वर्णन करो।

२ ऐसी कल्पना करके कि तुम किसी मरुस्थलकी यात्रा कर आये हो, अपने अनुभवको एक निबन्ध या पत्रके रूपमें विस्तार-सहित लिखो।

३ 'नखलिस्तान'का क्या अर्थ है? 'स्तान' शब्द आम तौरपर किस अर्थमें प्रयुक्त होता है? मरुस्थल और समुद्रकी तुलना करो।

४ सहाराके मरुस्थलके किसी नखलिस्तानके लोगोंकी दिन-चर्याका वर्णन करो।

५ सहाराके मरुस्थलको पृथ्वीका नन्दन-वन बनाना हो तो क्या करना चाहिए? नखलिस्तानोंकी खेतीका वर्णन करो।

६ बाज़ारमें बढ़ियासे बढ़िया जो मस्कती खजूर मिलती है, उसकी आत्म-कथा लिखो।

७ बद्दुओंका संक्षिप्त परिचय कराओ।

८ मरुस्थलको यदि हम समुद्रकी उपमा दें तो मरुस्थलका जहाज़ किसे कह सकते हैं? इस प्रकारके मरुस्थलके जहाज़का वर्णन करो।

९ बद्दुओंके बालकोंका वर्णन करो।

१० आँधी किसे कहते हैं? उससे बचनेके लिए क्या करना चाहिए?

---

६ नील नदीकी सन्तानें

जलती हुई रेत और धूलसे अब आप तंग आ गये होंगे। न नहानेके लिए नदियाँ और न पीनेके लिए पूरा पानी, हरे-भरे खेत या पेड़ भी नहीं। तुम्हारे मनमें आता होगा कि कब ऐसे देशको छोड़कर चलते बनें। बोलो, आता है या नहीं? अच्छा तो चलो, मैं भी तुम्हें इस भयंकर रेतीले प्रदेशमेंसे पृथ्वीके अत्यंत उपजाऊ प्रदेशमें ले चलूँ। आँखें बन्द कर लो। ये देखो, हम आ गये मिस्र देशमें। मिस्र देश दुनियाकी एक अजीब चीज़ है। तुम्हें शायद यह सच न लगे। तुम अब उपजाऊ और घनी बस्तीवाले प्रदेशमें आ गये हो, फिर भी अभीतक दर असल तुम सहाराकी मरु-भूमिमें ही हो। मिस्र या इजिप्त देश सहारा मरुभूमिका ही एक भाग है। वास्तवमें देखा जाय तो यहाँ भी रेतका सपाट मैदान होना चाहिए था। पर सब कुछ उससे उलटा ही है।

नीलका जादू

पर यह सब हुआ कैसे? यह जादू किया किसने?—नील नदीने। नील नामकी एक बड़ी नदी सहाराके एक कोनेसे बहती हुई समुद्रमें जा मिली है। इसी नदीने इस रेतीले प्रदेशको हरे-भरे बगीचेका रूप दे दिया है। यह नदी एक झीलमेंसे निकल कर सैकड़ों मीलके चट्टानोंवाले पहाड़ी प्रदेशोंमेंसे उछलती कूदती हुई सहाराके सपाट मैदानमें आती है। यहाँ आनेके बाद उसका पाट चौड़ा हो जाता है। समुद्रसे सौ डेढ़ सौ मीलपर उसकी अनेक शाखाएँ हो जाती हैं और उसका आकार पंखे जैसा हो जाता है। ये सब शाखाएँ अन्तमें समुद्रमें ही जा मिलती हैं।

सहारातक पहुँचते पहुँचते इस नदीमें नीली नील और काली नील नामकी दो नदियाँ आ मिलती हैं। ये दोनों नदियाँ ऊँचे पठारपरसे बहती हुई आती हैं। यह पठार चट्टानोंवाला नहीं है। वहाँकी ज़मीन बहुत नरम फसफसी है। पहाड़पर खूब वर्षा होती है और उसका सारा पानी इन दो नदियाँमें बह आता है जिससे कि इनमें बाढ़ आ जाती है। वर्षाके पानीके साथ साथ इन नदियोंमें बहुत-सी काँप (चिकनी मिट्टी) बह आती है। इस प्रकार बाढ़के समय ये दोनों नदियाँ नील नदीको बहुत-सी काँप या उपजाऊ मिट्टी भी भेंट करती हैं।

सपाट रेतीले प्रदेशोंपर नील नदीमें जब बाढ़ आती है तो वह किनारोंको पार कर मीलों तक फैल जाती है। बाढ़ कम होनेपर पानी उतर जाता है पर उसके साथ आई हुई मुलायम काँप वहींकी वहीं रह जाती है। इस प्रकार काली और नीली नदियोंके सबब नीलमें बाढ़ आती है, बाढ़का पानी आसपास फैलता है और पानीके उतरनेपर उसके साथ आई हुई मुलायम काँप वहीं रह जाती है। मिस्रमें ऐसा हज़ारों वर्षोंसे होता चला आ रहा है। हरसाल मुलायम काँपकी तहेंकी तहें एक दूसरीपर चढ़ती चली जाती हैं जिससे दोनों किनारोंके रेतीले भागका रूखा स्वरूप बिल्कुल बदल गया है और वह प्रदेश अत्यन्त उपजाऊ बन गया है। इस प्रकार तहपर तह जमते रहनेसे नील नदीके किनारेकी जमीन लगभग बीससे चालीस फीट ऊँची हो गई है। कहते हैं कि हर सौ वर्षमें इस जमीनकी ऊँचाई छः इंच बढ़ जाती है।

बाढ़का पानी नील नदीके दोनों किनारेकी तरफ जितनी दूर तक जाता है उतने भागपर उक्त मिट्टीके जम जानेसे जमनि उपजाऊ हो

जाती है। पर इस उपजाऊ प्रदेशके परेका दोनों तरफका हिस्सा बिल्कुल रेतीला है। नील नदीकी यह उपजाऊ घाटी केवल नौ-दस मील चौड़ी है पर लंबाईमें लगभग हज़ार मील है।

मिस्रके फेल्ला

अब हम मिस्रदेशके किसानोंसे मिलें और देखें कि वे अपनी जमीनका कैसा उपयोग करते हैं। मिस्रके किसानोंको फेल्ला कहते हैं। नीचे उनका चित्र देखो। उन्होंने अंदर ओछे इज़ार पहिन रक्खे हैं और ऊपर पाँव तक लटकता हुआ आसमानी रंगका सूती चोगा है। उनके सिरोंपर हमारे यहाँके जैसे पुरबियोंकी तरहकी छोटी टोपियाँ हैं। बहुत लोग टोपियोंपर रंग बिरंगे रूमाल भी लपेटते देखे जाते हैं। फेल्लाओंकी स्त्रियाँ

फेल्ला

भी पुरुषोंकी तरह इज़ार पहनती हैं। इसके सिवाय शरीरपर ओढ़नी तथा सिरपरसे लम्बा काले कपड़ेका बुरखा डाल लेती हैं। इन किसानोंके लड़के प्रायः नंगे ही फिरते हैं। सहाराका मरुस्थल ही जो ठहरा, रेत न हो फिर भी हवा तो गरम ही रहती है न ? कपड़ोंकी वहाँ ज़रूरत ही क्या है ? और हो, तो भी बेचारे गरीब फेल्ला अपने बच्चोंके कपड़ोंके

लिए पैसे कहाँसे पावें ? दुनियाका कायदा है कि जमीन चाहे उपजाऊ हो या बंजड़; किसानोंको मेहनत तो करनी ही चाहिए और आधा पेट खाकर ही जीना चाहिए। इस कायदेके फेल्ला भी अपवाद नहीं है। बहुत-से फेल्ला अमीर जमींदारोंकी ज़मीनोंमें नौकरके तौरपर काम करते हैं। उनको मेहनताना बहुत ही कम मिलता है। कुछके पास थोड़ी-बहुत अपनी ज़मीन भी होती है।

फेल्लाओंके घर

चलो, अब हम देखें कि उनके घर कैसे हैं ? देखो वह रहा एक गाँव। उसमें खजूरके पेड़ कितने अधिक हैं। फेल्ला लोग नील नदीमें बहकर आई हुई मिट्टीकी ईटें बनाकर और उन्हें घाममें सुखाकर उनसे मकान बनाते हैं। घरका छप्पर घासका या खजूरके पत्तोंका होता है और वह बहुत नीचा होता है। इन मकानोंमें मंजिल नहीं होते। कहीं खिड़कियाँ भी नहीं होतीं। वे बन्द किये हुए सन्दूककी तरह दिखाई देते हैं। बेचारे फेल्लाओंके घरोंमें दो-चार चटाइयाँ और मिट्टीके एक-दो घड़े-सुराहियाँ,—बस इतना ही साज-सामान होता है। रसोईके लिए हमारे यहाँकी तरह वहाँ भी मिट्टीके चूल्हे होते हैं। पर वे होते हैं घरके बाहर। धुआँ बाहर निकालनेके लिए घरोंमें खिड़कियाँ तो होती नहीं, इसलिए वे घरके बाहर ही रसोई बनाते हैं। मिस्र देश उपजाऊ जरूर है, फिर भी है तो आख़िर सहाराका रेगिस्तान ही। वहाँ वर्षा तो कभी होती नहीं, फिर बाहर रसोई बनानेमें हर्ज़ ही क्या है ? फेल्लाओंके सोनेका इन्तजाम देखना है ? वे कमरेमें दीवारसे सटाकर ऊँचे चबूतरे-से बना लेते हैं और उन्हींपर चटाई बिछाकर सो जाते हैं।

फेल्लाओंके भोजनसे मतलब है मकई, गेहूँ और दालके मोटे

आटेके बने हुए बड़े बड़े मोटे रूखे खुरदरे रोट और उसके साथ शाक, अंडे या खजूर। ये लोग प्रायः मांस नहीं खाते और खाते भी हैं तो ज़्यादहतर भैंसेका मांस खाते हैं। दूध भी भैंसका ही पीते हैं। भैंसे इनके बड़े काम आते हैं। जैसे हमारे यहाँ खेतीमें बैलोंका उपयोग होता है वैसे ही मिस्रमें भैंसोंका होता है। ऊँटों और गधोंसे भी खेती की जाती है। देखो उन किसानोंको, एक ऊँट और एक गधा जोतकर हल चला रहे हैं। ये खेत कितने छोटे छोटे हैं! हरेक खेतके आसपास मिट्टीकी दीवारकी मेंढ़ बनाई गई है। इन खेतोंमें तुम्हें कुएँ न मिलेंगे। खेतोंमें चारों ओर पानीकी छोटी छोटी नहरें निकली होती हैं। चारों और नील नदीके पानीकी नहरोंका जाल-सा बिछा हुआ है।

बिना वर्षाकी पैदावार

सब खेतोंको नहरके पानीकी ज़रूरत नहीं होती। वर्षा तो यहाँ होती ही नहीं, तो फिर कहिए, खेतीके लिए ये लोग पानी कहाँसे लाते होंगे? जून महीनेकी पहली तारीखसे नील नदीका पानी चढ़ने लगता है और अक्टूबर महीने तक लगातार चढ़ता ही चला जाता है। नदीके दोनों किनारोंके पाँच-छः मील दूर तकके खेतोंपरसे नील नदीका यह फैला हुआ पानी चार-पाँच महीने तक नहीं उतरता। फिर नवंबरकी पहली तारीखसे उतरने लगता है और खेत खुलने लगते हैं। इन खेतोंमें अपने आप नदीकी बाढ़के साथ आई हुई काँप रह जाती है जो खादका काम देती है। पानी उतर जानेके बाद किसान इस मुलायम और नम जमीनमें मानों सोनेकी फसल काटता है।

नदीसे दूरपरके खेतोंमें तो नहरके पानीकी ही जरूरत पड़ती है।

यह पानी कई तरहसे खेतोंमें ले जाया जाता है। इसकी पुरानी पद्धति इस प्रकार है : किसान नदीमें अथवा नदीमेंसे निकली हुई नहरमें खड़ा हो जाता है और टोकरी जैसे डोलसे पानी उलीच उलीचकर नदी अथवा नहरसे भी अधिक ऊँचाईपरके अपने खेतकी ओर जानेवाली नालीमें फेंकता है। इस तरह खेतोंको पानी पहुँचता है। सोचो कितनी जहमत उठानी होती है! मिस्रमें हजारों फेल्ला और उनके लड़के इसी प्रकार पानी उलीच उलीच कर अपने खेतोंकी नालियोंमें डालते हुए नजर आयँगे।

दूसरा तरीका है नदीमें अथवा नदीके पासकी नहरमें हमारे यहाँके बागोंकी तरह रहँट लगानेका। रहँटकी घड़ियाँ पानीसे भरकर ऊपर आती हैं और उलटती जाती हैं और उनका पानी नालियोंमें होकर खेतोंमें पहुँचता है। तेलीके बैलोंकी तरह आँखें बाँधे हुए गधे अथवा भैंस इन रहँटोंको चलाते हैं।

इजिप्तमें इस तरहके लगभग पचास हज़ार रहँट नील नदीमेंसे पानी निकालते हैं। इन रहँटोंको चलानेके लिए एक लाख भैंसे या गधे जोते जाते हैं और पचास हज़ार किसान-लड़के उन्हें हाँकते हैं।

पहले नील नदीकी बाढ़का बहुत-सा पानी और उसके साथ आई हुई काँप समुद्रमें चली जाती थी जिससे उनका खेतीके काममें कोई उपयोग नहीं होता था। पर अब इजिप्त देश अँग्रेजोंकी देख-रेखमें आ गया है। अँग्रेजोंने नील नदीमें स्थान स्थानपर बाँध बाँधकर उसके पानीको रोका है। इनमें आस्वानका बाँध सबसे बड़ा है। वह सात मंज़िली इमारतके बराबर ऊँचा है और इतना चौड़ा है कि एक साथ एक ही समय उसके ऊपरसे तीन बैलगाड़ियाँ जा सकती हैं। ये बाँध बाढ़के पानी और मिट्टीको अटकाते हैं। बाढ़ उतर जानेपर

बाँधोंकी दीवारोंके निचले दरवाजे जब खोल दिये जाते हैं तब उनमेंसे पानी और मिट्टी निकलती है और वह नहरोंद्वारा खेतोंमें पहुँचाई जाती है। बम्बई प्रान्तमें भंडारडराका 'विलसन बाँध', भाटघरका 'लौयड बाँध' और सिन्ध प्रान्तका सिन्ध नदीका सक्खरका बाँध प्रसिद्ध हैं। ये तीनों बाँध आस्वान जितने ही बल्कि उससे भी विशाल हैं और भाटघरका बाँध तो दुनियामें सबसे बड़ा है।

नीलनदीके पानीसे फेल्ला लोग वर्षमें तीन फ़सलें काटते हैं। गर्मियोंमें कपास, गन्ना और चावल होते हैं, जुलाईसे अक्टूबर तकमें मकई, चावल और तरह तरहके शाक तैयार होते हैं और नवंबरसे मईतकमें सब तरहके अनाज होते हैं। इजिप्तमें सबसे अधिक महत्त्वकी फ़सल कपासकी है। वहाँ लाखों रुपयोंका कपास पैदा होता है। इजिप्तकी रुई बहुत मुलायम होती है। बढ़िया मुलायम और बारीक कपड़े उसीसे तैयार किये जाते हैं।

काहिराकी मुलाक़ात

नील नदीके किनारे रहनेवाले फेल्लाओंका परिचय तो हमने पा लिया। अब इजिप्तकी राजधानी काहिरामें जाकर वहाँके शहरियोंका रहन-सहन देखना चाहिए।

काहिरा हम रेलगाड़ीसे जायँगे। यह रेल नील नदीके किनारे किनारे जाती है। उसके दोनों ओर हरे-भरे खेत दिखाई देते हैं। खेतोंमें ऊँट, गधे और भैंसे चरते मालूम पड़ते हैं। हरेक स्टेशनपर आसमानी रंगके लम्बे चोगे पहने हुए लड़की-लड़के संतरे, गन्ने और अंडे बेचते दिखाई देते हैं। कितनी ही स्त्रियाँ भी सिरपर पानीकी सुराहियाँ लिये प्लेटफ़ार्मपर घूमती दिखाई देती हैं।

वह देखो, दूरसे मसजिदकी ऊँची मीनारें दिखाई दे रही हैं। यही काहिरा शहर है। वह जो ऊँची इमारतें-सी दिखाई देती हैं वे काहिराके प्रसिद्ध पिरामिड हैं। लो, यह स्टेशन आ गया। अरे यहाँ गधेवाले लड़कोंकी कैसी भीड़ है! भला ये गधे किस काम आते होंगे? इजिप्तमें गधोंकी बहुत कद्र है। यहाँ अमीर लोग घोड़ोंकी तरह गधोंपर बैठते हैं। चलो, हम भी सवारीके लिए गधे ठहरा लें। क्या किया जाय, जिस देशमें जायँ उस देशके रिवाजके अनुसार चलना चाहिए। उन लड़कोंको देखो, कैसी टूटी फूटी अँगरेजी बोल रहे हैं! माइ डंकी, गुड डंकी। (My donkey, good donkey) अच्छा, अच्छा। चलो बैठ जायँ इस गधेपर। वह लड़का इसे पीछेसे अपने डंडेसे दौड़ायगा।

शहरके जिस भागमें युरोपियन रहते हैं उस भागके रास्ते कितने चौड़े और स्वच्छ हैं! वहाँ बाग-बगीचे भी बहुत हैं और मधुर बैन्ड भी बजता है। पर शहरका दूसरा भाग इतना अच्छा नहीं है। सड़कें तंग और गंदी हैं। उनपर बड़ी भीड़ है। कोई ऊँटपर और कोई गधेपर बैठा हुआ जा रहा है। लड़कियाँ अपने सिरोंपर ऊँचे ऊँचे मटकोंमें पानी लिये जा रही हैं। अन्धे भीख माँग रहे हैं, मदारी खेल दिखा रहे हैं और भिश्ती मशकमेंसे लोगोंको पानी पिला रहे हैं।

अल अज़हरका विश्वविद्यालय

घर भी कैसे बंद संदूककी तरह और हमारे यहाँके छतवाले मकानोंकी तरह सपाट हैं! खिड़कियाँ जालीदार हैं और दरवाज़ोंपर सुंदर नक्काशी है। बहुतसे घरोंपर चूना किया हुआ है। काहिरामें न जाने कितनी मसजिदें हैं। बहुत ऊँची और विशाल कोई इमारत देखो तो समझ लो कि यह मसजिद है। हरेक मसजिदके सामने एक

बड़ा चौक होता है जिसमें एक पानीका हौज रहता है। नमाज़ पढ़नेके वास्ते अंदर जानेके पहले लोग यहाँ अपने हाथ-पाँव धोकर स्वच्छ कर लेते हैं।

नमाज़ या प्रार्थनाके अलावा मसजिदोंका उपयोग शिक्षाके लिए भी होता है। मुसल्मानोंके मदरसे मसजिदोंमें ही होते हैं। चलो, अब हम अल अज़हरका प्रसिद्ध विश्वविद्यालय देखें। यहाँ विद्यार्थियोंकी फीस नहीं देनी पड़ती और अध्यापकोंको तनख़्वाह नहीं मिलती। शिक्षक ट्यूशन करके अथवा पुस्तकोंकी हस्तलिखित प्रतियाँ तैयार करके अपना गुज़ारा करते हैं। यहाँ चार-पाँच सालके लड़कोंसे लेकर सत्तर वर्षके बूढ़े तक विद्यार्थी होते हैं। शिक्षाके विषय होते हैं—अरबी भाषामें लिखा हुआ मुसल्मानोंका धर्म-ग्रन्थ कुरान, बीजगणित, व्याकरण, काव्य और अलंकार। विद्यार्थी एक कतारमें जमीनपर बैठे हैं और आगे पीछे सिर हिलाते हुए कुरान याद कर रहे हैं। कोई अरबी भाषाके अक्षर ही सीख रहा है। इजिप्तकी मसजिदोंमें दस हज़ार मदरसे हैं। इन पुराने ढंगकी पाठशालाओंके अलावा प्राथमिक, माध्यमिक तथा धंधे, अध्यापन, खेती, कानून, वैद्यक वगैरह विषयोंके विद्यालय भी इजिप्तकी सरकारने स्थापित किये हैं। प्राथमिक शिक्षा अरबी भाषाद्वारा दी जाती है।

काहिराके बाज़ारमें

चलो अब बाज़ार देखें। सड़कोंपर, लोग सुन्दर किनारीवाले कीमती चोगे पहनकर चल रहे हैं। बुरखेवाली सुन्दर पोशाकवाली स्त्रियाँ गधोंपर बैठी हैं। कई स्त्रियाँ पैदल भी जा रही हैं। उनके आगे आगे उनके काले हब्शी नौकर चल रहे हैं।

यहाँ हरेक चीज़के अलग अलग बाज़ार हैं। जहाँ सुन्दर गालीचे बिकते हैं उसका नाम है तुर्की बाज़ार। इसी तरह घड़ियों और

जवाहरातका बाज़ार, इत्रोंका बाज़ार, पुस्तकोंका बाज़ार, नक्काशीकी चीज़ोंका बाज़ार, बर्तनोंका बाज़ार, मिठाइयोंका बाज़ार आदि अनेक बाजार हैं। यहाँका दूकानदार बहुत सभ्य होता है। तुम किसी मालकी पूछताछ करने जाओ, तो पहले वह तुम्हें बिठाएगा, गरमागरम काफीका प्याला तुम्हारे हाथमें देगा और फिर इसके बाद दूसरी बात करेगा।

काहिरामें तुम देखोगे कि यहाँके लोग हैं तो मुसलमान पर दिखाई देंगे बिल्कुल यूरोपियनों जैसे ही गोरे और उन्हींकी तरहके कपड़े पहिने हुए। हाँ, हैटकी जगह वे सिरपर लाल फैज टोपी पहनते हैं। बस इतना ही फर्क है। इजिप्तकी स्त्रियाँ तुमान अँगरखा और जाकिट पहनती हैं और बाहर जाते समय ऊपर चोगा पहन लेती हैं। पाँवोंमें वे हमेशा जूते पहनती हैं।

इजिप्त यूरोपके बहुत नज़दीक है। यहाँ हरसाल ठंडके दिनोंमें हवा खानेके लिए और प्रसिद्ध स्थल देखनेके लिए हज़ारों यूरोपियन आते हैं। उनके लिए यहाँ बड़े बड़े होटल हैं। इनके सिवाय फ्रेंच, इटालियन, ग्रीक आदि लगभग डेढ़ लाख यूरोपियन यहाँ स्थायी रूपसे बस गये हैं। इजिप्तके भी बहुत लोग यूरोपियन स्त्रियोंसे विवाह कर लेते हैं। बहुतसे युवक पढ़नेके लिए फ्रान्स जाते हैं। काहिराके लोग फ्रेंच भाषा अच्छी तरह जानते हैं।

शौकीन और खुशदिल

काहिराकी सैरका असली मज़ा दिनमें नहीं मिल सकता, उसके लिए तो तुम्हें रात-जागरण करना पड़ेगा। यहाँके लोग बड़े शौकीन और खुशदिल हैं। रातके बारह बजे तक होटलोंमें अथवा खुले 'काफे' नामके होटलोंमें बैठकर कॉफीका एक एक घूँट धीमे धीमे पीते हुए गाना सुनना या नाच देखना इन लोगोंका रोज़का काम है। सभी होटलोंमें गान नाच, और बग़ीचोंमें मधुर बैण्ड बजते रहते हैं।

इन शौकीन लोगोंके लिए दूसरे प्यारे स्थान हमामखाने हैं। काहिरामें स्त्रियों और पुरुषोंके लिए बहुत-से हमामखाने अर्थात् सार्वजनिक स्नानगृह हैं। वहाँ पहले शरीरपर मालिश की जाती है और फिर नहलाया जाता है। स्त्रियाँ दोपहरके वक़्त या तो अपने पड़ोसियोंके यहाँ जाती हैं या हमामखानोंमें।

ये लोग सबेरे नाश्ता, दोपहरको भोजन और रातको मुख्य भोजन करते हैं। मिठाइयाँ और फल खूब खाते हैं। काफी तो पानीकी तरह पीते हैं। इनका दूसरा व्यसन तमाखू है। सभी श्रेणियोंके लोग तमाखू पीते हैं। अमीर स्त्रियाँको भी यह व्यसन होता है।

पिरामिड

चलो अब हम काहिराके पासके पुराने स्मारकोंको देख आवें। नील नदीकी कृपासे मिस्र देश बहुत उपजाऊ और समृद्ध है। और यदि खाने-पीनेकी कमी न हो तो मनुष्य ललित कलाओंका विकास और साहित्य-निर्माण करता है। इस नियमके अनुसार मिस्र देश अपने प्राचीन पूर्वजोंके अद्भुत और भव्य पिरामिडोंके लिए प्रसिद्ध है जो तीन हैं और काहिरासे आठ मील दूर हैं। पिरामिड अर्थात् मिस्र देशके प्राचीन राजाओंकी कब्रोंपर चिने गये पत्थरोंके बड़े बड़े स्तूप। ये तीनों स्तूप लगभग पाँच हज़ार वर्ष पहले
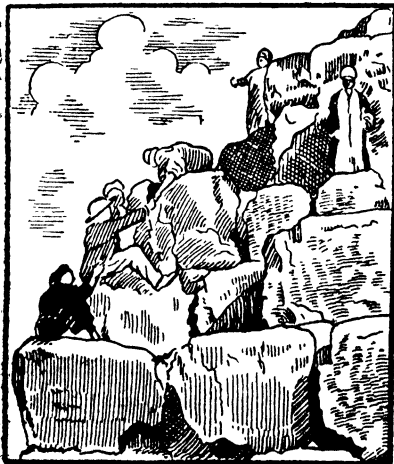
पिरामिडपर चढ़नेका ढंग

बनाये गये थे। सबसे बड़ा पिरामिड ४८२ फुट ऊँचा है। उसके निचले भागने लगभग तेरह एकड़ जमीन रोक रक्खी है। बड़े बड़े पत्थर एकपर एक सीढ़ियोंके रूपमें चिनकर इन पिरामिडोंकी रचना की गई है। नीचेके भाग खूब चौड़े हैं और ऊपरके भाग क्रम क्रमसे पतले होते गये हैं। पिरामिडकी चोटीपर पहुँचनेके लिए तीन आदमियोंकी जरूरत पड़ती है। दो आदमी ऊपर खड़े रहकर मुसाफ़िरको ऊपर खींचते हैं और एक नीचेसे ऊपरको धकेलता है।

इजिप्त तो मुलायम मिट्टीका देश है, तब वहाँ पिरामिडोंके लिए पत्थर कहाँसे आये होंगे? कहते हैं कि अरबके पहाड़ोंमेंसे सैंकड़ों मीलकी दूरीसे ये पत्थर लाये गये हैं। इनको लानेके लिए केवल सड़क बनानेमें ही दस साल लग गये थे। बड़े पिरामिडको बनानेके लिए एक लाख गुलामोंने लगातार बीस सालतक काम किया था। इन राजाओंकी हविस और महत्त्वाकांक्षा भी कैसी अनोखी थी!

स्फिंक्स

चलो अब हम पत्थरका बना हुआ स्फिंक्स नामक विशाल स्त्री-मुख सिंह देखें। सिंह बैठा हुआ है और उसका नीचेका कुछ भाग बालूमें दब गया है। यह पत्थरको तराश तराश कर बनाया गया है और पाँच-मंजिली इमारत जितना ऊँचा है। इसकी लम्बाई १४० फुट है। अगले पैरोंकी ही लम्बाई पचास फुट है। सिर इतना चौड़ा है कि उसमें एक बड़ा-सा कमरा समा जाय। उसके कानपर आदमी खड़ा हो जाय तो वह भी उसके सिरतक न पहुँच सके। कान चार फुट और नाक साढ़े पाँच फुट है। जबड़ा इतना बड़ा है कि यदि वह खोला जाय तो उसके भीतर एक पूरा बैल मजेसे चला जाय। पत्थरका यह राक्षसी पुतला किसने तैयार किया और कब तैयार किया,

स्फिंक्स अथवा स्त्री-मुख सिंह

इस विषयमें किसीको कुछ मालूम नहीं। तो भी यह निश्चित है कि वह पाँच-छः हज़ार वर्ष पहलेका है। जिनके लिए ये पिरामिड और स्फिंक्स जैसे विशाल स्मारक बनें, उन प्राचीन राजाओंके मृत देह आज भी हम काहिराके अजायब-घरमें देख सकते हैं। वे पाँच-छः हज़ार वर्षतक ज्योंके त्यों रक्खे रहे हैं, यह एक बड़ी ही अद्भुत बात है। उस समय लोग मुर्दोंपर एक प्रकारका मसाला लगाकर उन्हें सन्दूकमें बन्द करके रख देते थे। अब लोगोंने जब उन सन्दूकोंको खोलकर देखा तो ऐसा मालूम हुआ कि वे कल ही मरे हैं। पुराने ज़मानेके लोगोंकी यह होशियारी तारीफ करनेके लायक है!

अभ्यास

१ कहते हैं कि नील नदीने सहाराके रेगिस्तानमें जादू कर दिया है। यह कैसे?

२ मिस्र देशकी लोक-माता नीलकी जीवन-कथा लिखो।

३ फेल्लाओंके रहन-सहन और आचार-विचारके विषयमें संक्षेपमें लिखो।

४ जब मिस्र देशमें वर्षा होती ही नहीं, तो लोग खेतीके लिए पानी कहाँसे लाते होंगे?

५ अपने यहाँ खेतोंको पानी देनेके जो तरीके हैं, उनका वर्णन करो।

६ आस्वानके बाँधपर छोटा-सा नोट लिखो और हिन्दुस्तानमें ऐसे बाँध कहाँ कहाँपर हैं, उनका भी परिचय दो। तुम्हारे यहाँ ऐसे बाँध क्यों नहीं हैं, कारण बताओ?

७ मिस्रकी कपासके विषयमें जो कुछ जानते हो लिखो। हमारे देशमें उत्तम कपास कहाँ कहाँ पैदा होती है।

८ ऐसा समझकर कि तुम काहिराकी सैरके लिए गये हो अपने मित्रको एक लंबा पत्र लिखो और उसमें काहिराके लोगोंके पहिनाव, रीति-रिवाज, घर, बाज़ार, सड़कें, सवारी, भाषा, मदरसे, धर्म आदिका वर्णन करो।

९ पिरामिड और स्फिक्सका वर्णन करो।

१० ऐसी कल्पना करके कि पिरामिड और स्फिक्स तुमने देखे हैं तुम्हारे मनमें जो विचार उठें, उन्हें लिखो।

११ तुम विषुववृत्तके प्रदेशसे काहिरा तकके प्रदेशका विमानके द्वारा सफर कर रहे हो और अपने पास बैठे हुए मित्रको रास्तेके जुदा जुदा प्रदेशोंका परिचय करा रहे हो, इस शैलीसे एक सुन्दर लेख फुरसतके वक्त, लेखके लम्बा होनेकी परवाह किये बिना, लिख डालो। उसे पूरा करनेमें जल्दी मत करो, भले ही चार महीने लग जायँ। इसके लिए दूसरी किताबोंसे भी सहायता ले सकते हो। वर्णन मनोरंजक हो, इसकी खास तौरसे चिन्ता रक्खो।

१२ मिस्र देशसे बहुत कुछ मिलता जुलता कोई प्रान्त हमारे देशमें है? है तो कौन-सा? दोनोंमें जो समानताएँ हों उनका वर्णन करो।

---

७ मध्य आफ्रिकाके हब्शी

सहाराके रेगिस्तानके दक्षिणमें बद्दुओंकी हद पूरी होती है और नीग्रो या हब्शियोंकी हद शुरू होती है। रेगिस्तानके दक्षिणके सूदान नामक विस्तीर्ण प्रदेशमें और उसके दक्षिणकी उतनी ही लम्बी कांगो नदीकी घाटीमें ये लोग रहते हैं। इनके अलग अलग हज़ारों भेद हैं और रीति-रिवाज़, भाषा वगैरह भी एक दूसरेसे अलग है।

हब्शी स्याही जैसे काले रंगके होते हैं। उनके होठ मोटे, बाल घुँघराले और मोटे ऊन जैसे होते हैं। नाक चपटी होती है। उत्तरी आफ्रिकाके गोरे लोगोंके साथ विवाह-सम्बन्ध होनेसे हब्शियोंकी जो मिश्र जाति पैदा हुई है उसे बाँटू कहते हैं। बाँटू लोग हब्शियों जैसे काले नहीं होते, उनके होठ भी मोटे नहीं होते।
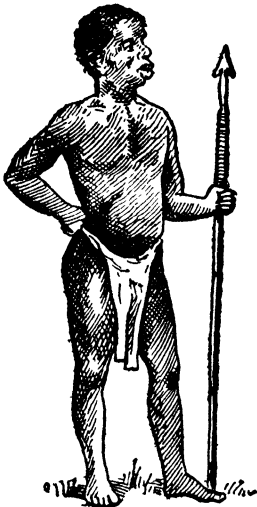
कांगो प्रदेशका हब्शी

हब्शियोंकी इतनी अधिक जातियाँ हैं और उनके रूप-रंग, रीति-रिवाज़, पहनावे आदि इतनी तरहके हैं कि उन सबका वर्णन इस पुस्तकमें नहीं किया जा सकता। उत्तरके बद्दू अरबोंके सहवाससे वहाँके हब्शी मुसल्मान हो गये हैं और खाने-पीने उद्योग-धंधे वगैरहमें बहुत कुछ सभ्य हो गये हैं। इसी तरह समुद्र-किनारेके नज़दीकके लोग भी व्यापारके लिए आये हुए यूरोपियन लोगोंके संसर्गसे सभ्य बन गये हैं। इन दो भागोंको छोड़कर मध्य आफ्रिकाके विशाल भागपर

नज़र डाली जाय, तो जंगली हालतकी असंख्य हब्शी जातियाँ हमें दिखाई देंगीं ।

घने जंगलोंका पीहर

मध्य आफ्रिका विषुववृत्तपर है, इसलिए वहाँ भयंकर गर्मी पड़ती है। वर्षा भी बहुत होती है। बड़ी बड़ी नदियों, झीलों और घने जंगलोंसे वह भरा हुआ है। बौने या ठिंगने लोग इन्हीं जंगलोंमें रहते हैं।

समतल जमीन न होनेके कारण यहाँकी नदियोंमें प्रपात बहुत हैं और इस कारण नदियोंद्वारा माल नहीं ढोया जा सकता। यहाँ सिंह, हिपोपोटोमस, हाथी, गैंडे आदि जानवर मौज़से घूमा करते हैं। नदियोंके पासकी ज़मीन उपजाऊ होनेसे खेती अच्छी तरह हो सकती है।

उत्तरकी ओरके अरबों और समुद्रके किनारेके यूरोपियन लोगोंके सहवासके कारण कुछ हब्शी थोड़े-बहुत कपड़े पहनने लगे हैं; पर मध्य आफ्रिकाके तो प्रायः नंगे ही रहते हैं। उनकी बहुत-सी जातियाँ ऐसी भी हैं जो कपड़े बिलकुल ही नहीं पहनतीं। गर्मी इतनी ज़्यादा होती है कि हब्शियोंको कपड़े पहनना अच्छा नहीं लगता। इसमें उनका कोई दोष नहीं है। क्या हम लोग भी गर्मियोंमें दोपहरको शरीरपरसे कमीज़ उतारकर पंखा नहीं किया करते? मध्य आफ्रिकामें तो हमारे यहाँसे बहुत ज़्यादा गर्मी पड़ती है। यदि हम हब्शियोंको मध्य आफ्रिकासे उठाकर उत्तरीय ध्रुवमें एस्किमो लोगोंके पास रख दें तो वे कभी नंगे न घूमेंगे, वहाँ पहुँचते ही चटपट चमड़ेके एककी जगह दो कोट पहन लेंगे। इसी तरह यदि एस्किमो लोगोंको मध्य आफ्रिकामें लाकर रख दें तो वे तत्काल ही अपने खुरदरे कोटोंको उतारकर फेंक देंगे। जैसा देश वैसा वेश। जो हब्शी नंगे नहीं रहते, वे कमरमें चमड़ेका अथवा पेड़ोंकी छालका एक टुकड़ा लपेटे रहते हैं। पर समुद्रके पासके

हब्शी तो यूरोपियनोंद्वारा विलायतसे लाये गये भड़कीले रंगके कपड़े पहनते हैं। उन्हें रंग-बिरंगे कपड़े बहुत पसंद हैं। उनकी स्त्रियाँ रंग-बिरंगे रूमाल सिरपर लपेटती हैं।

कपड़े शरीर ढकनेके लिए हैं या सुन्दरताके लिए?

हब्शियोंको कपड़ोंकी भले ही ज्यादा ज़रूरत न हो, पर गहनोंका बहुत शौक होता है। वे नंगे रहते हैं पर गहनोंके बिना नहीं रह सकते। कहते हैं कि दुनियामें कपड़े पहननेकी कल्पना सबसे पहले शरीरको ठंड, हवा, गर्मी या लज्जासे बचानेके लिए नहीं, किन्तु शरीर सुन्दर दिखाई दे, इसलिए सूझी होगी। आफ्रिकाके हब्शियोंको गहने पहनकर नंगे घूमते देखकर तो यही बात सची मालूम पड़ती है।

गहने सोने-चाँदीके ही नहीं, किसी भी वस्तुके और किसी भी तरहके हो सकते हैं। जिस हब्शीको सोना मिलता है, वह सोनेके कड़े और बालियाँ पहिनता है। जिसे सोना नहीं मिलता, वह हाथी-दाँतके कड़ोंसे ही निभा लेता है। स्त्रियाँ बचपनसे ही हाथी-दाँतके बड़े बड़े तोड़े पैरोंमें पहनती हैं और वे इतने भारी होते हैं कि चलनेमें भी कठिनाई होती है। बचपनसे पहने हुए ये तोड़े मरते दम तक पाँवोंमें रहते हैं। कितनी ही जातियोंमें गलेमें और पैरोंमें लोहेकी मालाएँ पहननेका रिवाज़ है। बहुत-सी स्त्रियाँ घुटनेसे लेकर एड़ियों तक पीतलके तोड़े पहनती हैं और बहुत-सी गलेमें काचके गुरियोंके हार पहनती हैं। और कौड़ियोंकी तो बात ही न पूछो! हमारे यहाँकी स्त्रियाँ जिस प्रकार अपनी चोलियों और पोलकोंपर लेस लगाती हैं उसी प्रकार वहाँकी हब्शी बहिनें अपने तमाम कपड़ोंपर कौड़ियोंकी किनारी लगाती हैं। इसके अलावा गलेमें कौड़ियोंके हार, बालोंमें कौड़ियोंके गहने, हाथोंमें कौड़ियोंके बाजूबन्द,—इस तरह जहाँ देखो वहाँ कौड़ियाँ

ही कौड़ियाँ दिखाई देती हैं। बहुत-सी स्त्रियाँ कान छिदाकर उनमें लकड़ीका बड़ा-सा टुकड़ा खोंसती हैं और बहुत-सी हाथों-पैरोंमें तारकी जाली पहनती हैं।

केश-रचनामें कला-विविधता

हब्शी स्त्री-पुरुषोंकी केश-रचनाका ढंग भी विचित्र और भाँति भाँतिका है। कई लोग बालोंपर तेल और मिट्टी चुपड़कर उनके तरह तरहके आकार बनाते हैं। कई स्त्रियाँ माथेके बालोंको लपेटकर उनके दो सींगसे खड़े कर लेती हैं। कई स्त्रियाँ बालोंकी छोटी छोटी लटें नीचे लटकने देती हैं। बहुत-से हब्शी बालोंको खुले हुए पंखे जैसा बनाते हैं। कितने ही सारे बाल कटाकर बीच बीचमें गुच्छे रख लेते हैं। कई बिलकुल ही बाल नहीं रखते और कई बीच-बीचमें पैसेके आकारके गुच्छे रखते हैं। स्त्री और पुरुष दोनों ही बालोंमें कौड़ियोंके गुच्छे गूँथते हैं और पक्षियोंके पंख खोंसते हैं।

हब्शियोंमें मुँह और छातीपर गुदना गुदानेका विचित्र रिवाज है। हरेक जमातके गुदनोंकी अलग अलग आकृतियाँ होती हैं। मुँह और छातीके गुदनोंसे उनकी जमात मालूम हो जाती है।

उद्योग-धंधे

अलग अलग स्थानोंके हब्शी उन उन स्थानोंकी परिस्थितिके अनुसार उद्योग-धंधे करते हैं। कुछ हब्शी ऐसे सपाट मैदानोंमें रहते हैं जहाँ सिरके बराबर ऊँचा घास होता है। घासकी बहुतायतके कारण वे बकरियाँ, गौएँ, गधे, घोड़े और ऊँट पालते हैं। और आसपास सिंह, चीते आदि क्रूर जानवर रहनेके कारण अपने घरोंके चारों ओर बाड़ बनाकर उसके अंदर पालतू पशुओंको रखते हैं। आदत पड़ जानेके कारण यहाँके लोग सिंहसे नहीं डरते। हब्शीका एक

लड़का भी अगर मौका पड़ जाता है तो सिंहका मुकाबला करनेमें नहीं हिचकिचाता।

घास काटकर और जमीन जोतकर उसमें खेती करना आसान है। इसलिए इन घासवाले मैदानोंके हब्शियोंका दूसरा रोज़गार खेती है। इस प्रदेशमें चावल, गेहूँ, मकई, तमाखू, कपास, शाक-सब्जी और फल खूब होते हैं। खेतोंमें पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियाँ ही अधिक काम करती हैं। कोंकणकी तरह यहाँके लोग पहले जमीनको तपने देते हैं और फिर उसे कुदालीसे खोदते हैं।

हब्शी चावलको उबालकर उसका भात अथवा उसकी रोटी बनाकर खाते हैं। वे गेहूँ और मकईकी भी रोटी बनाते हैं। उन्हें मकईके आटेकी खीर बहुत अच्छी लगती है। ये लोग खीरका बर्तन बीचमें रखकर बैठ जाते हैं और फिर एक आदमी चमचेसे खीरका एक कौर खाकर अपने पास बैठे हुए आदमीको चमचा देता है, और तब वह भी इसी तरह खाकर दूसरेको दे देता है। इस तरह वह खीर खत्म की जाती है और उसके बाद सब ताज़ा दूध पीते हैं। कभी कभी ये लोग बकरी और गायका मांस भी खाते हैं।

परिश्रमी स्त्रियाँ

कपासके पौधे जब कमर-भर ऊँचे हो जाते हैं तब स्त्रियाँ और लड़के कपास चुनते हैं और स्त्रियाँ उसके छोटे छोटे कपड़े बुनती हैं। हब्शी स्त्रियाँ हमेशा गुलामकी तरह निरन्तर मेहनत करती हैं। मेहनतके सब काम उन्हींको करने पड़ते हैं। वे खेती करती हैं और नदियोंमें नावें भी चलाती हैं। सिरपर माल लादकर दूर बाजारके गाँवको जाना और वहाँ उसे बेच आना भी स्त्रियोंका ही काम है।

हब्शी अनेक स्त्रियोंके साथ शादी करते हैं। जिसकी जितनी अधिक स्त्रियाँ होती हैं वह उतना ही बड़ा अमीर समझा जाता है। और जिसकी जितनी स्त्रियाँ मानो उसके उतने ही बिना तनख्वाहके मजूर !

हब्शी खेतीके अलावा और भी अनेक धंधे करते हैं। वे लोहा शुद्ध करते हैं और उससे तलवार, कैंची, भाले, खंजर, चाकू, अँगूठियाँ, कड़े, हार आदि चीजें तैयार करते हैं। पालतू पशुओंके चमड़ेकी जीन, लगाम और थैलियाँ तैयार करते हैं और मिट्टीके सुन्दर मटके बनाते हैं। तरह तरहकी टोकरियाँ बनानेमें भी वे कुशल होते हैं। हाथी-दाँतके ऊपर नक्काशीका काम भी वे बहुत अच्छा करते हैं।

कांगो, नाइजर आदि नदियाँके किनारे रहनेवाले हब्शी नावें बनानेमें बहुत होशियार होते हैं। बहुत-से हब्शी तो नावोंमें ही घर बनाकर रहते हैं। नदियाँ पार करनेके लिए ये बाँसके पुल बड़ी चतुराईसे तैयार करते हैं। नदीके किनारे रहनेवाले हब्शी बहुत करके मछलीपर ही अपना गुज़ारा करते हैं और थोड़ी बहुत खेती भी करते हैं।

मनुष्यभक्षी क्रू

जंगलोंके आसपास रहनेवाले हब्शी जंगली हाथियोंका शिकार करते हैं और हाथी-दाँत गोरे व्यापारियोंको बेच देते हैं। 'क्रू' नामके हब्शी बम्बई प्रान्तके घाटियोंकी तरह मज़बूत और तगड़े होते हैं। ये लोग जहाज़ोंमें खलासियोंका और बन्दरगाहोंमें कुलीका काम करते हैं। काले रंगके होनेपर भी ये आँखों-कानोंसे दूसरे हब्शियोंकी अपेक्षा सुन्दर दिखते हैं और टूटी फूटी अँग्रेजी भी बोल लेते हैं। नदियोंके रास्तोंसे दूरके कितने ही हब्शी बिलकुल जंगली हैं। वे मनुष्यको मारकर उसका मांस खा जाते हैं। शत्रुओंका मांस खाना

वे अभिमानकी बात समझते हैं। लड़नेवाले शत्रुओंसे वे बड़े अभिमानके साथ कहते हैं "ठहरो बेटा, कल तो तुम हमारे पेटमें चले जाओगे!" इनके बाज़ारोंमें भी मनुष्यका मांस बिकता है। मनुष्य-मांसके लिए ये लोग दूसरी जमातके लोगोंपर हमला करके उन्हें कैद कर लाते हैं। इन गुलामोंको पहले अच्छी तरह खिला-पिलाकर मोटा ताज़ा बनाते हैं और फिर उन्हें मारकर उनका मांस खाते हैं!

गुलामीकी प्रथा

यहाँ गुलामीका रिवाज बहुत पुराने समयसे चला आ रहा है। दूसरी जातिके मनुष्योंको पकड़कर अपने गुलाम बनाना और उनसे काम लेना हब्शियोंका रिवाज ही है। बहुत वर्ष पहलेकी बात है कि उत्तरी आफ्रिकाके अरब व्यापारी हब्शियोंको ज़बर्दस्ती पकड़कर अथवा मोल लेकर उन्हें काहिरा, बग़दाद, दमास्कस, बसरा आदि शहरोंमें बेच देते थे। हरएक तुर्क अथवा अरब अपनी अपनी हैसियतके माफिक हब्शी स्त्री-पुरुषोंको गुलाम रखता था। राजाओंके रनिवासोंमें भी यही लोग नौकर रखे जाते थे।

जब यूरोपियन लोगोंने अमेरिकाका पता लगाया तब उन्हें वहाँ खेतीके लिए अच्छे मज़दूरोंकी ज़रूरत पड़ी। इसलिए उन्होंने अरब व्यापारियोंका अनुकरण किया और वे लाखों हब्शियोंको पकड़कर और गुलाम बनाकर अमेरिका ले गये और वहाँ उनसे अपनी कपासकी खेती कराने लगे। वहाँ इस समय इन्हीं हब्शी गुलामोंके लाखों वंशज रहते हैं। बुकर टी० वाशिंगटन नामक उनके एक नेताका नाम बहुत प्रसिद्ध है।

जंगली हब्शी अब बहुत कुछ सुधरने लगे हैं। बहुतोंने नर-मांस खाना छोड़ दिया है। गुलामीकी प्रथा भी बन्द होती जा रही है।

उनके गाँव और घरबार

हब्शियोंके मकान मिट्टीके और छप्पर घासके होते हैं। छप्परका भाग दरवाजेके आगे लाकर वे बाहर दालान-सा बना लेते हैं और इस खुली जगहमें दोपहरको सोते अथवा बैठकर गप्पें हाँकते हैं। बहुत करके उनके गाँवोंके चारों ओर मिट्टीका परकोटा होता है। कहीं कहीं नजदीकके रिश्तेदार इकट्ठे होकर एक दूसरेके पास पास घर बना लेते हैं और उन सबके चारों ओर मिट्टीका बड़ा कोट होता है। एक गाँवमें इस तरहके अनेक मुहल्ले होते हैं। ये लोग अनाजकी थैलियाँ ऊँचाईपर लटकाते हैं क्यों कि वहाँ दीमकका बहुत उपद्रव है। उनके घरमें एक अर्धचन्द्राकार लकड़ीका टुकड़ा होता है। यही उनका तकिया है। वे इसी तकिएपर गरदन टिका कर और सिर लटकाकर सो जाते हैं। तेल और मिट्टी चुपड़ कर सुन्दरतासे बाँधे हुए बाल अस्तव्यस्त न हो जायँ, इसीलिए यह तक़लीफ़ उठाई जाती है। इसी तरहके मज़ेदार तकिए हमें जापानियोंमें भी मिलेंगे। हब्शी जमातें हमेशा एक दूसरीसे मारामारी या लड़ाई करती रहती हैं। उनके गाँवोंके आसपास बौने लोगोंके गाँवोंकी तरह खाइयाँ और विष-चुपड़ी लकड़ियाँ होती ही हैं। गाँवके कोट मज़बूत होते हैं। हरेक जमातकी फौज हमेशा तैयार रहती है। यहाँके राजाओंके पास तो पहले स्त्रियोंकी भी पलटन रहती थी। बचपनसे ही स्त्रियोंको हथियार चलाना सिखाया जाता था और उन्हें विवाह करनेकी स्वतंत्रता न थी। उनका सारा जीवन लड़नेमें ही बीतता था।

भूत-प्रेत और ओझा

हब्शियोंका भूत-प्रेतों, जादू और जंतर-मंतरोंपर बहुत विश्वास होता है। उनकी समझमें झाड़, पेड़, गुफा वगै़रह स्थानोंमें भूत रहते हैं।

ओझाओंका उनमें बड़ा माहात्म्य है। वे जो कुछ कहते हैं उसे ये आँख मींच कर करते हैं। हरेक हब्शीके पास जानवरका मंतर किया हुआ दाँत, पक्षीका पंख, नख या ऐसी ही कोई चीज़ होती ही है। उनको विश्वास होता है कि यदि यह मंतरकी हुई चीज़ पासमें होगी तो हम बीमार नहीं पड़ेंगे और लड़ाईमें हमारी हार न होगी। यदि वे कभी बीमार पड़ जाते हैं या लड़ाईमें हार जाते हैं तो समझ लेते हैं कि शत्रुकी मंतरकी हुई चीज़ हमारी चीज़से अधिक प्रभावशाली होगी। वे पत्थरोंकी बेडौल और विकराल मूर्तियोंकी पूजा करते हैं। इन मूर्तियोंके प्रति उनका प्रेम नहीं होता, डर होता है। मूर्तियाँ उनका बुरा न करें, शत्रुका ही बुरा करें, इसीलिए वे उनकी पूजा करते हैं। उनकी धारणा है कि देव वह शक्ति है जो मनुष्यका अनिष्ट ही करती है। हब्शियोंका विश्वास है मनुष्य मर जानेके बाद भी किसी जगह जीता रहता है और उसे वहाँ सब चीज़ोंकी ज़रूरत पड़ती है। इसीलिए वे मुर्देके साथ साथ उसके खाने-पीनेकी चीजें और उसे अच्छी लगनेवाली चीज़ें भी गाड़ देते हैं। पहले तो कोई आदमी मर जाता था तो उसके साथ उसकी स्त्री और गुलामोंको भी जीते जी गाड़ देते थे।

अब इस तरहके विश्वास और रिवाज़ मिटते जाते हैं। ईसाई धर्म-प्रचारकोंने बहुत हिम्मत करके मध्य आफ्रिकाके इस प्रदेशमें प्रवेश करके जगह जगह पाठशालाएँ खोल दी हैं। इससे हब्शियोंके रहन-सहन और आचार-विचारमें बहुत फ़र्क़ होता जा रहा है।

सिक्केकी जगह रूमाल

हब्शियोंको ताँबे और चाँदीके सिक्कोंका ज्ञान नहीं है। वे लेन-देनेके लिए अनेक चीज़ोंका उपयोग करते हैं। कौड़ी और सीपियाँ

उनके चलतू सिक्के हैं। इनके अलावा कुछ स्थानोंमें सुई, पिन, तारके टुकड़े, रंग बिरंगे कपड़े आदि चीज़ें सिक्केके तौरपर काम आती हैं। कई स्थानोंमें रूमालोंका बड़ा महत्त्व है। एक रूमाल देकर अनेक चीज़ें खरीदी जा सकती हैं। कहीं कहीं काँचकी गुरियों और लाल गुरियोंकी बड़ी कीमत होती है। कहीं कहीं पीतल और नमकके टुकड़ोंका भी सिक्केके रूपमें उपयोग होता है। थोड़ेसे नमकके टुकड़े देकर एक गुलाम खरीदा जा सकता है। यदि तुम किसी हब्शी दूकानदारसे बकरीकी कीमत पूछोगे तो वह जवाब देगा इतने नमकके टुकड़े, काँचके गुरिये या पाँच छः हाथ लम्बा कपड़ा।

अभ्यास

१ हब्शियोंके रूपरंगका वर्णन करो। 'बांटू' किसे कहते हैं ?

२ हब्शियोंके प्रदेशके प्राणियोंका वर्णन करो।

३ हब्शियोंके पहिनावेका वर्णन करो। कपड़े सुन्दरताके लिए पहने जाते हैं या रक्षाके लिए ? जो रक्षाके लिए पहने जाते हों तो बताओ, भारत जैसे देशमें यूरोपियन ढँगके कोट-पतलून और नकटाईसे हमारी क्या रक्षा होती है ?

४ हिन्दुस्तानके स्त्री-पुरुषोंके लिए तुम किस प्रकारके पहनावेको ठीक समझते हो ?

५ हब्शियोंके गहनों और केश-रचनाका वर्णन करो।

६ हब्शियोंके गोदनोंका शरीरको सुन्दर बनानेके अतिरिक्त कोई और प्रयोजन है ?

७ हब्शियोंके उद्योग-धंधों और उनमें प्रचलित सिक्कोंका संक्षेपसे परिचय दो।

८ मनुष्यभक्षी क्रू लोगोंका संक्षेपमें वर्णन करो।

९ हब्शियोंके गाँवों और गृह-रचनाकी अपने देशको गाँवों और गृह-रचनाके साथ तुलना करो।

१० हब्शियोंकी मातृभूमि तो आफ्रिका है, पर अमेरिकाकी राजनीतिमें हब्शियोंका प्रश्न इतना महत्त्वपूर्ण क्यों समझा जाता है ?

११ बुकर टी० वार्शिग्टनके विषयमें क्या जानते हो ?

१२ ‘अंकल टॉम्स केबिन’ (* टामकाकाकी कुटिया) नामक उपन्यास तुमने पढ़ा है ? इसका अँग्रेजी सरल संस्करण या हिन्दी संस्करण लेकर जरूर पढ़ लो। गुलामीकी प्रथा क्या है, इसका हृदयद्रावक वर्णन उसमें मिलेगा।

१३ हब्शियोंके वहमों और जंतर-मंतरोंपर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो।

८ चरागाहोंके किरगिज़

अबतक तो हमने आफ्रिकाके बद्दू, मिस्री, हब्शी और बौने लोगोंका परिचय पाया। चलो, अब हम इसी सिलसिलेमें मध्य एशियाके किरगिज़ लोगोंसे भी मिल लें।

किरगिज़ोंका देश एक बड़ा भारी सपाट मैदान है। इस मैदानमें पेड़ तो हैं ही नहीं, छोटे मोटे पौधे तक नहीं हैं। जहाँ देखो वहाँ घुटनोंतक बढ़ी हुई घास दिखाई देती है। भला ऐसे प्रदेशमें रहनेवाले लोग क्या करते होंगे ?—मैदानमें जानवर नहीं होते इसलिए शिकार भी नहीं हो सकता, काफी वर्षा न होनेसे खेती भी नहीं की जा सकती। तब घासकी विपुलता होनेसे पशुओंको पाल कर ही अपना गुज़ारा करते होंगे।—हाँ, यही बात है।

किरगिज़ काले भी नहीं और गोरे भी नहीं। उनका रंग ताँबे जैसा होता है। उनकी आँख छोटी और तिरछी होती है। गालकी हड्डियाँ ऊपर उभरी हुई। इन लोगोंकी संख्या लगभग तीस लाख है।

तंबुओंमें रहनेवाले किरगिज़

उनके पास बकरियों, भेंड़ों, ऊँटों, गधों और घोड़ोंके बड़े बड़े झुंड

---

* यह पुस्तक हिन्दीमें ‘टामकाकाकी कुटिया’के नामसे प्रकाशित हुई है।

होते हैं। इतने अधिक पशुओंको लेकर यदि वे एक ही स्थानपर घर बनाकर रहें तो घास जल्दी ख़त्म हो जाय और फिर उनके पशुओं तथा स्वयं उनको भी भूखों मरना पड़े। इसलिए किरगिज़ बद्दुओंकी तरह हमेशा घूमते रहते हैं और तंबुओंमें रहते हैं। अच्छा, ये लोग तंबू किस चीज़के बनाते होंगे? एस्किमो पासके समुद्रकी सील मछलीकी खालके तंबू बनाते हैं और बद्दू अपने ऊँटोंके चमड़ेका तंबू बनाते हैं। किरगिज़ भी अपने पालतू पशुओंकी खालके तंबू बनाते हैं।

किरगिज़ोंके तंबू खूब चौड़े होते हैं। पहले कनात लगाकर फिर उसपर लकड़ीके छोटे छोटे खंभोंके सहारे छतको टिकाते हैं। कनात आगे-पीछे खींच कर तंबू छोटा-बड़ा किया जा सकता है।

उनके तम्बुओंमें सुन्दर गालीचे और ज़ाजिमें बिछाई जाती हैं। हब्शियोंके घरोंकी तरह इनके यहाँ मटके नहीं दिखाई देते। इनके बर्तन लकड़ी या चमड़ेके होते हैं, इसलिए उनके टूटने-फूटनेका डर नहीं रहता और उन्हें बनानेके साधन उनके पशुओंके समूहमें हमेशा तैयार ही रहते हैं।

एक चरागाहसे दूसरी चरागाहको जाते समय वे सबसे पहले अपने घोड़ोंको ले जाते हैं। कोमल और अच्छी किस्मकी घास खानेका पहला मान घोड़ोंको मिलता है। इसके बाद वे गौओंको ले जाते हैं। गौएँ और घोड़े जिस घासको नहीं खाते, वह बकरियों और भेड़ोंको मिलती है। घोड़ोंका इस तरहका मान इसलिए है कि वे उनके बहुत काम आते हैं। उनके कारण ही किरगिज़ सैकड़ों पशुओंको रख सकते हैं।

किरगिज़ लोग टोलियाँ बनाकर घूमते हैं। वे घासके चरागाहोंको

आपसमें बाँट लेते हैं। एक टोलीके चरागाहमें दूसरी टोली नहीं जा सकती, यदि जाती है तो लड़ाई-झगड़ा और मार-पीट हो जाती है। इस प्रदेशमें पानीकी बहुत कमी होती है। जहाँ पानीके झरने होते हैं वहीं ये लोग अपना डेरा डालते हैं। उनके चलनेकी गति बहुत धीमी होती है। इसका कारण यह है कि उनके साथ बकरियाँ और भेड़ें होती हैं जो धीमे धीमे चरती हुई चलती हैं। गर्मियोंमें जब मैदान खूब तप जाता है और पानी नहीं मिलता, तब ये लोग नज़दीकके पहाड़ोंपर चले जाते हैं और वर्षा शुरू होते ही फिर मैदानमें आ जाते हैं।

ईमानदार चोर

कभी कभी साथके पशुओंकी संख्या बहुत बढ़ जाती है। ऐसी हालतमें जब सिर्फ अपने हिस्सेके चरागाहकी घाससे काम नहीं चलता है तब वे दूसरी टोलीके चरागाहमें ज़बर्दस्ती घुस जाते हैं। दूसरी टोलीके घास या पानीकी चोरी करनेमें वे पाप नहीं समझते। उलटे, इसके लिए उन्हें अभिमान होता है। 'किरगिज़' शब्दका मूल अर्थ चोर होता है। दूसरी टोलीकी चोरी करनेमें भले ही किरगिज़ गौरव समझते हों पर अपनी टोलीके लोगोंकी वे कभी चोरी नहीं करते। अपने भाई-बन्धुओंकी चोरी करनेवाले किरगिज़को तुरंत ही मौतकी सज़ा दे दी जाती है।

किरगिज़ थोड़ा बहुत व्यापार भी करते हैं। हर साल वे अपने पासके मुल्कमें जाते हैं और वहाँके व्यापारियोंको घोड़े और पशु बेच कर उनके बदलेमें अनाज कपड़े वगैरह ले आते हैं।

चौकोन ईंटोंकी चाय

किरगिज़ोंका मुख्य भोजन पालतू पशुओंका मांस है। उन्हें बकरेका मांस बहुत अच्छा लगता है। त्यौहारके दिन वे घोड़ेका

मांस खाते हैं। दिन-भर उन्हें पीनेको पानी न मिले तो कोई तकलीफ़ नहीं होती। इसी तरह अन्न बिना भी वे कई दिन तक रह सकते हैं। इस तरहके उपवासके बाद यदि उन्हें मांस मिल जाता है तो इतना खा लेते हैं कि उनसे फिर चला भी नहीं जाता। वे रोटी नहीं खाते। खट्टी दाल बनाकर पीते हैं। चायके बड़े शौकीन होते हैं। विदेशी व्यापारियोंसे वे पशुओंके बदलेमें चायकी ईंटें लेते हैं। चीन, तातार आदि देशोंमें चायकी बड़ी बड़ी बड़ियाँ बनाकर बेची जाती हैं जो ईंटके आकारकी होती हैं। उसे 'ईंटोंकी चाय' कहते हैं। किरगिज़ोंका पेय दूध है। दूधसे वे लोग मक्खन और 'कुमीस' नामक एक पेय तैयार करते हैं। दूधको चमड़ेकी थैलीमें दस-पन्द्रह दिन तक रहने देते हैं और उसे बारबार हिलाते रहते हैं। इस तरह कुछ समयमें दूध फट जाता है और उसका स्वाद छाछ जैसा हो जाता है। यही कुमीस है। इसे कुछ ज़्यादह मात्रामें पीनेसे नशा चढ़ता है।

किरगिज़ कफ़तान नामका चौड़ा चोगा पहनते है जो पशुओंके बालों या कपड़ेका होता है। इसके नीचे वे पीले या लाल रंगके चमड़ेका इज़ार और घुटनों तकके ऊँचे बूट पहनते हैं। वे इज़ारके छोर बूटोंके साथ बाँध देते हैं। चोगोंके नीचे चमड़ेकी ही कमीज़ें होती हैं। सिरके ऊपर भेड़के चमड़ेकी टोपी रहती है। बहुत बड़ी टोलीके मालिक अपनी अमीरीके मुताबिक मखमलका चोगा पहनते हैं। कमरबंदों, घोड़ेकी जीनों और लगामोंमें वे चाँदी और सोना लगाते हैं और उसपर हीरे जड़वाते हैं। स्त्रियाँ भी पुरुषोंकी ही तरह पोशाक पहनती हैं। फ़र्क इतना ही होता है कि सिरपर वे भेडके चमडेकी टोपीकी जगह सफेद कपडा लपेटती हैं।

किरगिज़ स्त्रियाँ
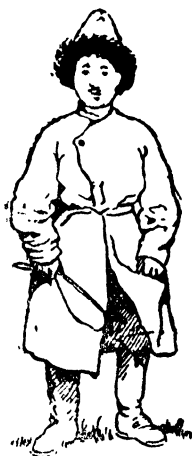
पुरुष घोड़ेपर चढ़कर अपने पशुओंकी रखवाली करते हैं अथवा लड़ाई, झगड़े और चोरी करते हैं। इसलिए दूसरे कामोंके लिए उन्हें फ़ुरसत नहीं मिलती। घरके सब काम-काज स्त्रियाँ ही करती हैं। डेरा उठाते समय वे तंबूका सामान बाँधकर ऊँटोंकी पीठपर लादती हैं और नये स्थानपर तंबू गाड़कर ठीक तौरसे सामान जमाती हैं। पशुओंको दुहनेका काम भी वे ही करती हैं। यह काम कड़ी मेहनतका है क्यों कि गौओं, भेड़ों, बकरियों और घोड़ियों, सभीको उन्हें दुहना पड़ता है। घोड़ियोंको तो दिनमें तीन बार दुहना पड़ता है।

कफतान और चमड़ेकी टोपी पहननेवाला किरगिज़

किरगिज़ स्त्रियोंको शृंगारका बड़ा शौक होता है। वे अपने चेहरे रँगाती हैं और पाउडर भी लगाती हैं। घोड़ेके बाल अपने बालोंमें गूँथती हैं। गहने भी बहुत पहनती हैं। लड़कियोंका विवाह पन्द्रह वर्षसे पहले हो जाता है। दुलहिनके बापको वर-राजाके लिए भेड़, ऊँट वगैरह पशु देने पड़ते हैं। सुन्दर लड़कीके लिए दहेजमें पचास ऊँट अथवा सौ बकरियाँ मिलना साधारण बात है। कुरूप लड़कीका सौदा एक दो ऊँटोंसे ही हो जाता है।

किरगिज़ोंका कुटुम्ब बड़ा होता है। लड़के, लड़कियों, बहुओं और नौकर-चाकरोंसे उनका घर भरा रहता है। घरमें जितने अधिक आदमी ढोर पालने और दूध दुहनेका भी उतना ही अधिक सुभीता।

जिस कारण हब्शी अनेक स्त्रियाँ रखते हैं उसी कारण किरगिज़ लोक इकट्ठे मिलकर रहनेकी पद्धति या संयुक्त कुटुम्ब-पद्धतिको पसंद करते हैं। आप सोचते होंगे कि बेचारा किरगिज़ ज़िंदगी-भर भटकता ही रहता है, क्या वह भटकते भटकते तंग न आ जाता होगा? नहीं, बिलकुल नहीं। उलटे, घोड़ेपर चढ़कर खुली हवामें घूमनेमें उसे मज़ा आता है। खुले आकाशके तारे गिनते गिनते सो जाना उसे बहुत अच्छा लगता है। एक ही स्थानपर घर बनाकर रहनेवाले हम-आप जैसे लोगोंपर उसे दया आती है। किरगिज़को आश्चर्य होता है कि हम लोग एक ही स्थानपर रहते रहते ऊब क्यों नहीं जाते! उसे अपने घोड़ों, बकरियों, ऊँटों और गौओंके झुंडका बहुत अभिमान होता है। दुर्भाग्यसे जिनके पास इस प्रकारके पशुओंके झुंड नहीं है, ऐसे हम-आप जैसे आदमियोंकी गरीबीपर उसे तरस आता है। अब कहो, इन खानाबदोश किरगिज़ोंपर क्या अब भी आपको दया आती है?

अभ्यास

१ अच्छी तरह समझाओ कि किरगिज़ोंको अपने देशकी परिस्थितियोंके कारण ही पशु-पालनसे अपना निर्वाह करना पड़ता है।

२ कल्पना करो कि तुम किसी किरगिज़के तंबूमें गये हो, इस तरहकी कल्पना करके उसके और आपके बीच जो बातचीत हुई उसे संवादरूपमें लिखो।

३ किरगिज़ोंको यदि ईमानदार चोर कहा जाय तो क्या ठीक होगा और क्यों?

४ किरगिज़ोंके आहार-विहारके विषयमें संक्षेपसे लिखो। यदि तुम्हें उनका आनन्ददायक पेय कुमीस मिले, तो तुम उसका कैसा सत्कार करोगे? कुमीसका संक्षिप्त परिचय दो।

५ किरगिज़ स्त्रियोंके सिंगारका वर्णन करो।

६ किरगिज़ोंकी विवाह-प्रथापर संक्षेपसे लिखो। इससे मिलती-जुलती दहेज-प्रथा अपने यहाँ किन किन लोगोंमें है?

९ रेशमके देशके चीनी

अब तक हम अनाड़ी लोगोंमें घूमते रहे। कोई सख़्त सर्दीके कारण, कोई भयंकर गर्मीके कारण, कोई रेगिस्तानके कारण, और कोई घने जंगलोंके कारण जंगली हालतमें पड़े हुए हैं और उसीमें खुश हैं। प्रतिकूल परिस्थितियोंका वे दृढ़तासे मुक़ाबला कर रहे हैं, इसलिए हमें उनकी तारीफ तो करनी चाहिए, परन्तु, साथ ही हमें यह भी न भूल जाना चाहिए कि वे सभ्यताकी बिलकुल निचली सीढ़ीपर खड़े हैं और पशुओंकी तरह खाना, पीना और सो जाना, इसीको सब कुछ समझते हैं।

अब हम उन लोगोंका परिचय प्राप्त करें जो भगवानकी दयासे भौगोलिक परिस्थिति अनुकूल होनेके कारण सुख-सन्तोषके साथ दुनियामें रहते हैं और विद्या तथा कलाओंमें निपुण हैं।

हमारा पुराना पड़ोसी

प्रारम्भमें हम उत्तरकी ओरके अपने पुराने पड़ोसी और पुरानी संस्कृतिवाले चीन देशकी तरफ़ नज़र डालें। चीनके साथ हमारा बहुत पुराना सम्बन्ध है। वहाँ इस समय जो बौद्धधर्म प्रचलित है वह हमने ही उसे दिया है। प्राचीन समयसे ही चीनके विद्वान् यात्री स्वधर्मकी जन्मभूमिके पवित्र स्थानोंका दर्शन करनेके लिए और अपने धर्मग्रंथोंका अध्ययन करनेके लिए हिन्दुस्तानमें आते रहे हैं। यहाँके विद्यापीठोंमें उस समय दस दस हज़ार विद्यार्थी पढ़ा करते थे। इसके सिवाय हिन्दुस्तानके विद्वानोंका चीनके दरबारमें बहुत आदर होता था।

हमारे देशकी तरह चीनका भूतकाल भी बहुत उज्ज्वल है। चीनने ही छापनेकी कलाकी खोज की। जिस समय यूरोपके लोग पेड़ोंकी

छालें पहनकर जंगलोंमें भटका करते थे उस समय चीनी लोगोंने कीमती पुस्तकें लिखीं और छापीं। कागज़ बनाना भी चीनने ही दुनियाको सिखाया। होका अर्थात् दिग्दर्शक यन्त्रकी खोज भी चीनमें ही हुई। रेशमके वस्त्र भी चीनने ही सबसे पहले बुने और सदियोंतक अकेले ही सारी दुनियाको दिये। ऐसे ही वयोवृद्ध और ज्ञानवृद्ध देशको अब हम देखनेवाले हैं।

उत्तरमें हिमालयकी दुर्लंघ्य दीवार और दूसरी तरफ़ समुद्रका घेरा : इस भौगोलिक परिस्थितिके कारण हिन्दुस्तान शान्तिसे अपनी संस्कृतिका संवर्धन और विकास करता रहा। चीनकी चारों सीमाएँ भी इसी तरह उसके लिए अनुकूल हुईं। दक्षिणमें हिमालय जैसा संतरी, पूर्वमें तीन साढ़े तीन हज़ार मील तक फैले हुए प्रशान्त महासागरका पहरा, उत्तरमें बहुत ठंडे और वीरान प्रदेश साइबीरियाकी दीवार और पश्चिममें ऊँचे ऊँचे पर्वतों और निर्जल मरुस्थलोंका आसरा। इससे इतना विशाल होनेपर भी चीन देश कुछ समय पहले तक सन्दूककी तरह बन्द रहा और इसीलिए वह अपने देशकी संस्कृतिको शुद्ध रख सका। इस सुरक्षित स्थितिका बुरा परिणाम यह हुआ कि इस प्रकारका घमंड चीनी लोगोंको हो गया कि हमारी ही संस्कृति श्रेष्ठ है और दूसरोंकी संस्कृति और विचार हीन हैं। और इसीलिए आजकलके तरुण बलशाली राष्ट्रोंने जब तक थप्पड़ मारकर नहीं जगा दिया तबतक चीन अफीमके नशेमें भूतकालके स्वप्नोंमें ही मस्त रहा। चीनमें पितृ-पूजाका बड़ा जोर है, शायद इसीलिए भविष्यकालकी ओर न देखते हुए भूतकालकी ओर ही चीनियोंकी दृष्टि जमी रही।

चीन साधारण तौरपर एक बड़ा भारी मैदान है। बीच-बीचमें उसमें पर्वत-श्रेणियाँ फैली हुई हैं और उनमेंसे बड़ी बड़ी नदियाँ निकली

हैं जिनमेंसे जगह जगहपर नहरें काटी गई हैं। वहाँकी युनोहो (=बड़ी नहर) नामकी एक नहर बारह सौ मील लंबी है और अनुमान है कि वह ईसाकी पाँचवी सदीमें बनाई गई थी। यांगत्सीक्यांग चीनकी मुख्य नदी है। यह चीनके मैदानमें तीन हज़ार मील बहकर समुद्रमें गिरती है। इसकी तथा दूसरी नदियोंकी अनेक शाखाएँ हैं और उनमें अनेक नदियाँ आकर मिलती हैं। चीन नदियों और नहरोंका देश है। चीनके प्रसिद्ध प्रसिद्ध शहर नदियोंके किनारोंपर ही बसे हुए हैं। चीनमें शुरूसे ही नदियाँ आने-जानेके राजमार्ग रही हैं।

पीला देश

चीनके पश्चिमके पर्वतोंपर एक तरहकी पीले रंगकी मिट्टीकी तहोंपर तहें जम गई हैं। पर्वतोंमेंसे निकलनेवाली नदियाँ इस पीली काँपको अपने बहावके साथ मैदानमें ले आती हैं और उन नदियों तथा उनकी शाखा-नदियोंके द्वारा यह पीली काँप चीनके मैदानोंमें फैल जाती है। इस काँपसे वहाँकी जमीन बहुत उपजाऊ हो गई है, क्योंकि इस मिट्टीमें चुनकंकड़ और सड़े हुए पत्तोंका अच्छेसे अच्छा खाद रहता है। यांगत्सीक्यांग और होआंगहो नदियोंमें तो यह काँप इतनी ज़्यादह होती है कि उनका पानी रबड़ी जैसा गाढ़ा रहता है। होआंग-होका अर्थ ही पीली नदी है। यह नाम पड़नेका कारण भी यह पीली काँप ही है। इन नदियोंमें इतनी काँप होती है कि उसके कारण प्रशान्त महासागरमें मिलते समय समुद्रका सुन्दर नीला पानी तीस-चालीस मील तक पीला हो जाता है। देशको समृद्ध बनानेवाली इस मिट्टीके कारण ही चीनमें पीले रंगका महत्त्व बढ़ गया है। चीनके एक बादशाहकी पदवी 'होआंग टी' अर्थात् 'पीली मिट्टीका स्वामी' थी। चीनके झंडेका रंग भी पीला है। चीनी लोग सुन्दर वस्तुओंको प्रेमसे पीला रंग देते

हैं। नदियोंके प्रवाहमें महासागरकी ओर जाती हुई इस काँपको चीनी किसान बहुतसे उपायोंसे रोककर अपनी खेतीके काममें लाते हैं। मिस्रदेशके फेल्लाओंकी तरह वे बारीक बुने हुए टोकरोंमें नदीकी काँपका पानी भर भर कर उसे अपनी छोटी छोटी नालियोंमें डालते हैं। वहाँसे वह उनके खेतोंमें चला जाता है। वे झरनोंकी भी काँप खोदकर खेतोंमें ले जाते हैं। मिस्रकी तरह चीनके किसान भी नदियों और नहरोंमें भिन्न भिन्न तरहके रहँट लगाकर काँपका पानी खेतोंमें सींचते हैं। इस सिंचाईके काममें
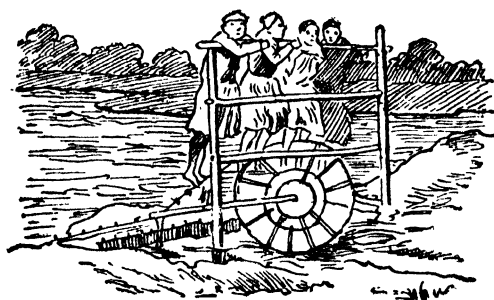
चीनी रहँट

हजारों चीनी किसान और उनके भैंसे लगे रहते हैं। एक रहँट ऐसे मज़ेका होता है कि उसमें एकपर एक ऐसे अनेक पहिए होते हैं। किसान एक पहिएपर खड़ा होता है कि वह नीचे चला जाता है और दूसरा पहिया ऊपर आ जाता है। तब वह दूसरे पहिएपर पाँव रखता है, और तीसरा ऊपर आ रहता है। इस प्रकार वह लगातार अपने पाँवोंसे रहँट घुमाता रहता है। इससे तुम समझ जाओगे कि चीनी किसान कितना मेहनती और चतुर होता है। खादका उपयोग करनेमें तो चीनी किसानकी बराबरी कोई कर नहीं सकता। वह खादके काममें आनेवाली एक भी चीज़को व्यर्थ नहीं जाने देता है। यहाँ तक कि आलूकी छालको भी वह सँभाल कर रख लेता है। सिरके बालोंको भी वह फेंक नहीं देता। इतना ही नहीं, घूरोंमेंसे भी वह काम-लायक चीज़ें ढूँढकर खादके काममें ले आता है।

चीनकी खेती

चीनमें पशु बहुत कम हैं। गौएँ और बैल तो लगभग नहींके बराबर हैं। इसका कारण यह है कि पशुओंके लिए वहाँ चरागाह ही नहीं हैं। पशु यदि हैं तो भैंसे और भैंसे ही खेत जोतने, बीज बोने, कोल्हू चलाने और चरस खींचनेका काम करते ह। उत्तर चीनमें हलोंमें घोड़ों, गधों और ऊँटोंका भी उपयोग होता है। कहीं कहीं तो ये भी नहीं मिलते। अक्सर हलमें एक तरफ़ तगड़ा आदमी और दूसरी तरफ़ गधा जुता हुआ देखा जाता है। एक जगह किसी मुसाफ़िरने एक किसानके दो लड़कों और एक लड़कीको हलमें जुता हुआ देखा था। ये तीनों भाई-बहिन बड़ी मुश्किलसे हल खींच रहे थे और उनके शरीरमेंसे पसीना बह रहा था। जब पशु ही न मिलें तो बेचारा किसान क्या करे?

किसानोंके औज़ार भी अभीतक पुराने ही ढगके हैं। लोहेके हल या अन्य भाप या तेलसे चलनेवाले खेतीके उपयोगी यंत्र भी चीनमें बहुत नहीं हैं। यहाँकी तरह चीनमें भी पिताकी मालिकीके खेत और जमीनें सब लड़कोंमें बँट जानेका रिवाज होनेसे खेतोंके छोटे छोटे टुकड़े हो गये हैं और इसलिए वहाँ यंत्रोंका उपयोग करना कठिन हो गया है।

ऐसी कठिन परिस्थितिमें भी चीनी किसान कॉंप और दूसरे खादोंकी मददसे अपनी उपजाऊ जमीनमेंसे सालमें तीन फ़सलें काटता है। तीन-चार हज़ार मीलका समुद्र-तट होनेके कारण चीनके भिन्न भिन्न भागोंका जलवायु भिन्न भिन्न प्रकारका है और फ़सलें भी तरह तरहकी होती हैं। दक्षिणी भाग उष्ण कटिबंधमें होनेसे वहाँ कपास, तमाखू और चावल ज़्यादह होता है। उत्तरमें गेहूँ, मकई और द्विदल अन्न (=दालें) होते हैं। यांगसेक्यांगकी घाटीमें शहतूतके लाखों पेड़

उगाए जाते है। इन पेड़ोंके पत्तोंको रेशमके कीड़े खात ह। रेशमके कीड़े पालकर उनसे रेशम तैयार करना चीनका मुख्य व्यवसाय है। अफीमकी खेती भी चीनमें बहुत होती है।

चाय और बाँस

चाय चीन देशकी मुख्य उपज है। वहाँसे हरसाल लाखों पौंड चाय विदेशोंको जाती है। इसके अलावा वहाँ भी चायकी बहुत खप है। याँगसेक्याँगके दक्षिणमें चायके बग़ीचे हैं। चीनी लोग सालमें तीन बार चायकी पत्तियाँ तोड़ते हैं। पहले पहल वसंत ऋतुमें जो पत्तियाँ तोड़ी जाती हैं वे बहुत कोमल होती हैं, इसलिए उनकी कीमत ज़्यादह मिलती है। पत्तियोंको तोड़कर उन्हें धूपमें सुखाया जाता है। इसके बाद धीमी धीमी आँचपर सेंक कर फिर दुबारा धूपमें डाला जाता है। यदि ऐसा न किया जाय तो हरी रसवालीं पत्तियाँ सड़कर बिगड़ जायँ। चीनी किसान पत्तियोंके सूख जानेपर उन्हें बड़े बड़े सन्दूकोंमें बन्द कर देते हैं और नदियोंसे नावों द्वारा समुद्रके बन्दरगाहोंको भेज देते हैं।

किरगिज़ लोगोंके वर्णनमें चायकी ईंटोंका उल्लेख किया गया है। वे ईंटें चीनके कारखानोंमें ही तैयार होती हैं। पहले चायके पत्तोंको पीस कर उनका आटा तैयार करते हैं, फिर भाप देकर उसे नरम बनाते हैं और अन्तमें ईंटोंके आकारके साँचोंमें ढालकर जोरसे दबाते हैं। इस प्रकार चायकी ईंटें तैयार होती हैं। बेचनेके लिए इन ईंटोंको ऊँटोंपर लाद कर पश्चिमके रेगिस्तानकी ओर भेजा जाता है। तिब्बतमें तो इन ईंटोंका इतना महत्त्व है कि वहाँ इनका सिक्केके तौरपर उपयोग होता है।

चीनमें कमाईका दूसरा बड़ा साधन बाँस है। वहाँ चालीस-पचास

तरहके बाँस होते हैं और वे चालीससे लेकर अस्सी फुटतक लम्बे होते हैं। बाँस बहुत ही उपयोगी वस्तु है। चीनी किसानोंके घरोंकी छतें बाँसकी ही होती हैं। बहुतसे घरोंकी दीवारें भी बाँसकी होती हैं। मोरियोंके नल भी बाँसके और घरोंकी कुरसी-मेजें भी बाँसकी। जिन टोकरियोंका वे घड़ों और डोलोंकी जगह उपयोग करते हैं वे भी बाँसकी होती हैं। कटोरियाँ, प्याले, पीकदानियाँ, रकाबियाँ वगैरह भी बाँसकी बनाई जाती हैं। सोनेके लिए चटाइयाँ, छतरीकी डंडियाँ, कन्दील, पंखे वगैरह भी बाँसके। धूप और वर्षामें बाँसकी ही टोपियाँ और बाँसके ही रेन-कोट। रातको सिरहाने रखनेके लिए तकिए भी बाँसके ही। कंघियाँ बाँसकी, छड़ियाँ बाँसकी और फुटरूल भी बाँसके। बाँसका बारीक आटा बनाकर और उसे अच्छी तरह उबालकर कागज़ बनाया जाता है। कलमें और दावातें भी बाँसकी होती हैं। बाँसकी नरम कोंपलोंका अनेक दवाइयोंमें उपयोग होता है। संक्षेपसे चीनमें बाँसका क्या क्या बनता है यह कहनेके बदले बाँसका क्या क्या नहीं बनता यह कहना आसान है। कहना चाहिए कि बाँस चीनी लोगोंकी कामधेनु है।

पालोंका जंगल

चीनमें आने-जानेके बहुत साधन हैं। आजकल रेलगाड़ी भी हो गई है पर इससे पहले नदियों और नहरोंमें जहाजों और नौकाओं द्वारा मुसाफ़िरी करने और माल ढोनेकी पद्धति थी और वह अब भी है।

चीनमें सर्वत्र नदियों और नहरोंका जाल बिछा हुआ है। कई जगह तो उनकी छोटी छोटी नालियाँ घर घर तक पहुँचाई गई हैं। इन नदियों और नहरोंमें जहाजों और नावोंकी बड़ी भीड़ रहती है।

यांगसेक्यांग नदीमें तो महासागरके बड़े बड़े जहाज़ मुहानेसे दूर देशके बिल्कुल अन्दरके भागमें हज़ारों मीलतक चले आते हैं। दूसरी नदियोंमें भी असंख्य आकार-प्रकारके जहाज और नौकाएँ मनुष्यों और मालको रात-दिन ढोती रहती हैं। कहते हैं कि चीनमें जितनी नौकाएँ हैं उतनी सारी दुनियाके देशोंकी मिलकर भी न होंगीं !

चीनके सारे शहर नदियोंके किनारोंपर ही बसे हैं। हरेक शहरके पास इतनी अधिक नौकाएँ होती हैं कि दूरसे पालोंका जंगल-सा प्रतीत होता है। देशके भिन्न भिन्न भागोंमें भिन्न भिन्न तरहकी नौकाएँ दिखाई देती हैं। हरेक नौकापर दो रंगीन आँखें लगी होती हैं। आँखोंके बिना नौका देखे कैसे, और चले भी कैसे? चीनी लोगोंका यह वहम बड़ा विचित्र-सा लगता है। कहते हैं कि चीनमें जब पहले पहल रेलगाड़ी शुरू हुई तब एंजिनके आगे भी दो आँखें लगानेका चीनी लोग हठ ले बैठे थे !

नावमें मुसाफिरी करते समय रास्तेमें भिखारियोंकी नावें दिखाई देती हैं। जब चीनमें नदियाँ ही राजमार्ग हैं, तब उनपर भीख माँगनेके लिए भिखारी क्यों न आवें? ये भिखारी अपनी नावोंमें बैठकर भीख माँगते फिरते हैं !

चीनमें लाखों आदमी नदीमें नावोंपर घर बनाकर अपने बाल-बच्चोंके साथ रहते हैं। केवल पर्ल नामकी नदीमें ही तीस लाख आदमी रहते हैं। बच्चे हमेशा नावमें ही खेलते-कूदते हैं। खेलते खेलते वे नदीमें गिरकर न डूब जायँ इसके लिए उनकी पीठपर छोटा-सा डब्बा बँधा रहता है। लड़के नदीमें गिर जानेपर चिल्लाते हैं और तब कोई भी आकर उन्हें पानीसे बाहर निकाल लेता है।

पेकिंगकी समृद्धि

अब हम चीनकी राजधानी पेकिंगको चलें और देखें कि वहाँके लोग किस तरह रहते हैं। पेकिंग शहरके चारों ओर एक बड़ी भारी शहरपनाह या परकोटा है। यह परकोटा साठ फुट चौड़ा है जिससे उसपर एक साथ चार बैलगाड़ियाँ आसानीसे जा सकती हैं और ऊँचा भी एक चार-मंजिले घर जितना है। परकोटेमें जगह जगह ऊँचे बुर्ज़ हैं और उनके नीचे सोलह दरवाज़े हैं। चीनमें इस तरहके मज़बूत परकोटोंवाले लगभग एक हज़ार शहर हैं।

चलो, अब हम शहरके दरवाज़ेसे अंदर चलें। देखो न, ये घर कैसे विचित्र हैं! सब एक-मंजिले हैं। दो-मंजिले घर कहीं दिखाई ही नहीं देते। सभी घर भूरे रंगकी ईंटोंके बने हुए हैं और उनपर काले रंगकी खपरैल है। रास्तेमें बड़ी भीड़ है। वे देखो, भयंकर तातार लोग बालोंवाले और दो कोहानवाले ऊँटोंपर बैठे चायकी ईंटें लादे हुए उत्तरकी ओर मंगोलियाको जा रहे हैं। और उन व्यापारियोंको देखो, गधोंपर बैठकर अपनी अपनी दूकानोंकी ओर जा रहे हैं। अमीर लोग रंग-बिरंगे कपड़े पहिने खच्चरगाड़ियोंपर लदे हैं और कोई कोई घोड़ोंपर भी सवार हैं।

छोटे पाँव और लम्बे नाखून

उन स्त्रियोंको देखो, छोटे बच्चोंकी तरह नौकरोंकी पीठपर बैठकर कहाँ जा रही हैं? वे पैदल क्यों नहीं चलतीं? उन्होंने जन्मसे ही अपने पाँव दबाकर, खींचकर और खोड़ेमें डालकर इतने छोटे कर डाले हैं कि वे सीधी चल ही नहीं सकतीं। बहुतोंको तो चलना ही नहीं आता। देखो उधर, कुछ स्त्रियाँ लकड़ी टेक टेककर किसी तरह टेढ़ी-सीधी चल रही हैं। तीन वर्षकी उम्रसे ही उनके

पाँवकी चार उँगलियाँ एड़ीकी ओर खींचकर पट्टीसे कसकर बाँध दी जाती हैं और नहानेके वक्तके सिवाय और कभी वे खोली नहीं जातीं। मरते दम तक बेचारीं अपने पाँवोंको नहीं खोलतीं। शुरू शुरूमें इन स्त्रियोंको इससे बहुत कष्ट होता है, परन्तु फ़ैशनके लिए वे सब दुःख चुपचाप सहन कर लेती हैं! उनके पाँव साधारण तौरपर मुट्ठी जितने ही होते हैं। देखो, उधर कोई अमीर आदमी पालकीमें बैठा जा रहा है। पालकीके डंडे कंधोंपर रखे उसके नौकर जल्दी जल्दी चल रहे हैं। पर उसके हाथके नाखून देखे? अरे बाप रे! ये नख हैं या नखेश्वर! चीनके अमीरोंमें नाखून बढ़ानेका एक फ़ैशन ही है। उनके नाखून एकसे छः इंच तकके होते हैं। बहुत-सी स्त्रिया नाखून टूट न जायँ इसलिए उनको चाँदीसे मढ़वा लेती हैं। गरीब नाखून नहीं बढ़ाते क्योंकि उन्हें अपने पेटके लिए काम करना पड़ता है।
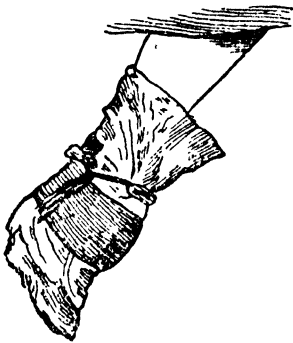
चीनी स्त्रीका बँधा हुआ पाँव

लंबे नाखूनोंका फ़ैशन

और ये ठेलागाड़ियाँ किस लिए हैं? केवल यहीं नहीं, चीनमें सभी जगह ये दिखाई देती हैं। इस गाड़ीके बीचों-बीच पहिया होता है और उसके दोनों तरफ़ बैठनेकी या सामान रखनेकी जगह होती है। पीछेसे गाड़ीवाला उसे आगे धकेलता है। देखो, सामनेसे पों-पों

करती हुई मोटर आ रही है और देखो, इन ठेलागाड़ियों, खच्चरगाड़ियों और ऊँटोंको पीछे छोड़कर आगे निकल जाती है। यह दुनिया ऐसी ही है।

सड़कपर कितने प्रकारके लोग दिखाई देते हैं! भेड़ोंकी खालके कोट और टोपियाँ पहने हुए उन तार्तारोंको देखो। पीला चोगा पहने और सिर मुँड़ाये हुए उस तिब्बती भिक्षुको देखो। उस स्त्रीका पीला रेशमी पाजामा और रेशमी जूतियाँ देखो। रास्तेपर जगह जगह बिजलीकी बत्तियाँ हैं। इन्हीं स्थानोंपर पहले रंग-बिरंगे काग़ज़के कन्दील टँगे रहते थे।

बाजारोंकी परंपरा

चलो, अब हम बाजार देखें। यहाँ भी हरेक तरहकी चीज़ोंके अलग अलग बाज़ार हैं। पुस्तकोंका बाज़ार, टोपियोंका बाज़ार, जूतोंका बाज़ार, चीनी-मिट्टीके बर्तनोंका बाज़ार, कोयले और लकड़ियोंका बाज़ार, तालोंका बाज़ार, आदि। आगे एक विचित्र बाज़ार है जहाँ केवल मुर्दोंको गाड़नेके सन्दूक ही बेचे जाते हैं। चीनके आदमी मरनेके बहुत साल पहले ही अपने शवको दफ़नानेके लिए सन्दूक मोल ले रखते हैं और उसे अपने मित्रोंको बड़े उत्साहसे दिखाते हैं। लड़के अपने माँ-बापको भी शवके उपयोगके ये सन्दूक बड़े प्रेमसे भेंट करते हैं! उसके बाद वह पक्षियोंका बाजार देखो। चीनी लोगोंको कबूतर और छोटे छोटे पक्षी पालनेका बड़ा शौक होता है। राह चलनेवाले लोगोंके हाथकी छड़ीपर एकाध पक्षी तो बैठा ही रहता है। उसका एक पाँव रस्सीसे बँधा रहता है जिससे वह थोड़ा ऊपर उड़कर फिर लकड़ीपर आ बैठता है।

परकोटेके अंदर परकोटा

तुम्हें वह मटन-मार्केट देखना है ? वहाँ ऊँट, सूअर, बकरे, मुर्गे, बत्तक आदिका मांस मिलता है। बहुतसे मेंढोंकी पूँछें इतनी मोटी होती हैं कि वे उन्हें उठा भी नहीं सकते। इन पूँछोंका मांस बहुत स्वादिष्ट माना जाता है। और देखो, वह मछली-बाज़ार है। वहाँ लगभग एक हज़ार तरहकी मछलियाँ बिकती हैं।

चलो अब हम दूसरी ओर चलें। अरे यह फिर दूसरा परकोटा कैसा ? परकोटा तो शहरके चारों ओर होता है तब यह दूसरा परकोटा काहेका ? बात यह है कि पेकिंग एकके अंदर एक ऐसे तीन शहर मिलकर बना है और उस हरेक शहरके चारों ओर एक एक परकोटा है। हमने जो बाज़ार अभी देखे वे चीनी शहरके थे। इस दूसरे परकोटेमें तार्तार शहर है। तार्तार जातिके लोगोंने उत्तरकी ओरसे आक्रमण करके बहुत समय पहले पेकिंगपर अधिकार कर लिया था और वे इस भागमें बस गये थे। चीनमें तार्तार बादशाहका राज्य बहुत समय तक रहा। इस तार्तार शहरके अन्दर तीसरा परकोटा है और उसके अन्दरका शहर बादशाही शहर कहलाता है। इस शहरके राजमहलोंमें चीनी बादशाह अपने हजारों नौकर-चाकरोंके साथ रहा करते थे। बादशाहके प्रति लोगोंके हृदयमें बड़ा आदर-भाव था। लोग उन्हें देवताओंके पुत्र कहते थे। बादशाहके सामने हमेशा घुटने टेककर खड़े रहनेकी पद्धति थी। बादशाह यदि छोटा लड़का भी हो तो भी उसके शिक्षकको घुटनेके बल खड़े रहकर पढ़ाना पड़ता था।

पर अब यह हालत नहीं रही है। आज चीन जाग चुका है और उसने अपने बादशाहको गद्दीपरसे उतार कर प्रजातंत्र राज्यकी

स्थापना कर दी है। पहले जिस बादशाही नगरीमें जानेकी किसीकी हिम्मत न होती थी वहाँ आज सरकारी आफ़िस हैं। तो चलो, अब हम बादशाही शहरमें चलें। वह देखो, बीचमें एक सरोवर है और उसके दोनों तरफ़ महल हैं। महलोंकी सुनहरी खपरैल सूर्यके प्रकाशमें कैसी चमक रही है! इन महलोंमें राज्यके भिन्न भिन्न महकमोंके आफ़िस हैं। यह देखो, अँग्रेजी पोशाकमें सजा हुआ कोई बड़ा चीनी अफ़सर मोटरमेंसे उतरा। चीनके हज़ारों आदमी अमेरिका जाकर शिक्षा ले आये हैं और वे ही अब राज्यके बड़े बड़े ओहदोंपर काम करते हैं।

दुनियाका एक आश्चर्य

हमने चीनकी राजधानी देखी। पेकिंग शहरके चारों ओरका परकोटा देखकर हमें चीनी लोगोंकी कुशलतापर आश्चर्य हुआ पर

चीनकी प्रसिद्ध दीवार

इससे भी अधिक आश्चर्यजनक एक परकोटा चीनमें है और वह किसी एक शहरके चारों ओर नहीं बल्कि चीनकी सारी उत्तरी

सरहदको घेरे हुए है। बहुत समय पहले जंगली और क्रूर तातार लोग उत्तरकी ओरसे चीनपर चढ़ाइयाँ किया करते थे। तब उनसे बचनेके लिए समुद्रसे लेकर पश्चिमके रेगिस्तान तक यह पन्द्रह सौ मील लम्बी दीवार खड़ी की गई थी। यह दीवार तीस फुट ऊँची और पचास फुट चौड़ी है! दीवारके दोनों बाजू मजबूत और बड़ी बड़ी ईंटोंके बने हुए हैं और बीचका भाग मिट्टी और पत्थरसे भरा गया है। यह पन्द्रह सौ मील लम्बी मजबूत दीवार केवल सपाट मैदानपर ही नहीं परन्तु ऊँची ऊँची पर्वत-श्रेणियोंपर भी चिनी गई है। कई जगह तो यह पहाड़ोंकी ऊँची और सकरी चोटियोंपरसे ले जाई गई है। उनमेंसे एक चोटी तो पांच हज़ार फुट ऊँची है। मालूम नहीं, ऐसी कठिन और ऊँची जगहोंपर पत्थर और ईंटें वगैरह कैसे ले गये होंगे और वहाँ चिनाई कैसे की गई होगी। कहते हैं कि बकरियोंके गलेमें ईंटें बाँध बाँधकर उन्हें ऊपर चढ़ाया जाता था। मिस्रके पिरामिडोंकी तरह यह दीवार भी एक महान् आश्चर्यजनक वस्तु है। कहते हैं कि इस दीवारको बनानेके लिए लाखों मज़दूर कामपर लगाये गये थे। और जब यह बाँधी जा रही थी तब इसको और मज़दूरोंको तातारोंके आक्रमणसे बचानेके लिए तीस लाख सिपाही तैनात किये गये थे। यह महान् कार्य केवल दस वर्षमें ही पूरा हो गया था। दीवार खूब चौड़ी है और एक बड़ी मोटरगाड़ी उसपरसे आसानीसे जा सकती है। दीवारपर जगह जगह दो दो या तीन तीन मंज़िलके बुर्ज़ है और उनमें शत्रुओंपर नजर रखने और बन्दूकें चलानेके लिए छेद हैं।

उद्योगी प्रजा

हमने चीनकी एक बड़ी भारी अजब चीज़ देख ली। अब हम

उनके भिन्न भिन्न प्रकारके उद्योग-धंधों और कला-कौशलका निरीक्षण करेंगे। चीनी लोग बड़े उद्योगी हैं। सूर्योदयसे लेकर राततक उनके काम चलते ही रहते हैं। चीनके हरेक घरको एक कारखाना ही समझना चाहिए। अपने घरोंमें ये लोग कपड़ा बुनना, छतरी-पंखे बनाना, कागज़ बनाना, कुरसी, मेज़, और मिट्टीके बर्तन बनाना, ताँबे-पीतलके बर्तन बनाना आदि अनेक काम दिन-भर आधुनिक यंत्रोंकी मददके बिना ही करते रहते हैं। इतनी विशाल जन-संख्या होनेपर भी चीनको विदेशोंसे एक भी चीज़ मोल नहीं लेनी पड़ती। इसीसे हम उनकी उद्योगशीलताका अनुमान कर सकते हैं।

पुराने घरेलू धंधोंकी जगह हालमें चीनमें सूती और रेशमी कपड़ोंकी बड़ी बड़ी मिलें खड़ी हो गई हैं। इसी तरह लोहेके भी कारखाने खुल गये हैं। यांगसीक्यांगके किनारे हन्यांगमें लोहे और फौलादका एक बड़ा भारी कारखाना है जिसमें पच्चीस हजार आदमी काम करते हैं। इस कारखानेमें तैयार की गई रेलकी पटरियाँ सारे चीनकी रेलोंमें काम आती हैं। पत्थरका कोयला और लोहा आजकल सभ्य देशोंमें संपत्तिका मुख्य साधन समझा जाता है। इसी साधनके कारण अमेरिका, इंग्लैण्ड वगैरह देश इतने संपन्न हो गये हैं। चीनमें लोहे और कोयलेकी खानोंकी कमी नहीं, इसलिए आगे चलकर यह देश भी सम्पन्न और बलवान् हो जायगा, इसमें शंका नहीं।

चीनकी विशेष प्रसिद्धि रेशमी कपड़ों और चीनी-मिट्टीके बर्तनोंके कारण है। कुछ समय पहलेतक चीन ही सारी दुनियाको रेशमी कपड़े देता था। संस्कृतभाषामें रेशमको 'चीनांशुक' कहते हैं जिसका अर्थ होता है 'चीनका कपड़ा'। इतना ही नहीं, कई जगह 'चीन' शब्दका ही अर्थ रेशमी वस्त्र किया गया है।

रेशमके कीड़ोंकी जीवन-कथा

रेशम कपासकी तरह पौधेमें नहीं लगता। वह एक प्रकारके छोटे छोटे कीड़ोंसे तैयार होता है। रेशमके कीड़ोंके छोटे छोटे राईके आकारके और राखके रंगके अंडे होते हैं। ये अंडे शुरूमें एक ठंडे कमरेमें रखे जाते हैं। जब अंडे फूटकर कीड़ोंके बाहर निकलनेका समय होता है तब उन्हें गर्म कमरेमें चटाईपर फैला देते हैं। इस कमरेकी गर्मी अमुक तापांशतक रहनी चाहिए। पर इसके लिए चीनी लोग थर्मामीटरका (=ताप-मापक यंत्रका) उपयोग नहीं करते। एक आदमी कपड़े उतारकर नंगा होकर कमरेमें चला जाता है और शरीरको लगनेवाली गर्मीपरसे निश्चित कर लेता है कि वहाँका तापमान कितना है। यदि गर्मी कम होती है तो आग जलाकर उसे बढ़ा दिया जाता है। हरेक कीड़ेमेंसे बाल जैसा एक पतला कीड़ा बाहर निकलता है जो बहुत ही भूखा होता है। वह सहतूतके पेड़के कोमल कोमल पत्तोंको खाता है और तेजीसे बढ़ता हुआ बत्तीस दिनमें छोटी उँगलीके बराबर मोटा और दो इंच लम्बा हो जाता है। इस अरसेमें वह चार-पाँच बार नींद लेता है और उस समय अपने शरीरपरकी केंचुली उतार देता है। पूर्ण विकास हो चुकनेपर यह कीड़ा खाना बन्द कर देता है और मुँह ऊँचा करके घर्र-घर्र आवाज़ करता हुआ फिरने लगता है। इस समय इसके मुँहके बारीक छिद्रोंमेंसे एक तरहका चिकना पदार्थ निकलता है जो हवा लगनेसे गाढ़ा हो जाता है। यही हमारा रेशम है। कीड़ा घर्र-घर्र घूमता हुआ रेशमके उन बहुत ही बारीक तन्तुओंसे अपना शरीर ढक लेता है और इस तरह उन तन्तुओंसे तैयार हुए कोमल घरमें सो जाता है। तीन सप्ताहकी कुम्भकर्णी नींद ले चुकनेके बाद वह तितलीके रूपमें

बाहर आता है। इनमेंकी मादा तितलियाँ एक बारमें चार सौ पाँच सौ अंडे देती हैं और फिर मर जाती हैं। फिर अंडोंमेंसे कीड़े निकलते हैं। वे तन्तुओंके घर बनाते हैं और उनमें सो जाते हैं। इस प्रकार यह चक्र चलता रहता है।

चीनी लोग इन तन्तुओंके घरों अथवा कोशोंको गरम पानीमें भिगोते हैं और रेशोंको अलग करते हैं। फिर बहुतसे रेशोंको इकट्ठा करके रेशमके धागे तैयार करते हैं। इन्हीं धागोंसे कपड़ा तैयार होता है। चीनमें रेशमके कीड़ोंकी खुराकके लिए सहतूतके पेड़ोंकी खेती की जाती है। चीनकी महारानियाँ भी दूसरी स्त्रियोंके सामने आदर्श रखनेके लिए रेशमके कीड़े पालती थीं और बड़े चावसे उन्हें सहतूतके पत्ते खिलाती थीं। पहले तो हाथके करघोंपर ही कपड़ा तैयार होता था पर अब रेशमी कपड़ोंकी मिलें भी खुल गई हैं और उनमें यंत्रोंद्वारा कपड़ा तैयार होता है।

चीनी-मिट्टीके बर्तनोंकी कला

चीनका दूसरा मुख्य व्यवसाय चीनी-मिट्टीके बर्तन हैं। चीनको अँग्रेजीमें 'चाइना' कहते हैं। चीनी-मिट्टीके बर्तन यूरोपमें इतने अधिक प्रसिद्ध हैं कि उनका नाम ही 'चाइना' पड़ गया है। यद्यपि अब यूरोपमें भी बहुत जगह चीनी-मिट्टीके सुन्दर नक्काशीवाले बर्तन तैयार होते हैं, तो भी कहते उन्हें 'चाइना' ही हैं। बर्तन बनानेकी मिट्टी बहुत बारीक और सफ़ेद रंगकी होती है। पहले मिट्टीमेंसे रेत और कंकर निकाल दिये जाते हैं, फिर उसमें पानी डालकर उसे भैंसों और आदमियोंसे खूब गुँधवाकर मुलायम बनाया जाता है। इसके बाद कुम्हार उसे अपने चाकपर चढ़ाकर तरह तरहके बर्तन बनाता है। ये बर्तन धूपमें सुखाकर लकड़ीकी भट्टीमें डाले जाते हैं। भट्टीमें तीन दिन तक

दहकती रहती है और फिर बुझा दी जाती है। भट्टी बुझ जानेके बाद भी ठंडी हवासे बर्तन फूट न जायँ इसलिए वे उसीमें चौबीस घंटे तक रहने दिये जाते हैं। इस प्रकार अच्छी तरह पके हुए बर्तन चित्रकारके हाथमें दिये जाते हैं। एक बर्तनपर चित्र खींचनेके लिए दस-बारह चितेरोंकी ज़रूरत पड़ती है। एक चित्रकार पेड़का चित्र खींचता है, दूसरा पक्षी बनाता है और तीसरा फूल बनाता है। इस प्रकार भिन्न भिन्न चित्र बनते हैं। चित्रकारी हो जानेके बाद, फिर एक बार ये बर्तन भट्टीमें डाल दिये जाते हैं और पकाये जाते हैं। इस तरह इन बर्तनोंका रंग और इनकी चमक बहुत सुन्दर हो जाती है। चीनके पुराने बर्तन यूरोपमें अब भी बड़ी कीमतपर बिकते हैं। एक प्याला अथवा एक सुराही आसानीसे आठ-दस हज़ार रुपयेमें बिक जाती है!

मांसाहारी चीनी

साधारण तौरपर चीनी लोग ठिंगने कदके और पीले रंगके होते हैं। उनके शरीरपर बहुत बाल नहीं होते। उनकी मूँछें चूहेकी पूँछ जैसी होती हैं। सिरकी चोटीको वे अपने यहाँके मद्रासियोंकी तरह गूँथकर पीठपर लटका रखते हैं। इन लोगोंकी गालकी हड्डियाँ ऊपरको उभरी हुई होती हैं और आँखें छोटी तथा बादामके आकारकी तिरछीं।

चीनियोंका मुख्य भोजन तो चावल है, परन्तु, वे चाहे जिस प्राणीका मांस खानेके लिए मशहूर हैं। बकरा, भेड़, मुर्गी, ऊँट वगैरह तो खाते ही हैं, चूहे बिल्ली तक हड़प कर जाते हैं! घरमें चूहे बहुत हों तो बिल्लीके बदले एक-दो चीनियोंको घरमें छोड़ देनेसे काम चल सकता है! चीनके गाँवोंके बाज़ारोंमें बाँसोंके ऊपर मरे हुए चूहे और मरी हुई बिल्लियाँ लटकी रहती हैं। वहाँ काले कुत्तेके मांसके ग्राहक बहुत होते हैं। वहाँके भोजन-गृहोंमें ग्राहकोंको

विश्वास दिलानेके लिए कि यह काले कुत्तेका ही मांस है, पकाते समय उसके ऊपरके चमड़ेका काले बालोंवाला एक टुकड़ा रहने दिया जाता है। सूअरके मांसके तो ये बहुत ही शौकीन होते हैं। दक्षिणी चीनमें एक जातिके सूअरको शकरकन्द खिलाकर पाला जाता है। इस एकादशी करनेवाले सूअरका मांस बहुत कीमती होता है। चीनकी नदियोंमें सैकड़ों तरहकी मछलियाँ होती हैं, वे सभी इन चीनियोंके पेटोंमें चली जाती हैं।

चीनी लोग भोजन करनेसे पहले एक गीले रूमालसे हाथ-मुँह पोंछ लेते हैं। खानेके लिए छोटे छोटे चीनी-मिट्टीके बर्तन होते हैं। वे भोजनके आरंभमें और भोजनके बाद दो बार चाय पीते हैं। उनको भोजन हमेशा गरम चाहिए। वे चाय और पानी गरम ही पीते हैं। थालीमें चावल परोसकर उसमें वे गरम पानी डालते हैं। कहीं कहीं सड़कोंपर गरम पानी बेचनेवाले दिखाई देते हैं और कई जगह उनकी दूकानें भी होती हैं। ये लोग अन्नका ज़रा भी अंश व्यर्थ नहीं जाने देते। जूठन और चायका छूँछ भी व्यर्थ नहीं जाता। शाकका पानी वे सूअरके लिए रख छोड़ते हैं। हमारे देशके कोंकण और गोवा प्रान्तमें भातका माँड़ और चावलोंका धोवन इसी तरह पशुओंके काम आता है।

रेशमी कपड़े

गरीब लोग सूती कपड़ेका ओछा कुरता और नीले रंगका चौड़ा इज़ार पहनते हैं। रेशमकी पैदायश अधिक होती है, इसलिए मध्यम स्थितिके लोग भी रेशमी कपड़े पहनते हैं। पुरुषोंके कपड़ोंपर सुन्दर कशीदा काढ़ा होता है। वे साटनकी टोपी लगाते हैं। अमीर लोग अपनी टोपियोंमें पंख खोंसते हैं और गलेमें मणियोंकी माला पहनते हैं। पुरुषोंके मोज़े घुटनोंतक होते हैं पर स्त्रियोंके छोटे

एक चीनी कुटुंब

होते हैं। चीनी स्त्रियाँ मुँहपर रंग लगाती हैं और पुरुषोंकी ही तरह पोला परन्तु गहरे रंगका इज़ार पहनती हैं। वे घुटनोंतक हरे और सिंदूरी रंगके रेशमी कोट पहनती हैं और पाँवोंमें रेशमकी छोटी छोटी जूतियाँ। उत्सवोंके समय चीनी लोग पाँवों तकका लम्बा चोगा पहनते हैं। उनके जूते कपड़ेके होते हैं और उनके ऊपर सफ़ेद पालिश की हुई होती है। बच्चोंके कपड़े प्रौढ़ आदमियों, जैसे ही होते हैं। आजकल अँग्रेज़ी ढंगके कपड़े भी पहने जाने लगे हैं।

ये लोग बोलचालमें बहुत नम्र होते हैं। बातचीतमें अपनेको हीन और जिससे बात होती हो उसे बड़ा बतलाना इनका शिष्टाचार है। उदाहरणार्थ—

पहला—आपका महल तो बड़ा सुन्दर है!

दूसरा—जी मेरी, यह टूटी फूटी झोंपड़ी है।

पहला—आपका लड़का तो बड़ा गुणवान् है।

दूसरा—जी नहीं, मेरा यह दुबला-पतला लड़का किसी कामका ही नहीं है। इत्यादि।

हमारे देशमें भी लखनऊ-दिल्ली तरफ लगभग इसी तरहका शिष्टाचार है।

चीनियोंके शौक़

चीनियोंमें पतंग उड़ानेका बड़ा शौक़ है, यहाँ तक कि बड़ी उम्रके

लोग भी पतंग उड़ाया करते हैं। ये पतंगें अनेक आकारोंकी होती हैं। मुर्गे लड़ानेका भी इन्हें बहुत शौक होता है। सिवाय इसके इनके मनोरंजनकी एक और चीज भी है: झींगुरोंकी लड़ाई। वे रास्तोंमें बैठकर बर्तनोंमें इन कीड़ोंको रखकर लड़ाते हैं। तेज़ लड़नेवाले झींगुर अधिक मूल्यमें बिकते हैं।

चीनमें नाटक दिनको होते हैं और लोगोंको टिकटोंके साथ तरबूज भी दिये जाते हैं। शौकीन दर्शक तरबूज़ खाते खाते नाटक देखते हैं। हमारे यहाँ भी कई सिनेमा और नाटक-घरोंमें टिकटोंके साथ सिगरेट दिये जानेके उदाहरण हैं।

चीनी लोग बच्चोंके लिए पालनेका उपयोग नहीं करते। वे माताओं अथवा नौकरोंकी पीठपर झोलीमें रहते हैं। जब बच्चे चलने लगते हैं तब उन्हें कपड़ेके जूते दिये जाते हैं जिनपर बिल्लीका मुँह बना होता है। उद्देश्य यह कि बच्चोंको बिल्लीकी तरह बिना गिरे चलना चाहिए।

चीनी भाषा और लिपि

चीनकी चित्रलिपि

चीनी लिपि विचित्र तरहकी है। हमारे यहाँ तो कुछ निश्चित मूलाक्षर हैं। हम उन अक्षरोंके शब्द बनाकर लिख लेते हैं। हमें अपनी भाषाके असंख्य शब्द लिखनेके लिए उक्त थोड़ेसे मूलाक्षर सीख लेना ही काफी होता है और इसीसे हमारे छोटे बच्चोंको भी एक वर्षमें थोड़ा-बहुत लिखना-पढ़ना आ जाता है। पर चीनमें इस तरह थोड़ेसे इने गिने मूलाक्षर नहीं है। वहाँ चित्रलिपि है, अर्थात् हरेक शब्दके

अलग अलग निशान हैं। जिस प्रकार एक मनुष्यका चित्र दूसरे मनुष्यके चित्र जैसा नहीं होता उसी तरह चीनी लिपिमें भी एक शब्दका निशान दूसरे शब्दके निशान जैसा नहीं होता। इसीलिए चीनी भाषाके सभी शब्दोंका लिख-पढ़ सकना लगभग असंभव है। उसमें सब मिलाकर चालीस हज़ार शब्द हैं और इतने ही उनके निशान या अक्षर हैं। वहाँके अच्छे पढ़े-लिखोंको भी लगभग हज़ार शब्द ही आते हैं। हम ऊपरसे शुरू करके नीचे तक लिखते जाते हैं पर चीनी लोग नीचेसे लिखना शुरू करते हैं। हमारी पुस्तकका जहाँ अन्तिम पृष्ठ होता है वहाँसे चीनी लोगोंका पहला पृष्ठ शुरू होता है। सभी कुछ उलटा होता है! हम उनके सब कुछको उलटा कहते हैं पर चीनी लोग हमारे ही सब कुछको उलटा कहते होंगे।

चीनी विद्यार्थियोंकी पोशाक

नई शिक्षा-पद्धति

चीनकी पुरानी पाठशालाओंमें लड़के गला फाड़ फाड़ कर पाठ याद करते हैं। लड़का जरा रुका कि उसपर मास्टरका बेत पड़ा। निबंध लिखना और चीनकी पुरानी पुस्तकोंको कण्ठाग्र करना, यही पुराना पाठ्य-क्रम था। अब तो चीनकी शिक्षा-पद्धतिमें बहुत सुधार हो गया है। इतिहास, भूगोल, पदार्थ-विज्ञान आदि सभी विषय वहाँ सिखाये जाते हैं। कवायद और खेल भी स्कूलोंमें रक्खे गये हैं। पाठशालाके तमाम लड़कोंके कपड़े एक-से और फौजी ढँगके होते हैं और आजकल तो सैनिक शिक्षा भी हरेक स्कूलमें दी जाती है। हाईस्कूल, कालिज और

विश्वविद्यालय जगह जगह खुल गये हैं और हजारों चीनी युवक, यूरोप और अमेरिकाकी भिन्न भिन्न संस्थाओंमें पढ़ने जाते हैं।

पहले स्कूलोंमें लड़कियाँ नहीं जाती थीं। पर अब कन्या-शालाएँ स्थापित हो गई हैं और लड़कियोंको गाना, सीना-पिरोना, चित्रालेखन, रोगियोंकी सेवा-शुश्रूषा, गृह-प्रबन्ध वगैरह विषय सिखाये जाने लगे हैं। अब स्कूल जानेवाली लड़कियाँ अपना मुँह नहीं रँगतीं, पाँव नहीं बाँधतीं और रंग-बिरंगे इज़ार और गहने भी नहीं पहनतीं। इतना ही नहीं, ये लड़कियाँ बिल्कुल अँग्रेज़ी ढँगकी पोशाक पहनती हैं। अनेक चीनी युवतियाँ पढ़नेके लिए अमेरिका जाती हैं। चीनमें सैनिक स्कूल भी खुल गये हैं और उनमें बन्दूक चलाना और कवायद वगैरह सारी फौजी तालीम यूरोपियन या अमेरिकन शिक्षकोंकी देख-रेखमें दी जाती है।

चीनका भविष्य उसके भूतकालकी अपेक्षा अधिक उज्ज्वल है। आधुनिक पद्धतिसे सीखी हुई चीनकी सेना दुनियाके लिए आगे चलकर बहुत भारी सिद्ध होगी। कुछ समयमें चीनकी लोहे और कोयलेकी खानोंके इर्द-गिर्द बड़े बड़े कारखानोंका जाल फैल जायगा और तब व्यापारमें भी चीनका मुकाबला करना दूसरे देशोंके लिए भारी पड़ेगा।

अभ्यास

१ कुछ उदाहरण देकर सिद्ध करो कि चीनका भूतकाल बहुत उज्ज्वल था। चीनी लोगोंकी अपने भूतकालके प्रति वृत्ति कैसी थी और इसके कौन कौनसे अनिष्ट परिणाम हुए? चीनके भविष्यके विषयमें तुम्हारे क्या विचार हैं?

२ चीनमें पीले रंगको क्यों इतना महत्त्व दिया जाता है?

३ मिस्र और चीनकी खेतोंमें पानी देनेकी पद्धतियोंकी तुलना करो।

४ चीनमें कहीं कहीं खेतीके काममें मनुष्योंको भी हलोंमें जोता जाता है, पर केनेडामें प्रायः पशुओंको भी नहीं जोता जाता। इन दोनों परिस्थितियोंके भौगोलिक कारण समझाओ।

५ 'बाँस चीनकी कामधेनु है' इस वाक्यकी यथार्थता समझाओ। हमारे यहाँ भी एक ऐसा ही उपयोगी पेड़ है, उसका वर्णन करो।

६ 'चीनकी समृद्धिका आधार वहाँकी नदियाँ हैं' यदि यह वाक्य सच्चा है, तो 'होआंगहो' नामक चीनकी नदीको 'चीनकी आफत' क्यों कहा जाता है?

७ यह कल्पना करके कि तुम पेकिंग गये हो, वहाँके लोगों, बाजारों और वहाँकी समृद्धिका वर्णन करते हुए एक पत्र अपने किसी भारतीय मित्रको लिखो।

८ चीनी स्त्रियोंके छोटे पैरों और लम्बे नाखूनोंपर एक टिप्पणी लिखो। हमारे देशकी स्त्रियोंमें भी इस प्रकारकी कोई बात हो तो लिखो।

९ चीनकी प्रसिद्ध दीवार दुनियाका आश्चर्य क्यों समझी गई? वह कब और किस लिए बनाई गई? क्या आज भी उसकी पहलेकी-सी महत्ता है?

१० रेशमके कीड़ेकी आत्म-कथा लिखो। रेशमके कीड़ोंको पालनेमें चीनी स्त्रियोंका कितना हाथ है? हिन्दुस्तानमें भी कीड़ोंसे रेशम तैयार होता है। वह कहाँ कहाँ बनता है, यह जानते हो तो लिखो। इसके अलावा क्या किसी दूसरी तरहसे भी रेशम बनता है? और किन देशोंमें बनता है?

११ चीनी लोगोंकी हमेशाकी खुराक क्या है? वे हमेशा गरम चाय और गरम पानी पीते हैं, आरोग्यकी दृष्टिसे क्या तुम इसका कोई कारण बता सकते हो?

१२ चीनी भाषाकी संस्कृत या हिन्दी भाषाके साथ तुलना करो। वहाँकी लिपिको चित्र-लिपि क्यों कहते हैं? क्या अति प्राचीन समयमें इस प्रकारकी कोई भाषा थी? आजकल चीनी लोग अपनी मातृभाषाके अलावा दूसरी कौन-सी भाषा सीखते हैं और वह किस लिए?

१३ चाय बोने, बनाने और उसके उपयोगके विषयमें संक्षिप्त टिप्पणी लिखो। भारतवर्षमें चायकी पैदायश कहाँ कहाँ होती है? दूसरे स्थानोंमें चाय क्यों नहीं होती?

---

१० ऊँचे पठारपर रहनेवाले तिब्बती

तिब्बत चीनके ही दक्षिणकी ओरका एक भाग है पर तिब्बत और चीनमें ज़रा भी समानता नहीं है। चीन सपाट मैदान है और तिब्बत समुद्रकी सतहसे दो-तीन मील ऊँचा पठार है। यह विस्तीर्ण पठार दक्षिणमें हिमालय और उत्तरमें चीनके ऊँचे पर्वतोंके बीचमें फैला हुआ है। दुनियामें आबादीवाला इतना ऊँचा पठार और कोई नहीं है और इसलिए तिब्बत दुनियाका छप्पर या शिखर कहा जाता है।

बिलकुल सूखा प्रदेश

तिब्बतका पठार बहुत ही ऊँचा, नीचा और वीरान है। उसका बहुत-सा भाग सहाराके रेगिस्तानकी तरह ऊसर है और कुछ भाग पहाड़ी है। घाटियोंमें थोड़ी-बहुत खेती होती है। समुद्रकी सतहसे बहुत ऊँचा होनेके कारण तिब्बत ठंडा है, पर ठंडा होनेपर भी सूखा है क्यों कि बंगालकी खाड़ीसे उत्तरकी ओर जो गीली मानसूनें बहती हैं, उन्हें रोककर हिमालय उनकी सारी नमी और वर्षा हिन्दुस्तानके वास्ते खींच लेता है। इसलिए ये हवाएँ हिमालयको पार करके जब तिब्बतमें पहुँचती हैं तब बिलकुल शुष्क हो जाती हैं और इसी कारण पर्वत-शिखरोंके प्रायः बर्फसे ढके रहनेपर भी यह देश सहाराके रेगिस्तानकी तरह सूखा रहता है। गर्मियोंमें मैदान और दर्रे खूब तपते हैं और सर्दियोंमें हवा इतनी सूखी होती है कि पेड़के पत्ते सूखकर चूरा हो जाते हैं और लकड़ियाँ तड़क पड़ती हैं। भोजन सड़ न जाय इसके लिए वहाँ नमकका उपयोग नहीं करना

पड़ता। मांसको घरके बाहर रक्खा कि वह सूख जाता है और फिर सड़ता नहीं।

इस देशमें चीनकी तरहके मंगोलियन वंशके ताँबेकेसे रंगवाले, गालोंकी उभरी हुई हड्डियोंवाले साठ लाख लोग रहते हैं। तिब्बती लोगोंके दाढ़ी मूँछें ज्यादह नहीं होतीं और जो थोड़े-बहुत बाल मुँहपर उगते भी हैं उनको उखाड़ डालनेके लिए वे हमेशा हाथमें चिमटी रखते हैं।

तिब्बतकी गौएँ : याक

तिब्बती लोगोंका मुख्य पेशा पशु-पालन और खेती है। पहाड़ोंकी घाटियोंमें ज़मीन आम तौरपर अच्छी होती है। वहाँ ये लोग खेती करते हैं। उनके देशमें सोना, नमक और सोहागेकी खानें हैं। इन खानोंमेंसे खोदकर वे उक्त चीजें निकालते हैं। इनके सिवाय तिब्बतमें बहुमूल्य वैदूर्य मणि भी पाई जाती है।

तिब्बती लोग भेड़ें, बकरियाँ, गधे और याक पालते हैं। याक देखनेम गौ जैसी होती है पर उसकी पूँछ घोड़े जैसी रहती है। उसके शरीरपर भैंस जैसे बाल होते हैं। वह बहुत मज़बूत होती है और चाहे जितनी ऊँचाईपर बिना पैर फिसले चढ़ जाती है। इसीलिए

तिब्बतकी गाय : याक

हिमालय-प्रदेशके मुसाफ़िर बोझा ले जानेके लिए याकका ही उपयोग करते हैं। इसके अलावा तिब्बतमें जंगली गधे, बकरे और हरिण भी पाये जाते हैं। कस्तूरी-मृग भी वहाँ होते हैं। ये लोग पशु, सोना, ऊन और सुहागा बेचते हैं और चायकी ईंटें और कपड़े चीनसे खरीदते हैं।

तिब्बती लोग भेंड़की ऊनके लम्बे घुटनोंतकके अँगरखे पहनते हैं और कमरपर ऊनका पट्टा बाँधते हैं। सर्दियोंमें बकरोंकी खालके कपड़े पहनते हैं और खालका बालोंवाला हिस्सा अंदरकी ओर रखते हैं। उन्हें लाल, बैंगनी और नीले आदि भड़कीले रंग बहुत पसंद हैं। स्त्रियाँ और पुरुष लाल और पीले रंगके घुटनों तकके ऊँचे जूते पहनते हैं। कुछ लोग कपड़ेकी टोपियाँ लगाते हैं जिनमें भेड़के बच्चोंके चमड़ेकी किनारी होती है। कुछ लोग अँग्रेजी ढँगकी टोपियाँ लगाते हैं जिनमें गलेके नीचे बाँधनेके बंध होते हैं।

गहनोंका शौक़

तिब्बती गहनोंके बड़े शौक़ीन होते हैं। पुरुषोंके बाएँ कानोंमें मोती और नीलमकी बालियाँ और स्त्रियोंके गलेमें सोने, चाँदी और ताँबेके हार होते हैं। इनके कानोंकी बालियाँ इतनी बड़ी और भारी होती हैं कि कानोंका बोझा कम करनेके लिए बालीमें एक धागा बाँधकर उसे बालोंमें खोंसना पड़ता है। तिब्बती स्त्रियोंके बालोंमें सोने, चाँदी और हीरेके अनेक गहने होते हैं।

बहुत-से तिब्बती याकके बालोंसे तैयार किये हुए तंबुओंमें रहते हैं। घर लकड़ी और पत्थरके होते हैं। घर यदि दो-मँजिले होते हैं तो नीचेका भाग पशुओंके बाँधनेके काममें लाया जाता है। उनके घरोंमें खिड़कियाँ नहीं होतीं।

तिब्बतके स्त्री-पुरुष

तिब्बती लोग गेहूँ, जौ, सेम और मटरको इकट्ठा पीस कर उसके आटेकी रोटी बनाते हैं। वे कच्चा मांस बड़े चावसे खाते हैं और उबाला हुआ मांस भी अधकच्चा ही खाते हैं। सूअर, याक और ऊँटका मांस भी खाया जाता है। ठंडे प्रदेशोंके और लोगोंकी तरह वे चर्बी भी बहुत खाते हैं। उनका रुचिकर भोजन तो ईंटोंकी चाय और मक्खनमें पानी डालकर बनाया हुआ एक पेय है। इस पेयमें वे लोग जौका आटा डालकर उसे मथानीसे खूब मथते हैं और फिर गाढ़ा होनेपर उसके लड्डू बनाकर खाते हैं। स्त्री-पुरुष सब तमाखू खाते हैं। पुरुष उसे पीते भी हैं। स्त्रियाँ और भिक्षुक तमाखूकी सुँघनी सूँघते हैं।

प्रार्थना-चक्र

प्रार्थना-यंत्र

तिब्बती लोग बौद्ध हैं। उनके देशमें बौद्धधर्मके साधुओंका बड़ा उपद्रव है। उन्हें लामा कहते हैं। तिब्बतमें हजारों लामा हैं। वहाँका राजा भी एक लामा ही है। लामाओंका समय बुद्धकी प्रार्थनामें बीतता है। प्रार्थनाके मंत्र रटते रटते मुँह दुखने लगता है, इसलिए लामाओंने पीतल और जस्तेकी छोटी-बड़ी फिरकियाँ तैयार कर ली हैं। एक कागज़के ऊपर प्रार्थनाका मंत्र लिख कर और उसे लपेट कर

वे प्रार्थना-यंत्रमें रख देते हैं। फिर उसे हाथसे घर्रघर्र घुमाते रहते हैं। जितनी दफ़ा यह फिरकी घूमती है, उतनी बार उन मंत्रोंका जाप हुआ माना जाता है और उस जापका पुण्य भी लामाओंको बिना झंझटके मिल जाता है। बड़े बड़े लामाओंके प्रार्थना-चक्र भी बड़े होते हैं। कहीं कहीं तो पवन-चक्कियाँ प्रार्थना-यंत्रके काममें लाई जाती हैं और कई फिरकियाँ तो झरनोंके बहते पानीसे फिरती हैं। इन पवन-चक्कियों अथवा पन-चक्कियोंपर बहुतसे मंत्र लिखे होते हैं। इस प्रकार पानी और वायु ये दो महाभूत लामाओंके प्रार्थना-यंत्रोंको चला कर उनकी ओरसे प्रार्थनाका काम करते रहते हैं। हाथ-पाँव हिलाए बिना घर-बैठे पुण्य-प्राप्तिका कैसा आसान उपाय है!

तिब्बतकी विवाह-प्रथा

तिब्बतमें रिवाज है कि एक स्त्रीके बहुतसे पति होते हैं। एक स्त्री एक साथ दो-तीन भाइयोंके साथ तो विवाह करती ही है, इतना ही नहीं, साथमें एक-दो पड़ौसियोंको भी पति बना लेती है। इन लोगोंके परिवारमें स्त्री ही मुखिया होती है। वह खेतमें काम करती है, कपड़े बुनती है, रसोई तैयार करती है और दूकानपर भी बैठती है। जितने पति हों तिब्बती स्त्री अपनेको उतना ही धन्य मानती है और दूसरे देशोंकी एक ही पतिवालीं स्त्रियोंपर उसे दया आती है!

लासा नामक शहर तिब्बतकी राजधानी है। शहरके बाहर पोताल नामक विशाल महलमें मुख्य लामा रहता है जो तिब्बतका राजा है। पोताल महल पहाड़ीकी चोटी ऊँची बना हुआ है और उसमें सैंकड़ों कमरे हैं। इस महलमें पाँच सौ लामा और सैकड़ों नौकर-चाकर रहते हैं।

तिब्बती चीनियोंकी तरह विदेशियोंसे नफरत करते हैं। उनके

देशमें विदेशियोंको आनेकी मनाही है। फिर भी हिन्दुस्तान-सरकारने बड़ी कोशिश करके तिब्बतके साथ व्यापारिक संधि की है। हालमें हिन्दुस्तान-सरकारकी मददसे ही वह चीनसे स्वतंत्र हुआ है।

अभ्यास

१ हिन्दुस्तान खूब उपजाऊ देश है, फिर भी उसके पासका तिब्बत वीरान, ठंडा और सूखा क्यों है?

२ तिब्बत हिन्दुस्तानको क्या क्या चीजें भेजता होगा और हिन्दुस्तानसे तिब्बत क्या क्या खरीदता होगा?

३ तिब्बती लोगोंका धर्म कौन-सा है? उनके धर्म-गुरुओंको क्या कहते हैं? उनके प्रार्थना-चक्रोंके विषयमें क्या जानते हो?

४ तिब्बती लोगोंकी विवाह-प्रथा हमारे यहाँकी विवाह-प्रथासे किस बातमें भिन्न है?

५ याक, नीलम और चायकी ईटोंके विषयमें क्या क्या जानते हो?

---

११ भूकम्प और ज्वालामुखी-प्रदेशके जापानी

अब हम चीनकी ही तरह भात और मछली खानेवाले चीनके पूर्वकी ओरके पड़ोसी जापानियोंके देशकी ओर चलें। जापानी लोग चीनियोंकी ही तरह ठिंगने, पीले रंगके, छोटी और तिरछी आँखोंवाले होते हैं। उनके भी गालोंकी हड्डियाँ उभरी हुई होती हैं। जापान देश छोटा करीब हमारे मद्रास इलाकेके बराबर है। साठ-सत्तर वर्ष पहले जापान एक अज्ञात और पिछड़ा हुआ द्वीप था। उसमें विदेशियोंको जानेकी मनाही थी और वहाँके लोगोंको भी विदेशोंसे व्यापार करनेकी इजाज़त नहीं थी।

उस समय जपानका राजा केवल नामका ही होता था और सारी शक्ति मंत्रीके हाथमें होती थी जिसे शोगुन कहते थे। हरेक प्रान्तमें दायमीओ नामके छोटे-बड़े सरदार होते थे और उनके नीचे वंश-

परम्परासे लड़ाईका पेशा करनेवाले 'सामुराई' लोगोंकी छोटी फौजें रहती थीं। वे सब स्वतंत्र होते थे और एक दूसरेके साथ लड़ा करते थे। सारे देशमें जमींदार दायमिओं और उनके अधीनस्थ सामुराई लोगोंकी ही प्रधानता थी। उनके सिवाय दूसरोंको तलवार रखनेका हक न था। दायमिओ पालकीमें बैठकर जाता हो तो रास्तेपर चलनेवाले आदमियोंको उसे ज़मीनपर लेटकर दण्डवत प्रणाम करना पड़ता था और रास्तेके किनारे खड़े हो जाना पड़ता था। ऐसा न करनेवालोंको दायमिओके सामुराई उसी जगह तलवारसे काट डालते थे।

सामुराइयोंका महान् त्याग

सन् १८६८ में ऐसे पिछड़े हुए और आपसी लड़ाइयोंसे तंग आये हुए देशके किनारेपर कमाण्डर पेरी नामक अमेरिकन जल-सेनापति कुछ जंगी जहाज़ लेकर पहुँचा और उसने अपनी तोपोंकी धाक दिखाकर जापानको दूसरे राष्ट्रोंके साथ व्यापार करनेको मजबूर किया। इस राष्ट्रीय अपमानसे जापान जाग उठा और वहाँके सब लोग आपसी झगड़ोंको एक किनारे रख शोगुनके जुल्मी शासनको फेंककर अपने बादशाहके एकच्छत्र-शासनके नीचे इकट्ठे हो गये। इस अभिनव क्रांतिके समय जागीरदार दायमिओ और सामुराइयोंने अपनी मातृ-भूमिके लिए जो स्वार्थ-त्याग किया दुनियाके इतिहासमें वह बेजोड़ है। दायमिओ और उनके अधीन सामुराइयोंने अपनी जागीरें राजी-खुशीसे छोड़ दीं और वेतन-भोगी नौकर बन गये। इसी तरह बीस लाख सामुराई अपनी प्राणोंसें भी प्यारी और पीढ़ियोंसे पवित्र गिनी जानेवाली तलवारको छोड़कर साधारण लोगोंकी तरह छोटी-मोटी नौकरियाँ करके पेट भरने लगे। क्या यह कोई साधारण स्वार्थ-त्याग था?

जापानकी विलक्षण उन्नति

केवल चालीस वर्षोंमें ही जापानने ऐसी उन्नति कर ली जैसी न पहले किसीने की थी और न आगे कोई कर सकता है। उसने जंगी जल-सेना तैयार कर ली, बड़े बड़े कारखाने खोल दिये और दुनियाके साथ ज़बर्दस्त व्यापार शुरू कर दिया। १८७२ में जापानके बादशाहने घोषणा की कि अबसे हरेक आदमी सुभीतेसे शिक्षा प्राप्त कर सकेगा। जापानके किसी भी गाँवमें एक भी अपढ़ कुटुम्ब न रहेगा और एक भी आदमी अशिक्षित न रहेगा। कितना ऊँचा ध्येय है? इस ध्येयके पीछे पानीकी तरह रुपया बहाकर जापानने शिक्षामें इतनी उन्नति कर डाली है कि १९१० में जापानमें स्कूलोंमें जानेवाले लड़कोंकी संख्या ९९ फ़ी सदी और लड़कियोंकी ९७ ¾ फी सदी थी। १९०४ में जापानने अपनी नई जल-सेनासे रूस जैसे बलवान् राष्ट्रको हरा दिया। इस समय जापान दुनियाके पाँच प्रबल राष्ट्रोंमें गिना जाता है और यूरोपके राष्ट्र उससे सम्मानपूर्वक मित्रताकी सन्धियाँ करते हैं। अब हम इसी बलवान् और सभ्य राष्ट्रकी मुलाक़ात लेने चलते हैं।

जापान देश अनेक द्वीपोंका समूह है। उसका आकार साँपकी तरह लंबा है। ये द्वीप पहाड़ी हैं और उनमें समुद्रके किनारोंसे सटा हुआ प्रदेश ही सपाट है। इसलिए इन्हीं भागोंमें ज़्यादह बस्ती है। इन समुद्री किनारोंपर सुभीतेके अनेक बन्दरगाह हैं। विदेशोंसे माल लाने और विदेशोंको माल भेजनेके ये बन्दरगाह ही प्रमुख केन्द्र बन गये हैं, और इसलिए उनमें और उनके आसपासके प्रदेशोंमें बड़े बड़े कारखानोंवाले शहर बस गये हैं।

जापानके पहाड़ी भागोंसे अनेक नदियाँ बड़े वेगसे नीचेको बहती हैं। इन नदियोंमें जगह जगह बड़े बड़े प्रपात हैं। जापानमें तालाब भी बहुत हैं। सारांश यह कि जापानमें पानीकी ज़रा भी कमी नहीं है।

फूलोंके त्यौहार

जापान शीत कटिबंधमें है, इसलिए वहाँकी हवा ठंडी है और द्वीप होनेके कारण वहाँ हमेशा नमी रहती है। इसीसे जापानके पर्वत, मैदान और दर्रे बारहों महीने हरी हरी घाससे छाये रहते हैं और सब जगह फूल-पौधे खिले रहते हैं। जापानी लोग फूलोंके बड़े शौकीन हैं। उनको चैरी, प्लम और क्रिसेन्थिममके पेड़ बहुत पसन्द हैं। जापानमें इन पेड़ोंके अनेक बग़ीचे हैं। इनके फूलोंके मौसमोंमें जापानी बड़ा उत्सव मनाते हैं। कमलोत्सव, चैरी-उत्सव, क्रिसेन्थिमम-उत्सव आदि उनके प्रसिद्ध त्यौहार हैं। जापानी मंदिरोंके आँगनमें फूलोंका बग़ीचा ज़रूर होता है। फूलोंमें सुगन्ध नहीं होती, परन्तु रंग बहुत सुन्दर होते हैं। गर्मियोंमें जब चैरी वृक्षपर फूल आते हैं तब उसकी शोभा देखनेको सारा गाँव उमड़ पड़ता है। जापानी लोग अपने बाल-बच्चोंके साथ बग़ीचे देखने जाते हैं और घंटोंतक फूलोंको निरखते रहते हैं और वहीं बैठकर नाश्ता करते हैं। इन फूलोंके बग़ीचोंमें बूढ़े, जवान और बाल-बच्चे आनन्दमें मस्त होकर घूमते हैं, फूलोंपर कविता करते हैं, और उन कविताओंको फूलोंके पौधोंपर ही लटका कर घर जाते हैं। पूरी बहारमें खिले हुए बाग़की शोभा देखनेको ग़रीब जापानी भी सौ मीलतककी मुसाफ़िरी आसानीसे कर लेता है। शिक्षक अपने विद्यार्थियोंको सूर्योदयसे पहले कमलोंके

तालाबपर ले जाते हैं और समझाते हैं कि कमल किस तरह खिलते हैं। फूलोंपर उनका कितना प्रेम है !

जापानी लड़कियोंको बचपनसे ही पुष्प-शास्त्रकी शिक्षा दी जाती है कि पुष्प-गुच्छ कैसे बनाना, किस रंगका फूल किस रंगके साथ रखना, किस रंगके कमरेमें किन किन रंगोंके फूलोंका गुच्छा अधिक शोभा देगा आदि। साधारण जापानी आदमी भी गुलदस्तेकी रचना और उसके रंगोंके मेलके मर्मको एक कलाकारकी तरह समझता है।

पवित्र फूजीयामा

अब मैं तुम्हें सुन्दर फूलोंसे दूर उग्र फूजीयामा पर्वतकी ओर ले चलता हूँ। जापान जिस तरह सुकुमार फूलोंका देश है उसी तरह भयंकर ज्वालामुखियोंका भी देश है। आजकल जापानमें पचास दहकते हुए ज्वालामुखी पर्वत हैं और इनके सिवाय दूसरे अनेक बुझे हुए ज्वालामुखी भी हैं जो कब भड़क उठेंगे, यह नहीं कहा जा सकता।
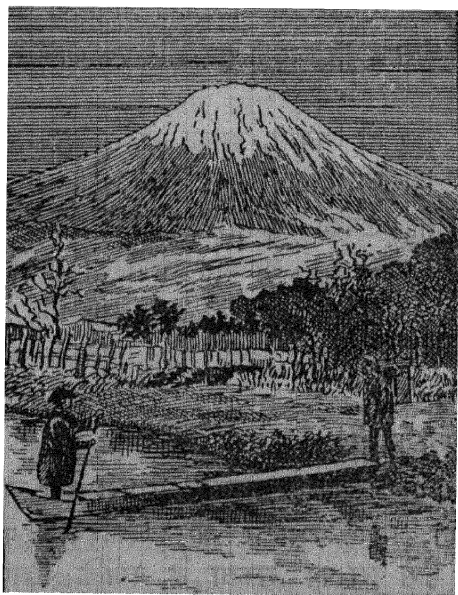
फूजीयामा

जापानका सबसे ऊँचा पर्वत फूजीयामा एक ज्वालामुखी ही है पर

वह आजकल प्रज्वलित नहीं है। उसका ऊपरका भाग शंकुके आकारका है और वह हमेशा बर्फसे ढका रहता है। जापानी लोग फूजीयामाको बहुत पवित्र मानते हैं और उसका भक्ति-भावसे दर्शन करते हैं। फूजीयामाका चित्र प्रत्येक जापानी घरमें होता है।

जापानमें एक हज़ारसे ज़्यादह गरम पानीके सोते हैं। जिस देशके पेटमें इतनी आग हो उसमें भूकम्प होना स्वाभाविक है। वहाँ छोटे-बड़े भूकम्प होते ही रहते हैं। कहते हैं कि जापानकी राजधानी टोकियोमें दिन-रातमें भूकम्पका एक धक्का तो कमसे कम लगता ही है। यदि धक्का ज़ोरका होता है तो मकान गिर जाते हैं और बहुत-से मनुष्य मर जाते हैं। १८७१ में जो भूकम्प आया था उसमें दस हजार आदमी मरे, बीस हजार जख़्मी हुए और एक लाख तीस घर मिट्टीमें मिल गये।

भूकम्पके धक्केसे कब मृत्यु हो जायगी, इसका कोई भरोसा नहीं, इसलिए जापानी लोग मरनेके लिए हमेशा तैयार रहते हैं। उनको मृत्युका भय ही नहीं लगता। उनकी यह निर्भय-वृत्ति लड़ाईके समय राष्ट्रके लिए बहुत उपयोगी होती है। सेनापति आक्रमण करनेका ज्यों ही हुक्म देता है त्यों ही जापानी सिपाही शत्रुकी गरजती हुई तोपोंकी परवाह किये बिना निर्भय होकर उनपर पिल पड़ते हैं और हँसते हँसते मर जाते हैं।

जापानी घरोंकी करामात

भूकम्पोंका असर जापानी घरोंकी रचनापर भी पड़ा है। जहाँ बार बार भूकम्प आते हों, वहाँ ईंट-पत्थर और लकड़ियोंके कई मंज़िलोंके मकान बनानेसे कैसे पूरा पड़ सकता है, क्योंकि सिरपर ईंट-पत्थरोंका ढेर आ पड़नेपर तो घरके ही आदमियोंको मरना पड़े? इसके सिवाय एक घरके गिरते ही दूसरे दिन दूसरा घर

बन जाना चाहिए । इसीसे जापानी लोग अपने घर बिना मंज़िलके ही बनाते हैं । घरकी छतपर काले रंगकी खपरैल अथवा चीनी लोगोंकी तरह बाँसका छप्पर होता है । छप्परको छोटे छोटे लकड़ियोंके खंभोंपर टिका देते हैं । जापानी घरोंमें ईंट, पत्थर या मिट्टीकी दीवार नहीं होती । दरवाज़े, खिड़कियाँ और कमरे भी नहीं होते । घरका फ़र्श जमीनसे एक फुट ऊँचा होता है । उसके ऊपर चौखटोंमें बिठाई हुई और आगे-पीछे सरकाई जा सकनेवालीं मोटे कागजों और लकड़ीकी पतली पट्टियोंकी दीवारोंका उपयोग होता है । दिनमें कागजकी और रातको लकड़ीकी दीवारोंका उपयोग होता है । दिनमें बहुत-सी दीवारोंको एकपर एक तह करके रख देते हैं, इसलिए दिनके समय जापानी घर एक लम्बे कमरे जैसा दिखाई देता है । केवल स्नान-गृह और रसोई-घरकी दीवारें खड़ी रहती हैं । इन घरोंमें सड़ककी ओर आड़के तौरपर भी दीवारें नहीं होतीं क्योंकि जापानियोंको खुली हवा और प्रकाश बहुत चाहिए । ज़्यादहसे ज़्यादह वे इतना ही करते हैं कि बहुत ठंड पड़नेपर आगेकी कागज़की दीवार सरका कर आड़ बना लेते हैं । घरोंमें क्या हो रहा है यह राह चलता आदमी मजेसे देख सकता है । रात पड़ते ही लकड़ीकी दीवारोंको चौखटोंमें आगे-पीछे सरका कर पाँच मिनटमें छोटे-बड़े कमरे तैयार कर लिये जाते हैं ।

गरीब हो या अमीर, जापानीका घर इसी तरहका होता है । अमीरोंके घरोंमें खंभोंपर और छतोंपर सोनेका काम किया हुआ होता है और फ़र्श लकड़ीके चिकने पटियोंका होता है । फिर भी उनके घरोंमें दिनमें कागजकी और रातको लकड़ीकी दीवारें तो रहती ही हैं । गरीब लोग जब चाहे तब अपना घर और घरका सामान सिरपर उठाकर दूसरी गलीमें ले जाकर डेरा डाल देते हैं । गरज यह कि

जापानी घर इतने सहजमें ही एक जगहसे उठाकर दूसरी जगह ले जाया जा सकता है ! वहाँकी घर बनानेकी रीति भी हमसे उलटी है। हम पहले घरका चौंतरा बनाते हैं फिर दीवारें और छत बनाते हैं पर जापानी लोग पहले खंभोंके आधारपर छप्पर खड़ा करते हैं और फिर लकड़ीकी दीवारें आदि बनाते हैं। जापानी घरोंमें अँग्रेज़ोंकी तरह न कुरसी-मेज़ें होतीं हैं और न हमारे यहाँकी तरह गलीचे या दरियाँ। इनके बदले मोटी मोटी मुलायम और सफेद रंगकी चटाइयाँ बिछाई जाती हैं। हम जल्दी ही जापानियोंके मेहमान बनकर जानेवाले हैं, उस समय हम उनके घर और उनका सब सामान देखेंगे ही। इसलिए अभी इतना ही काफ़ी है। भूकम्पके भयसे जमीनके ऊपर घर बनानेके बदले आजकल ज़मीनके भीतर गहरेमें घर बनानेका प्रयत्न भी वहाँ चल रहा है।

जापानियोंकी राष्ट्रीय पोशाक

जापानियोंकी पोशाक बड़े मज़ेकी होती है। पुरुष और स्त्रियाँ दोनों किमोनो नामका एड़ीतकका चोगा पहनती हैं। इस चोगेमें हमारे कोटकी तरह बटन नहीं होते। वे खुले होते हैं और उनका एक भाग दूसरेके ऊपर आ जाता है। किमोनोकी बाँह बहुत ढीली होती है और उसके अंदरकी तरफ़ कोहनीके पास सींकर एक ज़ेब-सी तैयार की हुई होती है। इस किमोनोपर जापानी लोग कमरके चारों ओर रेशमी कमरबंद,—एक तरहका सेला, लपेटते हैं जिसे ओबी कहते हैं। इस कमरबंदका ही जापानी पोशाकमें महत्त्व है। यह कीमती रेशमका होता है। पुरुषों और स्त्रियोंके किमोनोमें इतना ही अन्तर होता है कि पुरुषोंका कमरबंद बहुत छोटा होता है, पर स्त्रियोंका बहुत चौड़ा और लम्बा। जापानी स्त्रियाँ इसे शरीरपर लपेटकर

पीछेकी ओर गाँठ बाँधती हैं। बच्चोंकी भी पोशाक यही है। फ़र्क सिर्फ इतना ही है कि उनके किमोनोका रंग भड़कीला होता है और मा-बापोंके किमोनो काले, आसमानी या भूरे रंगके होते हैं।

जापानी लोग पैरोंमें लकड़ीकी खड़ाऊँ या घासकी चट्टियाँ पहनते हैं। घासकी चट्टियोंका उपयोग गर्मियोंमें होता है। वर्षाके दिनोंमें खड़ाऊँके नीचे तीन इंच मोटे लकड़ीके टुकड़े लगा लिये जाते हैं। मानो बरसातमें सारा जापान तीन इंच ऊँचा हो जाता है! वहाँकी ज़मीन नम होती है, इसलिए लकड़ीकी खड़ाऊँ पहिननेमें बहुत आराम रहता है। हालेंडमें भी इसी कारण लकड़ीके जूते पहने जाते हैं। जापानियोंके पैरके मोज़े विचित्र तरहके होते हैं। उनमें चार उँगलियोंका घर अलग और अँगूठेका घर अलग होता है। वर्षा ऋतुमें सब लोग मोटे कागज़की छतरी काममें लाते हैं। छतरियोंपर सुन्दर चित्र और बेल-बूटे बने रहते हैं।

आजकल यूरोपकी स्त्रियाँ भी जापानी छतरियोंका उपयोग करने लगी हैं।

यह तो हुई जापानकी राष्ट्रीय या स्वदेशी पोशाक। परन्तु वहाँ भी यहाँकी तरह अँग्रेजी फेशनका उपद्रव खड़ा हो गया है। सभी बातोंमें अँग्रेजोंका अनुकरण करनेकी प्रवृत्ति दिखाई देती है। इसीसे वहाँ पढ़े-लिखे और सम्पन्न लोग अँग्रेजी ढँगके कपड़े पहिनते हैं। बहुत-सी जापानी स्त्रियाँ भी अँग्रेज़ी स्त्रियोंके वेशमें रहती हैं। जापानके बादशाह और रानी भी महलके बाहर अँग्रेज़ी पोशाकमें ही दिखाई देते हैं। सिर्फ़ रानी ही घरमें किमोनो पहन कर उसके ऊपर सेला लपेटे रहती हैं। स्कूलकी लड़कियाँ भी अँग्रेज़ी पोशाक पहनती हैं।

अब जापानी लोग क्या खाते हैं, कैसे खाते हैं, उनके घरके

रीति-रिवाज़ कैसे हैं, यह जानना चाहिए। इसके वास्ते हमें किसी जापानी मित्रके यहाँ एक दिन रहना पड़ेगा। बस, तो फिर चलो।

रिकशाकी सवारी

चलो, अब शहरमें अपने मित्रके यहाँ चलें। पर किस तरह चलें ? टाँगेमें या बग्गीमें ? ना ना, ये तो जापानमें मिलते ही नहीं। यहाँ तो हमें रिकशामें बैठकर जाना होगा। रिकशा दो पहियोंकी गाड़ी है जिसे आदमी खींचता है। हमारे यहाँ भी मद्रास और और कलकत्तेमें रिकशाएँ चलती हैं। ये देखो रास्तेके दोनों किनारों-पर कितनी रिकशाएँ खड़ी हैं! रिकशावाले दौड़े हुए आ रहे हैं और अपनी अपनी रिकशा ठहरानेका आग्रह कर रहे हैं। कोई अपना शरीर दिखाकर कह रहा है "देखो मैं कैसा मज़बूत हूँ, तुम्हें दौड़ते हुए ले जाऊँगा।" तो अब किन्हींको तय कर लो। रिकशामें एक या दो सवारी बैठती हैं। अरे, उस रिकशावालेकी पोशाक देखी ? नीले रंगका घुटनोंतकका पाजामा, खुली कमीज़, सिरपर उलटे तवेकी तरहकी घासकी टोपी और पाँवोंमें घासके जूते। कीमती किमोनो और कमरबंद ये बेचारे कहाँ पावें ? इनको सारे दिनमें ज़्यादहसे ज़्यादह दो-ढाई रुपया किराया मिलेगा। तो चलें, अब एक एक आदमी एक एक रिकशामें बैठ जायँ। देखो रिकशावाले कैसे दौड़ रहे हैं! वे एक घंटेमें आसानीसे सात-आठ मील ले जाते हैं। कहीं चढ़ाई हो तो एक आदमी पीछेसे धकेलता है। गरीब बेचारे! उनके शरीरसे पसीना बह रहा है। हम लोग बिजलीकी ट्रामसे आये होते तो अच्छा था। जापानके तमाम शहरोंमें बिजलीकी ट्रामवे और रेलगाड़ियाँ हैं।

जापानी शिष्टाचार

अब हम अपने दोस्तके घरके पास आ पहुँचे, उतरो नीचे। देखो यहींसे घरका आधा भाग दिखाई दे रहा है। घरमें कोई नहीं मालूम पड़ता। ज़रा ताली तो बजाओ! जापानमें किसीको बुलाना हो तो ताली बजाते हैं। वह देखो एक सत्रह-अठारह वर्षकी लड़की आई। क्या नौकरानी है? अरे, यह क्या करने लगी? घुटने टेक कर वह जमीनपर बैठ गई और दोनों हाथ ज़मीनपर टेककर सिर भी ज़मीनपर टिका दिया! यह जापानी सत्कार है क्या?

चलो, अब इसके साथ अंदर चलें। जूते बाहर ही रख दें। बैठो इस चटाईपर। चटाई कितनी मुलायम और मोटी है!—लगभग इस पुस्तकसे तिगुनी। और नौकरानी यह क्या ले आई? जलते हुए कोयले! ये किस लिए? चुरुट सुलगानेके लिए? जापानमें स्त्री-पुरुष सभी चुरुट पीते हैं। कोई घरमें आया कि उसको तुरन्त चुरुट सुलगानेके लिए अंगारे हाजिर कर दिये जाते हैं। यह यहाँका शिष्टाचार है।

यह नौकरानी कितनी विनयशील और चतुर है! इसे नौकरानी कहना ही भूल है। जापानमें किसीके घर नौकरी करना छोटा काम नहीं गिना जाता। नौकरी करनेवाली लड़कियाँ अच्छे घरानोंकी होती हैं। नौकरी करनेसे पहले वे जापानी शिष्टाचार सीखती हैं, क्योंकि जापानमें शिष्टाचारका बहुत महत्त्व है। नौकरानियाँ अपनी मालिकिन और मेहमानोंके साथ धीमी आवाज़में अदबके साथ बोलती हैं और घुटने टेककर नमस्कार करती हैं। पर बातचीतमें और हँसी-मज़ाकमें वे घरके आदमियोंके समान बराबरीसे बर्तती हैं। मालिक या मालिकिन उनको भले ही नौकरानीके तौरपर पुकारें, पर

दूसरे आदमियोंको उनके साथ सभ्यता और बराबरीका बर्ताव करना चाहिए और उनको 'सान' (=कुमारी बहिन) कहकर बुलाना चाहिए।

मालिक या मालकिन घरमें न हो तो नौकरानीको ही घर-मालिककी तरह अतिथियोंकी आव-भगत करनी पड़ती है। वह उनसे कुशल-समाचार पूछती है, उनके साथ बातचीत करती है और उनको जल-पान कराती है। एक बार एक अँग्रेज स्त्री बड़े भुलावेमें पड़ गई। नौकरानी उसके साथ इतनी सभ्यतासे पेश आई और बातचीतमें उसने इतनी होशियारी बताई कि अँग्रेज स्त्रीको ऐसा ही लगा कि यह घरकी मालकिन है! ये देखो घरके लोग आ पहुँचे। और उन्होंने भी पहले जैसे नमस्कार करना शुरू कर दिये। उठनेके समय वे ज़ोरसे श्वास खींचते हैं। यह भी नमस्कारका एक अंग है। चलो हम भी श्वास खींचें। पर यह करते हुए मुँहकी आवाज अच्छी निकलनी चाहिए, हाँ, पैरमें काँटा लगनेपर जैसी आवाज होती है उसी तरहकी।

विना दूध और शक्करकी चाय

देखो नौकरानी एक तश्तरीमें चीनी मिट्टीकी चायदानी और चीनी मिट्टीके छोटे छोटे प्याले और रकाबियाँ ले आई। तश्तरी नीचे रखकर उसने पहले हमें नमस्कार किया और फिर हरेकको चाय भर कर दी। जापानी लोग चायमें दूध या शक्कर नहीं डालते। तुम किसी भी किसी भी जापानीके यहाँ जाओ तुम्हें चाय जरूर मिलेगी, वह भी एक प्याला नहीं पाँच छोटे प्याले। न शक्कर और न दूध। अच्छी सज़ा है! किसी दूकानमें कोई चीज़ ख़रीदने जाओ तो वहाँ भी चाह! और वहाँ अधिक समय ठहरो तो दो-चार बार पीनी पड़ेगी। हरेक जापानी मंदिरके आगे चायकी दूकानें रहती हैं। केवल मंदिरमें ही नहीं, सर्वत्र ही तुम्हें चायकी दूकानें दीखेंगीं। इन चायकी

दूकानोंमें ही मित्रोंको मेज़बानी दी जाती है। इस अवसरपर नाच-गान भी होता है।

अच्छा तो अब चाय-पुराण बन्द करें। देखो, घरके लड़के-लड़कियाँ हमसे मिलने आई हैं। इन लड़कियोंकी पीठपर क्या है? उनके छोटे भाई-बहिन! जापानमें छोटे बच्चोंको पालनेमें नहीं सुलाते। वे दिनको अपनी बड़ी बहिनकी पठिपर कपड़ेमें बँधे रहते हैं। यह बोझ लेकर जापानी लड़कियाँ बड़ी आसानीसे रास्तेपर खेलती-कूदती रहती हैं। ये बहिनें तो खेलती रहती हैं और उनके छोटे भाई उनकी पीठपर आरामसे सोये रहते हैं! नीचे-ऊपर धक्का लगते रहनेपर भी उनको मालूम नहीं होता। छोटी लड़कियाँ अपनी अपनी पीठोंपर बड़ी बड़ी गुड़ियाँ बाँधे रहती हैं। आगे जाकर उन्हें भी अपने छोटे भाई-बहिनोंको पीठपर बाँध रखना पड़ेगा, यह उसीकी बढ़िया तालीम है।

नमस्कार-पुराण

अंदर आते ही सब लड़के-लड़कियोंने कितनी गंभीरतासे घुटने टेके और सिर झुकाकर हमें नमस्कार किया! यह मैं पहले ही बता चुका हूँ कि जापानमें शिष्टाचारका बहुत जोर है। इसका अनुभव हमें कदम-कदमपर होता है। बचपनसे ही जापानी बच्चोंको छोटे छोटे रीति-रिवाज सिखाये जाते हैं। एक नमस्कारको ही ले लो। बड़ोंको, समान दर्जेवालोंको और छोटे लोगोंको अलग अलग तरहके नमस्कार किये जाते हैं। नमस्कारपरसे जापानी आदमीका दर्जा जाना जा सकता है। कमरेमें किस तरह प्रवेश करना, चायकी रकाबी और प्याला कितनी ऊँचाईपर हाथोंमें रखना, उनको ज़मीनपर कैसे रखना, किस प्रकारके आदमीको चाय पहले देनी और वह किस तरह देनी, यह सारा शास्त्र जापानी लड़के बचपनमें ही

सीख लेते हैं। एक बार एक अजनबी एक जापानी दूकानमें गया। एकदम दूकानदार, उसकी स्त्री तथा बाल-बच्चोंने तो उसे नमस्कार किया ही, पर बहिनकी पीठपर सोते हुए दो सालके बच्चेको भी उन्होंने खास तौरसे जगा दिया। जागते ही उसने रोए या डरे बिना नीचे उतरकर गंभीरतासे अपना सिर झुकाकर उस अजनबीको प्रणाम किया। कहनेकी ज़रूरत नहीं, इसके बाद पीठपर बाँधते ही वह बच्चा फिर सो गया।

स्नानका शौक़

चायके बाद स्नान होता है। जापानी लोग चीनियोंकी तरह गंदे नहीं होते। वे दिनमें दो बार स्नान करते हैं। जापानी मज़दूर रातको अपने कामपरसे घर आकर पहले स्नान करेगा फिर और काम। जापानमें हरेक शहरमें अनेक स्नान-गृह हैं और उनमें हजारों लोग स्नान करते हैं। सभीके घरोंमें स्नान-गृह नहीं होते। केवल टोकियो राजधानीमें ही हज़ारसे ज़्यादा सार्वजनिक स्नान-गृह हैं। अच्छा चलो, वह नौकरानी हमें स्नान-गृहका रास्ता दिखा रही है। चारों तरफ़ लकड़ीकी दीवारोंकी एक छोटी-सी कोठरी है। वह देखो, नौकरानीने दीवारको एक तरफ़ खींचकर अंदर जानेका रास्ता बना दिया।

जापानियोंकी स्नान करनेकी रीति बहुत-कुछ अँग्रेजों-जैसी है। एक बड़े लकड़ीके टबमें गरम पानी होता है। उसमें वे बैठ जाते हैं और अपना शरीर मलते हैं। फिर बाहर निकलकर साबुन लगाते हैं और ठंडे पानीका एक घड़ा अपने सिरपर उड़ेल लेते हैं। बस हो गया स्नान! घरके सभी आदमी इसी टबमें बैठकर स्नान कर लेते हैं। घरके लोगोंका स्नान हो जानेपर फिर उसी पानीमें नौकर-चाकर

नहा लेते हैं। जापानियोंको नहानेके लिए पानी बहुत गरम चाहिए। खूब गरम पानीमें वे निःशंक बैठ जाते हैं। पर हमारे लिए तो इतने गरम पानीमें नहाना एक सज़ा ही है।

स्नान-गृहका पानी मोरीमेंसे होकर घरके पीछेकी ओर बग़ीचेमें जाता है। जापानी लोग बग़ीचोंके बड़े शौक़ीन हैं। उनके घरमें चाहे छोटा ही क्यों न हो, एक बग़ीचा रहता अवश्य है। छोटे बच्चोंके लिए छोटे छोटे नकली बग़ीचे बनानेमें भी उनकी अद्भुत चतुराई दिखाई देती है। बिल्कुल छोटे छोटे पेड़, छोटी-सी नकली नदी, उसके ऊपर छोटा-सा पुल, बैठनेके लिए छोटी छोटी कुर्सियाँ आदि इस तरहकी अनेक चीजें वे इन नकली बग़ीचोंमें सजाते हैं। ये बगीचे बड़े मज़ेदार होते हैं।

जापानी भोजन

स्नानके बाद भोजन। चलो, भोजन तैयार है। बैठो चटाईपर। वह देखो लकड़ीकी चौकियाँ आ गईं। इनपर भोजनके बरतन रखे जाते हैं। जापानी लोग हमारी तरह थालीमें नहीं खाते। हरेक चीज़ छोटी-बड़ी चीनीकी प्याले-प्यालियोंमें रखी जाती हैं और वे प्याले-प्यालियाँ हरेकके आगे लकड़ीकी चौकियोंपर सजा दी जाती हैं। ठंड पड़ती हो तो अँगीठी पास रख दी जाती है जिसे 'हिबाची' कहते हैं। जापानियोंका मुख्य भोजन मछली और चावल है। पहाड़ी प्रदेश, खूब पानी और सर्द हवा होनेसे चावल बहुत होता है और चारों तरफ़ समुद्र होनेसे मछलियोंकी कमी नहीं है। बौद्ध होनेके कारण वास्तवमें जापानी लोगोंको हिंसा नहीं करनी चाहिए पर मछली खाये बिना तो कैसे चले? उसके बिना तो उन्हें चैन ही नहीं पड़ती। इसीलिए उन्होंने उसका नाम जल-तरकारी रख लिया है और इस प्रकार अपने मनको समझाकर (अथवा यों कहो कि ठगकर) वे छूटसे

मछलियाँ खाते हैं। मछलीकी अनेक तरहकी चीजें बनाई जाती हैं। कुछ मछलियोंके कच्चे टुकड़ोंपर वे 'सोय' नामका पतला और खट्टा

जापानी भोजन कर रहे हैं।

पेय डालकर खाते हैं। इसके अतिरिक्त उनके भोजनमें सेमके बीजोंकी पतली तरकारी, तरह तरहके मुरब्बे, अचार और मीठी रोटी आदि चीजें भी होती हैं। मछलीकी तरह समुद्रकी एक बारीक घासको भी कच्चा या उबालकर नमक-मिर्च मिलाकर खाना उन्हें बहुत अच्छा लगता है। इसके सिवाय वे गाजर, प्याज, आलू और जमीनपर उगनेवाली सब तरहकी सब्जियाँ भी खाते हैं। इन सबके बाद वे चावल खाते हैं। भातके लिए आग्रह बहुत किया जाता है और वह बार बार परोसा जाता है। भातके बाद चाय पी गई कि भोजन समाप्त हो गया। कभी कभी वे चावल भी चाय डालकर खाते हैं!

जापानी लोगोंकी सबसे अधिक प्रिय चीज़ मूली है। यह मूली दो हाथ लम्बी और हाथकी कलाईके बराबर मोटी होती है। इसे वे कच्ची तो खाते ही हैं, इसके सिवाय उसे सुखा कर, नमक लगाकर और

दो-तीन महीनेतक सिरकेमें रख कर भी खाते हैं। उस समय उसमें इतनी अधिक बदबू उठती है कि हम लोग वहाँ खड़े भी नहीं रह सकते। फिर भी जापानी लोग उसे बड़े स्वादसे खाते हैं! जापानमें पशु बहुत नहीं होते, इसलिए बहुत करके वे मांस नहीं खाते और मक्खन-दूध भी अधिक नहीं खाते। शायद यही कारण है कि उनकी चायमें दूध नहीं होता।

जापानी लोग हमारी तरह भातको हाथसे नहीं खाते। उसे वे पेन्सिल जितनी लम्बी और मोटी दो लकड़ीकी सलाइयोंसे खाते हैं। आदत न होनेसे हम लोग इन सलाइयोंसे नहीं खा सकते, समय बहुत लगता है और शरीरपर दाने गिर जाते हैं। साथ ही चावलका एक एक दाना खाते खाते तबीयत भी ऊब जाती है। पर जापानी इन सलाइयोंसे दनादन खाते हैं।

अब देखें, रातको सोनेका कैसा प्रबन्ध होता है। सोनेका समय हुआ कि झट लकड़ीकी दीवारोंको खींचकर कोठरियाँ तैयार कर ली जाती हैं, और दीवारपर रंग-बिरंगे कागजके कन्दील टाँग दिये जाते हैं जो सारी रात जलते रहते हैं। जापानमें गद्दे, तकियों और चादरोंका उपयोग नहीं होता। चटाईपर एकपर एक इस तरह दो-तीन रजाइयाँ डाल दीं कि हो गया बिछौना। उसपर चादर नहीं रहती और तकिए तो वहाँके अद्भुत ही होते हैं। ईंटों जैसे लकड़ीके बड़े टुकड़े ही वहाँके तकिए हैं। टुकड़ोंपर वे कागजोंको घड़ी करके रख लेते हैं और तकिएपर सिर्फ़ गर्दन रक्खी जाती है, सिर तो ही नीचे लटकता रहता है। नहानेके
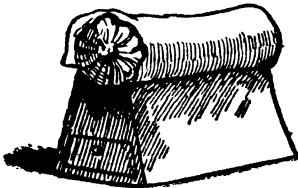
जापानी तकिया

पानीकी तरहकी ही दूसरी सज़ा है न यह ? जापानी स्त्रियोंकी केश-रचना बड़ी अटपटी होती है। तकिएपर सिर रखनेसे वह बिगड़ न जाय, इसीलिए शायद इस प्रकारके तकियोंका प्रचार हुआ होगा। यदि इनसे काम न चले तो फिर तकिएकी जगह हाथ रखकर ही सो जाओ !

काननदेवी और तोकोनोमा

हमारे यहाँ जिस प्रकार लड़कियोंकी अपेक्षा लड़कोंका अधिक महत्त्व है उसी तरह जापानमें भी है। लड़केके जन्मसे जापानीको जितना आनन्द होता है उतना लड़कीके जन्मसे नहीं होता। बच्चा एक महीनेका हुआ कि उसे 'कानन' नामकी देवीके पाँवोंमें डालनेके लिए ले जाते हैं। देवीके मंदिरमें देवीका घोड़ा और मुर्गा होता है। इन देवी-पुत्रोंको चावल खिलाये जाते हैं। तीसरी और पाँचवीं बरस-गाँठके समय लड़केको फिर देव-दर्शनके लिए ले जाते हैं। तीसरे वर्ष तक लड़कीके तालुके आसपासके बाल कटवाते रहते हैं और उसके बाद बढ़ने देते हैं। लड़का पाँचवें वर्षसे पुरुषोंकी तरह कपड़े पहनने लगता है और लड़की सातवें वर्षसे स्त्रियोंकी तरह कपड़े पहनने लगती है। लड़कियाँ शादी होनेके पहले तक कीमती रेशमके भड़कीले कपड़े, किमोनो और ओबी पहनती हैं। किमोनोपर तरह तरहके फूलोंके चित्र कढ़े होते हैं। पर शादीके बाद इन कपड़ोंका पहिनना बुरा समझा जाता है। लड़कियोंका विवाह सोलह-सत्रह वर्षकी आयुमें हो जाता है। शादी हो जानेपर उन्हें सासके अधीन रहना पड़ता है।

जापानी लड़कोंको शिष्टाचारके साथ साथ आज्ञा-पालन भी बचपनसे ही सिखाया जाता है। जापानी लड़कोंको अनेक कथाओं और नीतिके पाठोंद्वारा अच्छी तरह समझा दिया जाता है कि माँ-बाप

और सम्राट्की आज्ञाका पालन करना दुनियाका मुख्य कर्तव्य है। जापानी बच्चोंकी शुरूसे ही बादशाहके प्रति असीम भक्ति होती है और उसके लिए वे हमेशा मरनेको तैयार रहते हैं। जापानी घरोंमें एक कमरा या उसका कुछ भाग बादशाहके उपयोगके लिए देव-गृहकी तरह अलग रक्खा जाता है। इस कमरेको वे तोकोनोमा कहते हैं। तोकोनोमामें जापानी लड़के रोज ताज़े फूलोंके गुच्छे सजाते हैं। तोकोनोमाका उद्देश्य यह कि बादशाहको कभी जरूरत हो तो सोनेके लिए कमरा तैयार मिले। वास्तवमें बादशाहको कभी तोकोनोमाकी ज़रूरत नहीं पड़ती। पर इस रिवाज़से हमें जापानियोंकी राज-भक्तिका पता चलता है। जापानी लड़कियोंकी अत्यंत सुन्दर गुड़ियाँ उनके राजा-रानीकी ही होती हैं। इन गुड़ियोंको वे बड़े आदरके साथ रखती हैं।

पाँच तरहकी शिक्षा-संस्थाएँ

जापानमें लड़कोंकी शिक्षाका बहुत अच्छा सुभीता है। वहाँ बालोद्यान, प्राथमिक, माध्यमिक, औद्योगिक और विश्वविद्यालय : इस प्रकार पाँच प्रकारकी शिक्षा-संस्थाएँ हैं। बालोद्यान पाठशालाओंमें तीनसे छह वर्षतकके लड़कोंको पढ़ाया जाता है। इनमें लड़के केवल मनोरंजक खेल खेलते और व्यायाम करते हैं। प्राथमिक पाठशालाओंमें छहसे लेकर बारह वर्षतकके लड़के पढ़ते हैं। लड़कोंको दस सालकी उम्रतक स्कूलमें बत्तीस सप्ताह हाज़िर रहना ही चाहिए, ऐसा नियम है। शुरूकी चार कक्षाओंमें लेखन, वाचन, अंकगणित, व्याकरण, नीति-शिक्षा, हाथ-काम, चित्रकला और कवायद सिखाई जाती है। लड़कियोंको सीना-पिरोना और संगीत सिखाया जाता है। ऊँचे दर्जेकी प्राथमिक शालाओंमें इन विषयोंके अलावा इतिहास, भूगोल, अँग्रेज़ी, पदार्थ-विज्ञान, खेती और व्यापार : ये विषय ज़्यादह पढ़ाये जाते हैं।

माध्यमिक शिक्षाकी भी मध्यम दर्जे और ऊँचे दर्ज़ेकी दो प्रकारकी पाठशालाएँ होती हैं। मध्यम दर्जेकी पाठशालामें अँग्रेज़ी, फ्रेंच, जर्मन, या चीनी भाषा, रसायन, सृष्टि-विज्ञान, कृषि, वगैरह विषय होते हैं। इस शालामेंसे विद्यार्थी कालेज अथवा औद्योगिक शालाओंमें जाते हैं। ऊँचे दरज़ेकी शालाओंमें दो ही वर्ग होते हैं। उनमें सत्रह सालके विद्यार्थियोंको ही दाखिल करते हैं। माध्यमिक शालाओंके विषयोंके अलावा इनमें यंत्र-शास्त्र, भूस्तर-विद्या, खनिज-शास्त्र, भूमिति और तत्वज्ञान भी होते हैं। इनमेंसे कई स्कूलोंमें कानून, वैद्यक और औद्योगिक विषयोंको पढ़ानेका भी प्रबन्ध रहता है।

जापानमें वैद्यक, कानून, उद्योग और साहित्यके अनेक कालिज हैं। उनका पाठ्यक्रम तीनसे लेकर पाँच वर्षतकका होता है। इनके सिवाय विविध पेशोंकी सप्रयोग और संपूर्ण शिक्षा देनेके लिए भी वहाँ अनेक बड़े बड़े कालिज हैं। टोकियोकी व्यापार-शिक्षाकी संस्था दुनियामें सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है।

आवश्यक सैनिक शिक्षा

जापानके शिक्षा-क्रममें एक महत्त्वकी बात यह है कि प्राथमिकसे लेकर कालेजकी उच्च शिक्षातक व्यायाम और फौजी कवायद लाज़िमी है। लड़के हरेक घंटेके बाद पन्द्रह मिनट व्यायाम करते हैं। सभी विद्यार्थियोंकी एक ही तरहकी सैनिक पोशाक होती है। सैनिक अधिकारी उन्हें सैनिक शिक्षा देते हैं। दूसरी महत्त्वकी बात यह है कि जापानमें धार्मिक शिक्षाके बदले सदाचारकी शिक्षा दी जाती है और कालेजोंका अनुशासन बहुत कड़ा होता है।

जापानमें लड़कोंकी तरह लड़कियोंके लिए भी प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा-संस्थाएँ हैं। प्रत्येक जिलेमें लड़कियोंके लिए कमसे

कम एक हाई-स्कूल अवश्य होता है । लड़कियोंके हाई-स्कूलोंमें जापानी भाषा, अँग्रेज़ी, इतिहास, भूगोल, बीजगणित, शास्त्रीय विषय, सिलाई, गृह-व्यवस्था, लेखन, चित्रकला, गाना-बजाना, कवायद, हस्त-शिल्प, चीनी साहित्य और शिक्षा-शास्त्र : ये विषय सिखाये जाते हैं । इनके अतिरिक्त प्रसूति-शास्त्र, सीना, रोगियोंकी शुश्रूषा, रसोई बनाना, सीना, रेशम बुनना और रंगना, गाना-बजाना और वैद्यक : इनके लिए अलग अलग स्कूल हैं । स्त्री-शिक्षाकी खास महत्त्वपूर्ण संस्था १९०१ में टोकियोंमें स्थापित स्त्रियोंका विश्वविद्यालय है । इसके चार भिन्न भिन्न विभाग हैं और प्रत्येकका पाठ्य-क्रम तीन तीन वर्षका है । विश्वविद्यालयकी लड़कियोंको बोर्डिंगमें ही रहना पड़ता है और रसोई तथा अन्य व्यवस्था बारी बारीसे करनी पड़ती है । लड़कियोंको पुरुषों जैसी शिक्षा न देकर उन्हें उन्हींके योग्य शिक्षा देकर अच्छी पत्नियाँ और अच्छी माताएँ बनाना और उनमें देशाभिमानकी ज्योति जगाना यह इस विश्वविद्यालयका ध्येय है । इस महिला-विश्वविद्यालयके ढंगपर ही पूनामें कर्मवीर कर्वेने स्त्रियोंका विश्वविद्यालय स्थापित किया है ।

जापानके छोटे छोटे बच्चे हाथमें किताब और 'सोरोबान' नामक अनेक रंगोंकी गोलियोका बना हुआ अंक गिननेका चौखटा लेकर स्कूल जाते हैं । शिक्षकको वे पूरा झुककर प्रणाम करते हैं और उनके सम्मानके लिए श्वास अन्दर खींच लेते हैं । जापानमें प्राथमिक शालाओंमें होल्डर या कलमका उपयोग नहीं होता । लड़के ब्रशको स्याहीमें डुबोकर उससे कापीपर लिखते हैं । जापानी वर्णमालामें वर्ण तो ४७ ही हैं, परन्तु पूरे वाक्यों और पूरे शब्दोंको बतलानेवाले सैकड़ों चिह्न हैं । जापानी लड़के अच्छी तरह तभी पढ़ सकते हैं जब उक्त सैकड़ों चिह्न

सीख लेते हैं। जापानी पुस्तकें चीनी पुस्तकोंकी तरह ही अन्तिम पृष्ठसे शुरू होती हैं, पर पृष्ठोंकी पंक्तियाँ ऊपरसे शुरू होकर नीचे पूरी होती हैं।

जापानी खेल

जापानी लड़कोंके खेल अनेक हैं। हमारे लड़कोंकी तरह वे लट्टू फिराने और लड़ानेमें होशियार होते हैं। उन्हें तितलियाँ पकड़नेमें बड़ा आनन्द आता है। जुगनू पकड़ना तो उनका बहुत ही प्यारा खेल है। लड़कोंके साथ सयाने लोग भी हाथमें पंखे लेकर रातको जुगनू पकड़नेमें मशगूल दिखाई देते हैं। जापानी लड़के पाँच-छः बाँदोंको पकड़कर उनसे चावलोंसे भरी हुई कागज़की छोटी छोटी गाड़ियाँ खिँचवाते हैं। यह खेल उन्हें बहुत अच्छा लगता है।

परन्तु जापानमें बच्चोंके खेलोंके दो ही त्यौहार होते हैं: एक लड़कोंका और दूसरा लड़कियोंका। लड़कोंके त्यौहारको पतंगका अथवा कार्प नामकी मछलीका त्योहार कहते हैं। यह मई महीनेकी पाँचवी तारीख़को होता है। जिस घरमें परमात्माने लड़के दिये हैं, और खास तौरसे जिस घरमें उस वर्ष कोई लड़का पैदा हुआ है, उस घरमें यह त्यौहार आनन्दसे मनाया जाता है। घरके बाहर 'कार्प' मछलीके आकारकी पतंग रस्सीसे बाँधकर बाँसपर टाँग दी जाती है। पतंगको और इस त्यौहारको कार्प मछलीका नाम देनेका कारण यह है कि कार्प मछलीमें समुद्रके प्रवाहसे उलटी दिशामें तैरनेकी और प्रपातमेंसे (=धबधबेमेंसे) भी उछल कर आगे जानेकी शक्ति होती हैं। जापानियोंकी इच्छा रहती है कि हमारे लड़के भी बड़े होकर कार्पकी तरह प्रतिकूल परिस्थितियोंके साथ धैर्यसे टक्कर ले सकें।

इस दिन बूढ़े, जवान और छोटे बच्चे सभी पतंग उड़ाते हैं।

हमारे यहाँ गुजरातमें भी संक्रान्तिके दिन सब प्रकारके आदमी पतंग उड़ाते हैं। ये पतंगें गरुड़, राक्षस, छोटा बच्चा, तितली आदि अनेक आकारोंकी होती हैं। इस दिन जापानकी दूकानें बच्चोंके खिलौनोंसे खचाखच भरी होती हैं। पतंगके त्यौहारके दिन ही लड़के नकली लड़ाई लड़ते हैं क्यों कि जापानी युद्ध-देवता 'हकीमा' का भी पवित्र दिन यही है। इस अवसरपर लड़के दो दलोंमें बँट जाते हैं और हाथमें बाँसकी तलवारें और सिरपर मटकी रखकर लड़ते हैं। जो दल अपने विरोधी दलकी अधिक मटकियाँ फोड़ डालता है वही विजयी समझा जाता है।

लड़कियोंका गुड़ियोंका त्यौहार

लड़कियोंके त्यौहारको गुड़ियोंका त्यौहार कहते हैं। यह मार्च महीनेकी तीसरी तारीखको पड़ता है और तीन दिन रहता है। इस दिन भी दूकानें गुड़ियों, चूल्हों और उनपर रखनेके छोटे छोटे बर्तनोंसे भरी हुई दिखाई देती हैं। जिस घरमें उस साल लड़की पैदा हुई हो, उसमें इस उत्सवका विशेष महत्त्व होता है। इस दिन लड़कियाँ सुन्दर पोशाक पहनती हैं और घरमें रक्खी हुई गुड़ियाँ निकाल कर उनको बड़ी व्यवस्थासे रखती हैं। गुड़ियाँ पुरानी होती हैं; कुछ तो सैकड़ों बरसोंकी होती हैं और उस समयके राजाओं, रानियों, सरदारों, सेनापतियों, सिपाहियोंकी हूबहू मूर्ति होती हैं। उनके कपड़े और हथियार भी ठीक उसी समयके होते हैं। इतना ही नहीं उस समयके प्रचलित बर्तन-भाँडों और घरकी दूसरी चीजोंके भी लकड़ीके नमूने साथ होते हैं। ये लकड़ीकी चीज़ें घरमें बहुत सावधानीसे रखी रहती हैं और केवल गुड़ियोंके त्यौहारके दिन ही बाहर निकाली जाती

हैं। हमेशा खेलनेकी गुड़ियाँ अलग होती हैं। विवाह हो जानेपर लड़कियाँ अपनी गुड़ियाँ ससुरालको ले जाती हैं।

त्यौहारके दिन लड़कियाँ एक जगह इकट्ठी होकर खेलती हैं। राजा-रानीकी गुड़ियोंको वे ऊँचे स्थानपर सजाकर रखती हैं और उनको झुककर प्रणाम करती हैं। भोजनके लिए तैयार की गई चीजोंमेंसे सबसे अच्छीं राजा-रानीको अर्पण की जाती हैं।

जापानके गाँव, खेती और उद्योग-धंधे

जापानका केवल छठा भाग खेतीके योग्य है और उसमें भी फिर बहुत-सा पहाड़ी है। परन्तु जापानी किसान इतने मेहनती और चतुर हैं कि उतनेसे भागमें सारे ही देशके लिए काफी अन्न पैदा कर लेते हैं। खेत बड़े नहीं होते। साधारण तौरपर एक किसानके हिस्सेमें दो एकड़ ज़मीन आती है। जमीनकी कमी होनेसे जापानी किसान खेतोंके आसपास बाड़ तक नहीं लगाते। बहुतसे खेत घाटियों और मैदानोंमें हैं, परन्तु, जापानकी चावलकी अधिकांश खेती पर्वतोंपर ही होती है। वहाँ कोंकणकी तरह पर्वतके छोटे छोटे भागोंको समतल बनाकर सीढ़ियोंकी तरह एकपर एक खेत तैयार किये जाते हैं। यह काम बहुत ही मेहनतका है। नालियाँ बनानेकी कला भी ये लोग अच्छी तरह जानते हैं। वे पर्वतपरसे बहनेवाली नदियोंकी नालियोंको सीढ़ी दर सीढ़ी खेतोंमें ले आते हैं।

जापानकी मुख्य फ़सल धानकी है। धान कट जानेपर गेहूँ और जौ बोया जाता है। जिन पेड़ोंसे कागज बनता है उनकी भी बहुत खेती होती है। वहाँ कागज़ बहुत काम आता है। घरोंकी दीवारें, छतरी, प्याले, कंदील, रूमाल, जूते और टोपियाँ तक कागज़की होती हैं। जापानी कागज़ अलग अलग साठ तरहका होता है।

कई कागज़ तो इतने मजबूत होते हैं कि कितना ही ज़ोर लगाओ, नहीं फटते। कागज़की तरह बाँस भी चीनकी तरह अनेक कामोंमें आता है। घरके चौखटे, छप्पर, थाली, संदूक, मेज़, कुर्सी, चुरुटकी नली, पंखे वगैरह अनेक चीज़ें बाँसकी बनती हैं। कोमल कच्चे बाँसको जापानी बड़े चावसे खाते हैं।

जापानी किसानोंके शरीरपर बहुत कपड़े नहीं होते। घासकी तसले जैसी टोपी और कमरमें सिर्फ़ जरूरत-भरका कपड़ेका टुकड़ा रहता है। स्त्रियाँ नीले रंगके सूती लेंहँगे पहनती हैं और सिरपर टोपी लगाती हैं। लड़के बहुधा नंगे ही रहते हैं। गाँवोंमें अभीतक पुराने रीति-रिवाज़ चल रहे हैं। विधवा स्त्रियाँ सिरके बाल निकाल देती हैं। पुरुष भी सिरके बाल कटाकर छोटी-सी शिखा रखते हैं और वह नारदकी शिखाकी तरह खड़ी रहती है। तरुण स्त्रियाँ हमारे यहाँकी कुछ स्त्रियोंकी तरह मिस्सी लगाकर दाँत काले करती हैं, यद्यपि यह रिवाज अब कम होता चला जा रहा है।

चीनकी तरह जापानमें भी चायकी खेती सब जगह होती है। यहाँ 'रत्नजटित ओसकी बूँदें' इस नामकी एक चाय होती है जो पन्द्रह-बीस रुपये पौंड तक बिकती है। चायके पौधोंकी पत्तियाँ वर्षमें दो-तीन बार तोड़ी जाती हैं। यह काम लड़कियाँ ही करती हैं। जापानमें भी रेशमके कीड़ोंको पाला जाता है और वहाँसे रेशम और रेशमके कपड़े विदेशोंको बहुत बड़ी तादादमें भेजे जाते हैं।

जापान खेतीकी अपेक्षा कल-कारखानों और उद्योग-धंधेमें बहुत आगे बढ़ा हुआ है। जापानकी पुरानी राजधानी क्यायटो और ओसाका शहरके बीचका प्रदेश तरह तरहके कारखानोंसे ही भरा हुआ है। रेशमी कपड़ा तैयार करनेके लिए क्यायटोकी अधिक प्रसिद्धि है।

पहले पुराने ढंगके करघोंपर ही सुन्दर वस्त्र तैयार होते थे, अब बिजलीकी शक्तिसे चलनेवाले कारखानोंमेंसे धड़ाधड़ रेशमी कपड़ा निकलता है। ओसाका और कोबेमें सूतकी और कपड़ेकी अनेक मिलें हैं और उनमें हज़ारों मज़दूर काम करते हैं। इनमें छोटी उम्रके लड़कोंकी और स्त्रियोंकी संख्या अधिक है। स्त्री-मज़दूरोंकी संख्या पुरुषोंकी अपेक्षा दुगुनी है। सभ्य देशोंमें छोटे लड़कोंको कारखानोंमें लगानेकी कानूनके द्वारा मनाही है क्योंकि इससे उनका स्वास्थ्य बिगड़ता है और उनकी पढ़ाईका भी नुकसान होता है। इसी प्रकार कठिन और जोखिम-भरे कामोंपर स्त्रियोंको न रखनेका भी नियम है। परन्तु, जापानमें अभीतक इस विषयमें विशेष सुधार नहीं हुआ। स्त्रियों और लड़कोंको कम मज़दूरी देनी पड़ती है, इससे उन्हें रखनेमें मिल-मालिकोंको बहुत फायदा होता है। इसी तरह वहाँ कामके घंटे ज़्यादह और मज़दूरीका दर कम है। इन बातोंका ही यह परिणाम है कि जापान दूसरे देशोंके मुकाबलेमें थोड़े खर्चसे ज़्यादह माल तैयार कर सकता है और विदेशोंमें अपना माल अपने ही जहाजोंद्वारा थोड़े खर्चसे पहुँचाकर वहाँकी चुंगी भरकर भी दूसरे देशोंकी अपेक्षा सस्ता बेच सकता है। और उसपर मुनाफ़ा भी खूब उठाता है। इसी कारण कुछ समयसे दूसरे देश लड़कोंकी मज़दूरीकी पद्धति बंद करने, मज़दूरीकी दर बढ़ाने और कामके घंटे कम करनेके लिए जापानके पीछे पड़े हुए हैं और जापानको भी उनकी बात सुननी पड़ती है।

कोबे, नागासाकी और वाकामात्सू शहरोंमें लोहे और फौलादके बड़े बड़े कारखाने हैं। इनमें महासागरोंमें चलनेवाले भारी भारी व्यापारिक और लड़ाईके फौलादी जहाज तैयार होते हैं। इंग्लैण्ड और अमेरिकाके बाद जापानकी ही जल-सेनाका नम्बर आता है और उसके कारण ही

दुनियापर जापानकी धाक बैठ गई है। इस जंगी जल-सेनाके जहाज़ जापानी कारखानोंमें ही तैयार हुए हैं।

इनके सिवाय जापानमें और भी अनेक प्रकारके कारखाने हैं। यह एक ध्यानमें रखने योग्य बात है कि फिर भी अब तक हिन्दुस्तानकी तरह जापानके घरू धंधे नष्ट नहीं हुए हैं। वहाँके गाँवोंमें चीनी-मिट्टीके बर्तन बनानेका घरू धंधा ज़ोरोंसे चल रहा है। इसी तरह हम बच्चोंके लिए जो जापानी खिलौने और गुड़ियाँ लेते हैं उन्हें जापानकी स्त्रियाँ, विशेषतः लड़कियाँ, अपने अपने घरोंमें बैठकर ही बनाती हैं। इनके सिवाय छतरी, पंखे, रंग-बिरंगे कागजके कंदील आदि चीज़ें भी वहाँ घरोंमें ही बनाई जाती हैं। जापानमें घर घर रेशमके कीड़े पाले जाते हैं और रेशम तैयार किया जाता है। सारांश यह कि घरू धंधे और कारखाने दोनोंकी ही जापानमें भरमार है और लोग रात-दिन इन उद्योगोंमें लगे रहते हैं। यही मुख्य कारण है जापानकी अच्छी हालतका।

चलो, अब जापान छोड़नेका वक्त हो गया। यहाँ हमारे दिन बड़े आनन्दसे कटे। जापानी लोगोंका आनंदी स्वभाव, शान्त वृत्ति, उद्योगशीलता, नम्रता और शिष्टाचार देख हमें बहुत कुतूहल हुआ। उनकी राजभक्ति और देश-भक्ति देखकर हमें आनन्द हुआ और अपने पिछड़े हुए देशको आगे लानेके लिए उन्होंने जिस लगनसे प्रयत्न किया और उनके सरदारों और उमरावोंने जो अपूर्व स्वार्थ-त्याग दिखाया, उससे हमारा सिर लज्जासे झुक गया। जापानसे हमें बहुत कुछ सीखना है। चलो घुटने टेको, हाथसे जमीनका स्पर्श करो, सिर नीचे झुकाओ और जापानको 'सायोनारा' (=नमस्कार) कहो।

अभ्यास

१ दायमीओ और सामुराई कौन थे ? इन्होंने जापानकी उन्नतिके लिए क्या किया ?

२ जापानको ज्वालामुखियोंका देश क्यों कहते हैं ? फूजीयामाका दस पंक्तियोंमें वर्णन करो ।

३ जापानी घरोंकी रचनाका वर्णन करके समझाओ कि वह हमारे घरोंकी रचनासे अलग तरहकी क्यों होती है ?

४ किमोनो किसे कहते हैं ? जापानकी राष्ट्रीय पोशाकका संक्षिप्त वर्णन करो ।

५ जापानी लोगोंके शिष्टाचारके थोड़े उदाहरण दो । उनकी विनयकी भावनाके विषयमें तुम्हारा क्या अभिप्राय है ? वे बालकोंको शिष्टाचार किस प्रकार सिखाते हैं ?

६ जापानी प्रजाके उत्सवों और त्यौहारोंके विषयमें संक्षेपमें लिखो ।

७ जापानी परिवार अपने यहाँ आनेवाले मेहमानोंका कैसे सत्कार करते हैं ?

८ जापानकी शिक्षा-पद्धतिकी अपने यहाँकी शिक्षा-पद्धतिसे तुलना करो । इनकी शिक्षा-पद्धातिका कौन-सा सुधार तुम अपने यहाँ दाखिल करोगे ?

९ जापानकी हालकी औद्योगिक उन्नतिका वर्णन करो और उसके कारण बतलाओ ।

१० हिन्दुस्तानके विदेशी-व्यापारमें जापानका दूसरा नंबर है । जापान इतना छोटा देश होनेपर भी इतना अधिक माल हमारे यहाँ कैसे भेजता है ? जापानके साथ हमारा जो व्यापार होता है उसकी चीज़ोंकी एक सूची बनाओ ।

---

१२ पहाड़ी प्रदेशके स्विस

पिछले कुछ अध्यायोंमें हमने उष्ण कटिबंध और उसके आस-पासके प्रदेशोंके लोगोंकी जानकारी कर ली । अब हम सभ्यता और समृद्धिमें आगे बढ़े हुए यूरोप खंडके मुख्य मुख्य देशोंकी सैर करेंगे ।

यूरोप खंड शीत कटिबंधमें है; इसलिए वहाँ हमेशा ठंड रहती

है और इसी कारण वहाँके लोगोंको काम करनेका खूब उत्साह रहता है। वे काम भी बहुत कर सकते हैं। बिलकुल उत्तरका थोड़ा-सा भाग छोड़ दें तो एस्किमोके देश जैसी ठिठुरा देनेवाली ठंड, जो कुछ भी काम न करने दे, यूरोप खंडमें कहीं नहीं है। परन्तु ऐसा न समझ लेना चाहिए कि यूरोपके लोग केवल जल-वायुके कारण ही इतने उद्योगी और होशियार बन गये हैं। जल-वायु एक कारण अवश्य है और वह महत्त्वका कारण है, परन्तु, इससे ऐसा कोई न समझ ले कि हमारे हिन्दुस्तानकी हवा उष्ण है, इसलिए हमें निरुद्योगी और आलसी रहनेका अधिकार है।

एक तो योंही ठंडी हवाने यूरोपके लोगोंको उद्योगी-परिश्रमी बनाया है, दूसरे उन्होंने बुद्धि-चातुर्यसे भी अपने देशका मूल स्वरूप बदल कर उसको अपने अनुकूल निराला ही स्वरूप दे दिया है, और इस प्रकार उन्होंने प्रकृतिपर,—भूगोलपर विजय प्राप्त की है। जहाँ वे खेती कर सकते थे वहाँ उन्होंने उत्तम प्रकारकी खेती की है, और जहाँ प्रकृति उन्हें खेती नहीं करने देती वहाँ पशु-पालन करके दूध मक्खनादिके उद्योग खड़े कर लिये हैं अथवा बड़े बड़े कल-कारखाने खोलकर अनेक व्यवसाय शुरू कर दिये हैं।

स्विट्ज़रलैण्डका सृष्टि-सौन्दर्य

पहले हम यूरोपके स्विट्ज़रलैण्ड नामके एक छोटेसे देशमें चलें। बम्बई इलाकेके तीन जिलोंके ही बराबर उसका विस्तार है। वहाँका सृष्टि-सौन्दर्य प्रसिद्ध है। सारे देशमें आल्प्स नामक पर्वतकी बर्फसे ढँकी हुई श्रेणियाँ इधर इधर फैली हुई हैं। इसीसे स्विट्ज़रलैण्डको पहाड़ोंकी ऊँची ऊँची चोटियाँ, दर्रों और घाटियोंका देश कह सकते हैं। आल्प्स पर्वतके कई शिखर बहुत ऊँचे हैं जो हमेशा बर्फसे

ढके रहते हैं और सूर्यके प्रकाशमें बहुत ही सुन्दर दिखाई देते हैं। इसी तरह पर्वतकी पाठपर छोटे-बड़े अनेक चरागाह हैं जिनमें हजारों तरहके रंग-बिरंगे फूल खिलते हैं। इनका दृश्य भी बहुत मनोहर होता है। इनके सिवाय इस देशमें छोटी-बड़ी अनेक झीलें हैं जिनमें सैर करना बहुत ही आनन्ददायक होता है।

स्विट्ज़रलैण्ड इस अवर्णनीय सृष्टि-सौन्दर्यके कारण यूरोप और अमेरिका दोनों खंडोंके लोगोंके लिए गर्मियोंमें आमोद-प्रमोद करनेका प्यारा स्थान बन गया है। दोनों खंडोंके हज़ारों लोग इस छोटेसे देशके सृष्टि-सोन्दर्यको देखनेके लिए, आल्प्स पर्वतके ऊँचे ऊँचे शिखरोंपर चढ़नेके लिए, झीलोंकी सैर करनेके लिए और बर्फपर खेलनेके लिए गर्मियोंके दिनोंमें, और कुछ समयसे तो सर्दियोंमें भी, वहाँ जाते हैं और मौज-शौकमें पानीकी तरह रुपया बहाते हैं।

स्विस लोगोंका मुख्य रोज़गार

स्विट्जरलैण्डके लोगोंको स्विस कहते हैं। हर साल सैर-सपाटेके लिए आनेवाले शौकीन और अमीर मेहमानोंका सत्कार करना यह स्विस लोगोंका मुख्य व्यापार बन गया है। उन्होंने इन मेहमानोंके लिए आल्प्स पर्वतके हवा खाने और मौज करनेके सब स्थानोंपर बड़े बड़े होटल खोल रक्खे हैं जिनमें ऐशो आरामके सब सुभीते हैं। वहाँके 'इन्तरलाकन' नामके एक सुन्दर बड़े गाँवमें केवल होटलें और दूकानें ही हैं, एक तरहसे कह सकते हैं कि रहनेके निजी घर वहाँ हैं ही नहीं। स्विट्ज़रलैण्डकी उक्त सैकड़ों होटलोंमें हज़ारों विदेशी आकर ठहरते हैं और अपना रुपया पानीकी तरह बहाते हैं। इनमें अमेरिकन मेहमानोंकी तादाद बहुत ज़्यादह होती है। इनके सिवाय बहुतसे लोग छोटे छोटे

गाँवोंके परिवारोंमें भी पैसे देकर शान्तिसे रहनेके लिए आते हैं। पर्वतके शिखरोंतक भी ये होटलें हैं। इन होटलोंमें नाट घर, सिनेमा, नाचघर, खेलनेके मैदान वगैरह सभी आराम और आनन्दके साधन रहते हैं। मुसाफिरोंको आल्प्सके ऊँचे और कठिन शिखरोंपर चढ़नेमें कष्ट न हो, इसलिए जगह जगह ऊपर तक रेल गई है। जिस प्रकार गिलहरी दीवारपर चढ़ती है उसी तरह पर्वतपर चढ़नेवाली इस गाड़ीकी तीन पटरियाँ होती हैं और डब्बेके दोनों ओर एक एक और बीचमें एक, इस प्रकार तीन पहिए होते हैं। बीचके पहिए और बीचकी पटरीपर आरेकी तरहके दाँते होते हैं। गाड़ी जब चलती है तब इन पहियाँके दाँते पटरीके दाँतोंमें फसते जाते हैं और गाड़ी इधर उधर नहीं रपट सकती।

स्विस लोगोंने रेलगाड़ीकी तरह पैदल रास्ते तैयार करनेमें भी अपनी चतुराई दिखाई है। पहाड़ी प्रदेशके पैदल रास्तोंमें चढ़ाव-उतार तो होता ही है, परन्तु, स्विट्ज़रलैण्डके रास्तोंका चढ़ाव क्रम क्रमसे सुगम किया गया है। वह ऐसा है कि भारसे लदी हुई गाड़ियोंको भी घोड़े दौड़ते दौड़ते खींच ले जाते हैं। इसपरसे मालूम हो सकता है कि स्विस इंजीनियर कितने चतुर होते हैं।

स्विस इंजिनियरोंने आल्प्स पर्वतको पोला करके फ्रांस और इटली जानेके लिए जो लम्बे लम्बे बोगदे या सुरंग तैयार किये हैं उनका वर्णन पढ़कर इस छोटेसे देशके लोगोंकी तारीफ किये बिना नहीं रहा जाता। सिम्प्लॉन नामक बोगदा साढ़े बारह मील लम्बा है और उसके खोदनेमें सात वर्ष लगे थे। सेण्ट गोथार्ड नामक एक दूसरे बोगदेकी लंबाई दस मील है।

आल्प्सके शिखर

आल्प्सकी चोटियोंपर चढ़ना स्विट्ज़रलैण्ड आनेवाले प्रवासियोंका

मुख्य मनोरंजन है। माउण्ट ब्लांक, मैटर हॉर्न, युंगफ्राऊ आदि प्रसिद्ध चोटियोंपर चढ़नेवाले प्रवासियोंकी हर साल बड़ी भीड़ रहती है। ये शिखर बहुत ही ऊँचे हैं। युंगफ्राऊ (=युवती) १३८९० फुट ऊँचा है और माउण्ट ब्लांक १६०२० फुट अर्थात् महाबलेश्वरसे तिगुना ऊँचा है। इन शिखरोंकी चढ़ाई भी बड़ी कठिन और खतरनाक है। इनपर बारहों महीने बर्फ छाई रहती है। चढ़नेवाले बहुत बार मृत्यु-मुखमें जा पड़ते हैं। परन्तु, यूरोपियन लोग ऐसे हैं कि उन्हें कठिन और खतरनाक काम करनेमें ही मज़ा आता है। हमारे हिमालयके बहुत ही ऊँचे गौरीशंकर शिखरपर चढ़नेके लिए वे कितने छटपटा रहे हैं! कुछ साहसी अँग्रेजोंकी टोलियाँ तीन तीन बार गौरीशंकरपर चढ़ने आई हैं और एक बार तो उनमेंसे दो आदमी गौरीशंकरके बिलकुल नज़दीक पहुँचकर दुर्घटना-वश मर गये हैं। फिर भी दूसरे यूरोपियन लोग आते ही जाते हैं और गौरीशंकरपर चढ़नेकी कोशिश कर ही रहे हैं। ऐसे साहसी लोगोंको ही दुनियामें विजय मिला करती है।

तो इन साहसी यूरोपियनोंकी तरह चलो हम भी एकाध शिखरपर चढ़ें। आल्प्सपर चढ़नेसे पहले हमें पूरी तरहसे तैयारी कर लेनी चाहिए। अटपटे संकीर्ण रास्तों और फिसलनेवाले बर्फ़मेंसे ही हमको रास्ता खोजना पड़ेगा। हमारे हमेशाके कपड़े, बूट और हाथकी छड़ी यहाँ काम न आयगी। पहले सिरतक ऊँची और लोहेकी पैनी नोकवाली लकड़ी ले लो। और धूपकी ऐनक भी ले लो क्योंकि धूपमें चमकनेवाली बर्फ़की ओर देखोगे तो आँखोंके बिगड़नेका डर है। फिर हरेकके पास छोटी-सी कुदाली होनी चाहिए। रास्तेमें हमें दीवार जैसी बड़ी बड़ी बर्फ़की चट्टानें खड़ी मिलेंगीं। कुदालीसे बर्फ़ तोड़कर

और उसकी सीढ़ियाँ बना कर ऊपर चढ़ेंगे, तभी हम आगे जा सकेंगे। पाँवोंमें मोटे गरम मोजे और उनपर घुटनोंतकके ऊँचे बूट चाहिए। बूटोंमें मज़बूत मोटी और नोकीली कीलें लगी होनी चाहिए, नहीं तो बर्फ़परसे फिसल पड़ेंगे। पीठपर खाने-पीनेके सामानकी एक थैली होनी चाहिए क्योंकि पर्वतपर हमें डेढ़-दो दिन गुज़ारने पड़ेंगे। एक ही दिनमें दस-पन्द्रह हज़ार फुट चढ़ना और उतरना संभव नहीं। दूसरी महत्त्वकी वस्तु एक लम्बी रस्सी भी साथ चाहिए। यह संकटके समय हमारे बहुत काम आयगी।

पर्वतके मार्ग-दर्शक

सब तैयारी हो गई, पर मार्गदर्शकके बिना कैसे चलें? आल्प्स पर्वतकी छोटी-मोटी पगडंडियोंका पता वहीं जन्मे हुए मार्गदर्शकोंके सिवाय दूसरोंको नहीं हो सकता। स्विट्ज़रलैण्डमें बहुतसे लोग प्रवासियोंको पर्वत-शिखरपर ले जाकर सुरक्षित वापिस ले आनेका ही रोज़गार करते हैं। ये मार्ग-दर्शक डरपोंक और काँपनेवाले प्रवासियोंको भी अपने बलपर पर्वतकी चोटियोंपर पहुँचा देते हैं और वापस ले आते हैं। बादल घिर आएँ, कोहरा छा जाय, ऊपरका रास्ता न दिखाई दे, तो भी ये हिम्मत नहीं हारते और आगेका रास्ता ढूँढ़ निकालते हैं। दो प्रवासियोंके लिए तीन मार्ग-दर्शकोंकी ज़रूरत पड़ती है।

लो, तैयारी हो गई। अब चलो चढ़ें। शुरूकी चढ़ाई इतनी विकट नहीं है। बर्फ़को पैरोंसे कुचलते हुए ऊपर चढ़ते चलो। वह देखो आगेका मार्ग-दर्शक उँगलीसे क्या दिखा रहा है और वे छोटे छोटे धब्बेसे क्या दीख रहे हैं? अरे, वे तो झोंपड़ियाँ हैं। आज रातको हम इन्हीं झोपड़ियोंमें ठहरेंगे। प्रवासियोंके ठहरनेके लिए ही ये इतनी ऊँचाईपर बनाई गई हैं। देखो हम झोंपड़ियोंके पास आ पहुँचे।

चलो अंदर, डरो नहीं। ये हमारे ही लिए हैं। मार्ग-दर्शकोंने चूल्हा जलाकर नाश्ता तैयार कर दिया और देखो गरम कॉफी भी तैयार हो गई। देखो, खाना खाकर रातके कुछ घंटे हम झोंपड़ीमें ही बितायँगे, पर सुबह तक सोते रहनेसे काम न चलेगा। रातको दो बजे उठकर फिर चलना होगा। मार्ग-दर्शक हमें उठा देंगे। चलो, सो जायँ।

दो बज गये, उठो। अरे वाह ! मार्गदर्शकोंने तो खानेका सामान तैयार कर दिया है और गरमागरम कॉफी भी। आज हमें बहुत चढ़ना है, इसलिए डटकर नाश्ता कर लो। तो अब चलो बाहर। अहाहा ! कैसा गंभीर दृश्य है ! आकाशमें कितने तारे दिखाई दे रहे हैं ! अरे बापरे ! यह कैसी भयंकर ठंड है ! गरम ओवरकोट न होता तो यहाँ जानपर आ बनती। अब साथ लाई हुई रस्सीका उपयोग होगा। वह देखो, मार्ग-दर्शक सबकी पीठोंसे रस्सी बाँध रहे हैं। दो आदमियोंके बीच बारह फुटका अन्तर रक्खा है। वह एक मार्ग-दर्शक सबसे आगे हो गया। उसकी होशियारीपर ही हम सबके प्राण अवलंबित हैं। वह ज़रा भी चूका कि सबका काम तमाम ! हाँ ज़रा सँभलकर चलो। रास्ता कितना तंग है ! एक तरफ़ हज़ारों फुट गहरी खाई और दूसरी तरफ़ बहुत ही ऊँची टेकरी। बीचमें सिर्फ दो-तीन फुट चौड़ा रास्ता ! पाँव फिसला तो ?—पर चलो आगे।

पहाड़की चोटीपर

अहाहा ! उषःकाल हो गया। सामनेकी असंख्य चोटियाँ कोमल प्रकाशमें कितनी सुन्दर,—कितनी गंभीर दिखाई दे रही हैं ! पर हमारे पास यह सौंदर्य देखनेके लिए समय नहीं है। अभी बहुत चढ़ना है। अरे बापरे ! यह कैसी आफत है ! दोनों तरफ़ हज़ारों फुट गहरी खाई और बीचमें जरा-सी पगडंडी ! इस समय यहाँ चक्कर आ जाय
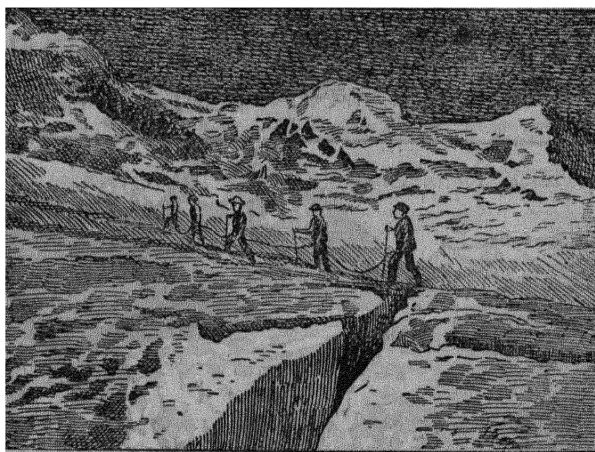
आल्प्सपर चढ़ते हुए लोग

तो ?—चलो आगे । वह बर्फ़की चट्टान खड़ी है । यहीं रास्ता बंद हो गया ! अब आगे कैसे जाएँ ? देखो वह मार्ग-दर्शक क्या कर रहा है ? कुदालीसे वह चट्टानपर सीढ़ियाँ बनाने लगा है । उसने एक सीढ़ी बना दी, दूसरी भी बना दी । चलो सँभल कर आगे । रस्सीको मजबूतीसे पकड़े रहो । यदि आगेका आदमी समतौल न रह सका और नीचे आ गया तो वह और हम सभी एक साथ खाईमें पड़े बिना न रहेंगे । शाबाश ! चट्टानकी चोटीपर तो आ पहुँचे ।

आल्प्सकी बर्फ़की नदियाँ

यही बर्फकी नदी है क्या ? ऐसी एक हजार नदियाँ आल्प्स पर्वतमें हैं । उनमेंसे कई तो दस-पन्द्रह मील तक लंबी हैं । पर यह बर्फकी नदी पानीकी नदीकी तरह नहीं बहती । पर्वतोंके उतारपर बर्फ़ गिरते गिरते उस बर्फ़के बड़े बड़े पर्वत बन जाते हैं और फिर उनपर भी बर्फ़ पड़ती रहती है । बढ़ते हुए वजनके कारण इन बर्फ़के पर्वतोंको

गति मिलती है और वे पर्वतपरसे धीमे धीमे नीचे खिसकने लगते हैं। यही बर्फ़की नदी है और इन पर्वतोंका धीरे धीरे खिसकना ही उसके प्रवाहकी गति। ये नदियाँ चौबीस घंटेमें बहुत हुआ तो एक-दो फुट
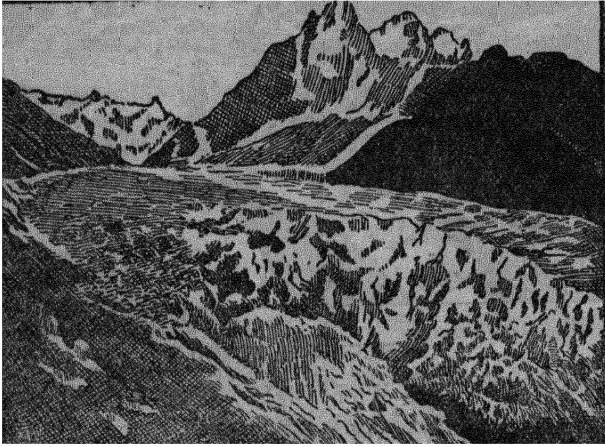
बर्फ़की नदी

आगे खिसक पाती हैं। इस खिसकनेके घर्षण या घिसावसे नदीके नीचेका भाग तो गलकर पानी हो जाता है और वह बीच-बीचमेंसे कलकल करता हुआ बह निकलता है। जब बर्फ़की यह नदी नीचेको खिसकती है तब उसके नीचेके प्रदेशके ऊँचे-नीचेपनके कारण वह फट जाती है और उसमें बड़ी बड़ी दरारें पड़ जाती हैं। ये दरारें सैकड़ों फुट लम्बी और गहरी होती हैं। नदीपर बर्फ़ पड़नेसे कई दफा इन दरारोंपर भी बर्फ़की तहें जम जाती हैं और ये दरारें दिखाई नहीं देतीं। यदि जाते समय बर्फ़से ढकी हुई इन दरारोंमेंसे किसीपर भूलसे पाँव पड़ जाय तो सैकड़ों फुट नीचे

जीवित समाधि ही मिल जाती है ! इसीलिए होशियार मार्ग-दर्शकोंकी ज़रूरत रहती है ।

अच्छा, अब सामनेकी बर्फ़की नदीपरसे सँभल कर चलो। कहीं कहीं बर्फ़ पत्थर जैसी कठिन और फिसलनी है और कहीं कहीं उसके रेतीकी तरहके ढेर हो रहे हैं। यह देखो बर्फ़की नदीकी भयंकर दरार! इतनी गहरी कि नीचे देखा तक न जा सके। उसके ऊपर यह बर्फ़का ही पुल है। देखो वह मार्गदर्शक आगे बढ़ा और बहुत धीरे धीरे बर्फ़के पुलपर चलने लगा। ऐसे ही समय कमरसे बाँधी हुई रस्सीका उपयोग होता है। भूल-चूकसे यदि कोई प्रवासी दरारमें गिर पड़ता है तो वह बँधी हुई रस्सीके कारण वैसा ही लटका रहता है और उसके साथी और मार्गदर्शक उसे ऊपर खींच लेते हैं।

बर्फ़के तूफ़ानमें

हमारा वह मार्गदर्शक इतनी चिन्तामें क्यों पड़ गया है? रास्ता तो अब अच्छा है न? क्या कह रहा है वह? तूफ़ान आयगा? देखो वह आ ही गया। कोहरा छा गया, अँधेरा हो गया, ठंडी हवा ज़ोरसे चलने लगी। बर्फ़के छोटे छोटे कण हवामें धूलकी तरह उड़कर इधर उधर भर गये। आसपास बिजली चमकने लगी। पर वह मार्ग-दर्शक तो कहीं रुकता ही नहीं, ऐसे अँधेरेमें भी आगे बढ़ता जा रहा है! कमाल किया उसने। लो तूफ़ान शान्त हो गया। सूर्य दिखाई देने लगा। चलो, जरा नाश्ता कर लें जिससे शरीर ताज़ा हो जाय। पर यह क्या? चक्कर आने लगे, कुछ खाया ही नहीं जाता! तुम्हारे शब्द ही मुझे सुनाई नहीं देते। तुम्हें भी मेरा बोलना सुनाई नहीं देता होगा। अरे, यह क्या हो गया? हाँ, समझ गया। अब हम दस-बारह हज़ार फुट ऊँचाईपर आ गये हैं। यहाँ

हवा बहुत पतली है, इसीसे श्वास लेनेमें तकलीफ़ होती है और बोला हुआ भी नहीं सुनाई देता। चलो, अब थोड़ी ही मंजिल बाकी है। अरे वाह, देखो तो आगेका मार्ग-दर्शक आनन्दसे नाचने-गाने लगा! क्या कहता है? पहुँच गये चोटीपर? वाह शाबाश! हाथकी झंडी निकालो और फहरा दो शिखरपर। पर नीचे देखो, खूब गहराईमें। वह देखो होटलकी खिड़कीमेंसे दूरबीन लगाकर हमारे मित्र शिखरकी तरफ़ एकटक देख रहे हैं। उन्होंने बन्दूकके फैर भी किये। उन्होंने हमारी झंडी ज़रूर देख ली है। हाँ, अब आधा घंटा आराम कर लो। अँधेरा होनेमें अभी दो-ढाई घंटेकी देर है। पर अब तो उतरना है। चलो, बातकी बातमें हम अपनी झोंपड़ीमें पहुँचें और वहाँ नाश्तेपर हाथ साफ करें। रात खूब सोएँ और सबेरे बाकीका उतार पूरा करें।

बर्फ़के खेल

शौकीन प्रवासी स्विट्ज़रलैण्डमें बर्फ़पर तरह तरहके खेल खेलते हैं। मुख्य खेल स्केटिंगका है। इसमें बूटके नीचे स्केट नामकी लोहेकी खड़ाऊँ बाँध लेते हैं और खड़े होकर चिकने बर्फ़परसे फिसलते चले जाते हैं। इसमें अपना वज़न सँभालनेकी या समतोलता रखनेकी ही खूबी है। साधारण बच्चे भी बर्फ़पर बड़े वेगसे फिसलते हुए जाते हैं। इतना ही नहीं, इस प्रकार फिसलते फिसलते वे बर्फ़पर जुदी जुदी आकृतियाँ भी बनाते चलते हैं। कोई कोई अँग्रजीके आठ (8) की तरह घूमते हैं, कोई गोल घूमते हैं, और कोई हाथमें हाथ मिलाकर पूरे जोरसे फिसलते हैं। स्विट्ज़रलैण्डके तमाम बड़े बड़े होटलोंके साथ स्केटिंगके लिए बर्फ़के मैदान (जिन्हें अंग्रेजीमें 'रिंग' कहते हैं) रहते हैं।

टोबोगनका मज़ा

प्रवासियेंके लिए खास मज़ेदार खेल तो टोबोगन है क्योंकि स्केटिंग तो सर्दियोंमें यूरोपमें चाहे जहाँ किया जा सकता है। टोबोगन अर्थात् बिना पहियोंकी फिसलनेवाली छोटी गाड़ी। इसका आकार एस्किमोकी गाड़ीके ही समान होता है। इसमें एक या एकसे अधिक आदमी बैठते हैं। पहाड़के उतारपर जब बर्फ़ पड़ चुकता है और वह चिकना हो जाता है, तब ऊपरसे टोबोगन छूटती है और बड़े वेगसे पहाड़ीके नीचेकी ओर जाती है। ढाल साधारण हो तो टोबोगन धीरे धीरे फिसलती चली आती है और उसमें कोई खतरा नहीं होता। पर टोबोगन खेलनेके जो असली शौकीन हैं उन्हें इस प्रकार धीरे धीरे फिसलनेमें मज़ा नहीं आता। वे ऊँचे ऊँचे पर्वतोंपर टोबोगन लेकर जाते हैं और वहाँ उसमें बैठकर ज़ोरसे नीचेकी ओर फिसलते हैं। उतार एकदम सीधा होता है और बीच-बीचमें मोड़ भी आते हैं। उत्साही जवान टोबोगनको, डाँड़की सहायतासे प्रत्येक मोड़पर चूके बिना ठीक तौरसे मोड़कर, बहुत थोड़े समयमें वायुके वेगसे नीचे ले आते हैं। सेंट मॉरिट्ज़के पास क्रेस्टा नामका एक हज़ार गजका प्रसिद्ध उतार है। इस उतारपर हर साल सर्दियोंमें टोबोगनिंगकी प्रतिस्पर्धाएँ होती हैं। उसी समय इस खेलका पूरा कौशल दिखाई देता है। यह एक हज़ार गज़का उतार एकदम सीधा है और उसमें जगह जगह अनेक सर्पाकार घुमावदार मोड़ हैं। तो भी खिलाड़ी एक मिनटके अन्दर ही इस भयंकर उतारपरसे सही-सलामत नीचे उतर आते हैं। प्रतिस्पर्धाके समय वायु शरीरसे रुककर गति कम न कर दे, इसलिए ये खिलाड़ी टोबोगनमें लेट जाते हैं और पाँवसे डाँड़ चलाकर उसे टेढ़े-मेढ़े

मोड़ोंपरसे नीचे ले आते हैं। परन्तु, हमेशाके खेलोंमें न टोबोगनको इतनी तेज़ीसे छोड़ा जाता है और न इतने भयंकर ढालपरसे ही नीचे उतारा जाता है। टोबोगन खेलनेवाले अच्छे बड़े रास्तेसे चढ़कर ऊपर जाते हैं और वहाँसे टोबोगन छोड़ते हैं। सारे रास्तोंपर घुटनेतक बर्फ़ जमी होती है। इन रास्तोंपरसे ही टोबोगन अनेक मील तक फिसलती फिसलती धीरे धीरे नीचे आती है। कभी उतार अधिक हुआ तो टोबोगनका वेग बढ़ जाता है और कम हुआ तो वह धीरे धीरे सरकने लगती है। टोबोगनके नीचे उतरते समय कभी पहाड़की स्वच्छ खुली हवा अंगोंको स्पर्श करती है और कभी वह दोनों तरफ़के देवदार वृक्षोंकी पंक्तियोंके धुँधले प्रकाशमेंसे होकर नीचे जाती है।

शीइंगका खेल

सर्दियोंका तीसरा खेल शीइंग (Ski-ing) है। शी (Ski) सातसे नौ फुट तक लंबी और पाँवके तलवेके बराबर चौड़ी लकड़ीकी चिकनी तख़्ती होती है। यह तख़्ती भी स्केटकी तरह बूटोंके नीचे बाँधकर लोग बर्फ़परसे फिसलते हैं। चतुर खेलाड़ी पाँवोंमें शी बाँधकर घंटेमें चालीस मीलके वेगसे बर्फ़पर फिसलते हैं। ये लोग फिसलते समय पहाड़की टेकरियोंपर दस दस बारह बारह फुट लंबी छलाँगें मारते हुए आगे बढ़ते हैं। आजकल तो शी बाँधकर बर्फ़पर चलनेका खेल बहुत प्रचलित हो गया है। वहाँ छोटे छोटे लड़के भी पाँवोंमें शी बाँधकर रोज़ चार-पाँच मील बर्फ़पर चलकर स्कूलोंमें जाते हैं।

स्विस किसान और खेती

स्विट्ज़रलैण्ड पहाड़ी होनेसे जितना सुन्दर है उतना ही खेतीके बारेमें पिछड़ा हुआ है। जहाँ देखो वहीं पहाड़, बर्फ़की नदियाँ, झीलें,

दर्रे और छोटी छोटी घाटियाँ दिखाई देती हैं। सपाट जमीन बहुत कम है। स्विस लोग अपने छोटेसे देशकी जमीनके केवल नवें भागमें खेती कर सकते हैं और उसमें भी अनाज पैदा करने लायक जमीन बहुत ही थोड़ी है। इसीसे उन्हें अपने निर्वाहके लिए विदेशोंसे अनाज खरीदना पड़ता है।

स्विट्ज़रलैण्ड हमारे देशके कोंकण जैसा पहाड़ी प्रदेश है, इसलिए वहाँके खेत कैसे होंगे, इसकी कल्पना हम सहजमें ही कर सकते हैं। सपाट जमीन न होनेसे वहाँ बड़े बड़े खेत नहीं हैं। बहुतसे खेत तो आकारमें घरके कमरोंसे भी छोटे होते हैं। कोंकणके किसानोंकी तरह स्विस किसानोंको भी कुदरतने मेहनती बनाया है। पहाड़ोंकी पीठपर, बाजूपर, जड़में, जहाँ भी जगह मिलती है वहीं स्विस किसान अपना खेत तैयार कर लेता है। घाटियोंमें सभीको जमीन कहाँसे मिले? घाटियोंमें जमीन मर्यादित है और जन-संख्या बढ़ती जा रही है। इस-लिए साहसी और मेहनती किसान ऊँचे पर्वतोंके बाजुओंपर जाते हैं और वहाँ कुदालीसे थोड़ी-बहुत जमीन खोदकर उसे सपाट बनाते हैं। फिर उसपर नीचेसे टोकरे भर भर कर मिट्टी लाकर बिछा देते हैं और इस तरह अपना खेत तैयार कर लेते हैं। बरसातमें पहाड़परसे पानीकी बड़ी बड़ी धाराएँ गिरती हैं। इतनी मेहनतसे ऊपर लाई हुई मिट्टी उनके साथ बह न जाय इसलिए पहाड़परके खेतको वहाँके किसान एक मज़बूत बाँधसे बाँध देते हैं।

बर्फ़की रेखा

आल्प्स पर्वतके ऊँचाईके ख्यालसे तीन भाग किये जा सकते हैं। सबसे ऊँचे भाग हमेशा बर्फ़से ढके रहते हैं। उनपर अनाज या घास कुछ नहीं होता। सर्दियोंमें प्रायः सारे पहाड़पर बर्फ़ पड़ती है और

उसकी तहोंपर तहें जम जाती हैं। पर जैसे जैसे गर्मियाँ आने लगती हैं वैसे वैसे पर्वतके नीचेके भागोंकी बर्फ़ पिघलने लगती है। ऐसा होनेपर पर्वतकी एक ख़ास ऊँचाईके नीचेके भागोंका बर्फ पिघलकर ज़मीन दिखाई देने लगती है। इसी जमीनसे लगी हुई एक रेखा कल्पित की गई है जिसके ऊपर हमेशा बर्फ़का राज्य रहता है। इसे 'बर्फकी रेखा' कहते हैं।

बर्फकी रेखाके नीचे चरागाह होते हैं। उनके ऊपर कोमल, रुचिकर, छोटी छोटी घास उगती है और वह पशुओंको बहुत भाती है। इस घासमें बहुत अधिक सत्त्व होता है और इस कारण इन चरागाहोंमें चरनेवाली गौएँ बहुत ही मीठा और गाढ़ा दूध देती हैं।
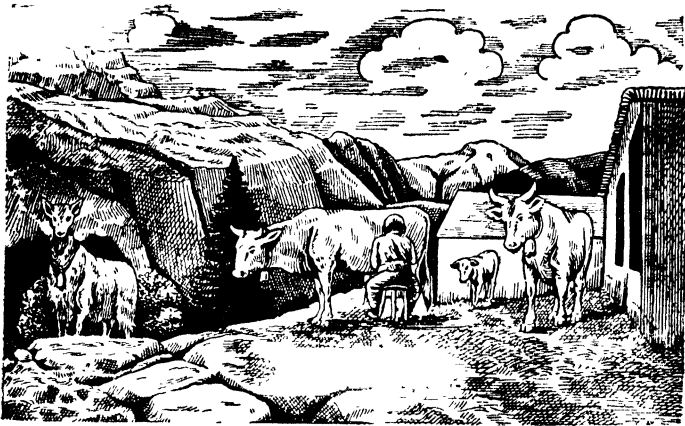
पहाड़परका एक चरागाह

इन चरागाहोंका उपयोग ढोरोंके चरानेके लिए होता है। पहाड़की सतहके चरागाहको 'आल्प' कहते हैं और इन्हीं चरागाहोंके कारण पहाड़का नाम 'आल्प्स' पड़ गया है।

चरागाहोंके नीचेका जो पहाड़ी भाग है उसपर देवदार वगैरह वृक्षोंके जंगल हैं। इन जंगलोंकी लकड़ी स्विस किसानोंके घर बनाने और ईंधनके काम आती है। पहाड़के निचले भागकी घाटीकी जमीनमें स्विस लोग अंगूरके मंडप तैयार करते हैं और फल तथा शाक-सब्जी लगाते हैं। पहाड़के ऊपर खोदकर और मिट्टी डालकर जो खेत तैयार किये जाते हैं उनमें ओट (=एक किस्मकी बारीक जई), राय और जौ नामक अनाज होते हैं क्यों कि इन अनाजोंको सख़्त ठंड मुआफिक आती है।

पेट भरने लायक अन्न नहीं होता इसलिए स्विस लोग करम ठोककर आधे-पेट भूखे नहीं बैठे रहते। वे धनी और सुखी हैं। उनके देशमें भिखारी कहीं भीख माँगते हुए दिखाई नहीं देते। इसका कारण उनकी बुद्धि और मेहनत है। पर्वतपरके चरागाहोंकी सुगंधित और कोमल घास देखकर उन्होंने दूध बेचनेका धंधा करना निश्चित किया और उसमें वे होशियार हो गये। सारी दुनियामें स्विट्ज़रलैण्डके 'कण्डेन्स्ड मिल्क' की (एक तरहके सुखाये और गाढ़ा किये हुए दूधकी) बड़ी खपत है जिसे लोग 'स्विस मिल्क' भी कहते हैं। इसी तरह वहाँके मक्खन और पनीरकी भी दुनियामें बहुत माँग है।

स्विस ग्वालोंका जीवन

स्विस ग्वालोंके घर दो जगह होते हैं: एक पहाड़की तलहटीमें हमेशा रहनेका और दूसरा पहाड़की चरागाहोंमें कामचलाऊ जिसे 'शाले' (Chalet) कहते हैं। हमारे यहाँ भी गाँवोंमें दो घर होते हैं: एक हमेशाका घर और दूसरा खेतपर फ़सलके समय रहनेके लिए बनाया हुआ कामचलाऊ झोंपड़ा। स्विस ग्वाले अपनी

गौओं तथा बकरियोंको लेकर सर्दियोंमें नीचे आ बसते हैं। उन दिनों पर्वतपर जानेकी सुविधा नहीं होती और तब पहाड़पर बर्फके सिवाय रहता भी क्या है ?

सर्दियाँ पूरी होती हैं और पर्वतपरकी बर्फ़ पिघलनेसे बर्फकी रेखा तकका भाग खुला हो जाता है। तब पशुओंको फिर ऊपर ले जानेका दिन आता है। यह दिन स्विस ग्वालों और उनके पशुओंको त्यौहार जैसा लगता है। पशु तक उस दिन आनंदसे नाचते-कूदते हैं क्योंकि उन्हें चार-छः महीने बाड़ेकी चार-दीवारोंके भीतर ही दिन बिताने पड़ते हैं और गर्मियोंमें इकट्ठी कर रक्खी हुई घासपर ही गुज़ारा करना पड़ता है। इस दिन ये लोग सूर्योदयके पहले ही उठते हैं और सुन्दर सुन्दर कपड़े पहिनकर पहाड़पर जानेको तैयार हो जाते हैं। वे पशुओंके गलेमें घूँघरू बाँधते हैं, उनके सींगोंमें सुन्दर फूल गूँथते हैं और फिर एक बड़ा-सा घंटा बजाते हैं। इस घंटेके बजते ही गाँवके सारे पशु जमा हो जाते हैं और घंटा बजानेवालेके पीछे पीछे चलने लगते हैं। यदि कोई गौ बीमार होनेके कारण बाड़ेमें बाँध रक्खी गई हो तो उसपर नज़र रखनी पड़ती है क्योंकि कहा नहीं जा सकता कि वह कब रस्सी तुड़ाकर पहाड़पर न चढ़ जायगी और अपनी बहिनोंमें जाकर शामिल हो जायगी।

पर सभी लोग कुछ नीचेके घर-बार छोड़ कर पहाड़के चरागाहोंमें सारी गर्मी-भरके लिए रहने नहीं चले जाते। उनमेंसे कुछ तो पशुओंको लेकर ऊपर चले जाते हैं और बाकी तलहटीमें रह कर शाक-सब्जी, फल, राय, ओट और जौ पैदा करते हैं। नीचे रह जानेवालोंका दूसरा महत्त्वका रोज़गार आगेकी सर्दियोंके लिए घास इकट्ठा करना भी है।

इसके लिए वे रात-दिन मेहनत करते हैं। घासका एक तिनका तक वे व्यर्थ नहीं जाने देते। जहाँ घास दिखाई देती है वहींसे काट कर ले आते हैं। पहाड़की ऊँची चोटियोंतक, जहाँ बकरियाँ भी जानेकी हिम्मत नहीं करतीं, स्विस लोग थोड़ी-सी घासके लिए जानेमें आगा-पीछा नहीं देखते।

चरागाहके लोगोंका उद्योग पहाड़पर सारी गर्मियों-भर जारी रहता है। चरागाह बहुत ऊँची जगहपर होनेसे वे रोज़ नीचे नहीं आ-जा सकते, ऊपर ही रहते हैं। अपनी सैकड़ों गौओंका दूध वे रोज़ दुहते हैं, उसका मक्खन और पनीर बनाते हैं और बीच-बीचमें मक्खन और पनीर नीचे भेजते जाते हैं। इसके अलावा दूधको भी गाढ़ा करके डब्बोंमें भर भर कर वे नीचे भेजते रहते हैं।

गौओंके लिए और भेड़-बकरियोंके लिए चरागाहोंके अलग अलग भाग होते हैं: सीधी जगहोंके चरागाह गौओंके लिए और अटपटी चढ़ाईके भाग भेड़-बकरियोंके लिए। पशु दिन-भर मौजसे चरते रहते हैं। एक एक गड़रियेके पास हज़ारसे भी ज़्यादह भेड़-बकरियाँ और गौएँ होती हैं, और उसे उनके पीछे दिनभर भटकना पड़ता है। शाम होनेपर वह ज़ोरसे तुरही बजाता है। उसे सुनकर दूर दूर तक गये हुए और इधर उधर फैले हुए पशु दौड़े हुए आ जाते हैं। यह तुरही लकड़ीकी होती है और ख़ासी छः-सात फुट लम्बी होती है। ज़ोरसे बजानेपर इसकी आवाज़ चारों ओर फैल जाती है और दर्रोंमें तो उसकी प्रतिध्वनि भी सुनाई देती है।

किसानोंके घर और शाले

स्विस किसानोंके तलहटीके घर अच्छे मजबूत होते हैं। नाजुक
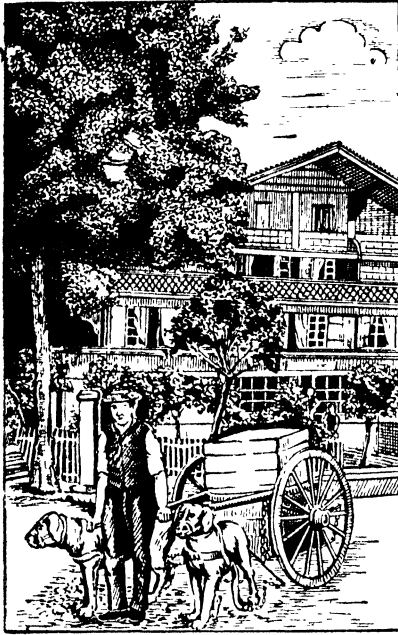
स्विस लोगोंका 'शाले' नामक घर और कुत्तेकी गाड़ी

और केवल शोभाके घर बनानेसे कहीं उनका काम चल सकता है? क्योंकि जब मूसलधार पानी बरसता है, और पहाड़परसे बर्फ़की चट्टानें टूट टूट कर नीचे आ पड़ती हों; तब यदि जापानकी तरहके कागजी घर बनायें जायँ तो वे हवाका जोरका झोका आते ही उड़ जायँ। स्विस घरोंका नीचेका मंज़िल पत्थरका बना होता है, उसके अगले भागमें अनाजके गोदाम और खेतीके औज़ार रहते हैं। पिछले भागमें पशु बाँधे जाते हैं। ऊपरका मंजिल लकड़ीका होता है। यह लकड़ी पासके पहाड़ोंके देवदारकी होती है। स्विस लोग ऊपरकी मंजिलपर ही रहते हैं और उसमें चार-पाँच कमरे होते हैं। बड़े कमरेमें सब लोग एकसाथ भोजन करते हैं और शामको इकट्ठे होकर गप्प मारते हैं। एक कमरा अच्छी तरहसे सजाया हुआ होता है। इसका हररोज उपयोग नहीं होता। यह केवल त्यौहारोंके दिन अथवा किसी मेहमानके आनेपर काम आता है। घरका छप्पर ढालवाला होता है और वह भी देवदारकी लकड़ीका ही बनाया जाता है। आँधी-तूफ़ानमें

वह कहीं उड़ न जाय इसलिए उसपर बड़े बड़े पत्थर रख दिये जाते हैं। घरकी ऊपरकी मंजिलके अगल-बगल छज्जा होता है। घरकी मेज़-कुरसियाँ आदि लकड़ीकी चीजें वजनी और मज़बूत होती हैं और बहुत करके घरपर ही तैयार की जाती हैं।

चरागाहोंके 'शाले' बहुत सादे होते हैं। ये झोंपड़ियाँ लकड़ीके मोटे मोटे टुकड़े एक दूसरेपर रखकर बनाई जाती हैं। ऊपरका छप्पर छोटी छोटी तख्तियोंका होता है और उसके ऊपर बड़े बड़े पत्थर रक्खे रहते हैं। सोनेका तख्त भी लकड़ीका ही होता है। उसके ऊपर उष्णता रखनेके लिए सूखी घास बिछा दी जाती है। वह लगे नहीं इसलिए उसपर एकाधा फटा हुआ कम्बलका टुकड़ा पड़ा होता है। एक तरफ़ चूल्हा और ईंधनका ढेर होता है। दरवाज़ेके पास ही एक तरफ़ बर्फ़पर चलनेसे भीगे हुए बूटों और कपड़ोंको सुखानेके लिए कीले तथा चीज़ोंको रखनेके लिए जड़ी हुई एक-दो तख्तियाँ दिखाई देती हैं। गौओंको बाँधनेकी जगह भी ऐसी ही सादी और लकड़ीकी होती है। गौओंको खूँटेसे नहीं बाँधते। गौओंको अंदर करके बाहरसे दरवाज़ा बन्द कर दिया कि बस हो गया। गौओंकी सारके बाहरकी ओर तख्ते लगाकर गोबरके लिए जगह बना दी जाती है। सबेरे दूध दुह कर उसे दो-तीन फुट ऊँचे और पीठपर ले जानेके लिए खास तौरसे चपटे किये हुए पीपोंमें भरकर पासके गाँवोंमें, शहरोंमें या होटलोंमें बेचनेके लिए ले जाते हैं या उसका मक्खन और पनीर बनाते हैं।

पौष्टिक भोजन

स्विस लोग मांस बहुत नहीं खाते। रविवारके दोपहरको कभी कभी ही कोई मांसकी चीज़ तैयार की जाती है। उनके भोजनमें दूध,

मक्खन, पनीर, मलाई और रोटी आदि चीज़ें ही अधिक होती हैं। लड़के सबेरे मक्खनके साथ रोटी खाते हैं, अथवा कॉफी या दूधमें घोला हुआ मकईका आटा पीकर स्कूल जाते हैं। दोपहरको रोटी, उबाले हुए आलू, छाछ, रसा (इसमें कभी मांस होता है और कभी नहीं), आदि चीज़ें होतीं हैं। रातको भी सबेरेके नाश्तेकी तरह भोजन होता है। इस प्रकार स्विस लोगोंका भोजन सादा और सात्त्विक है। मनमाना दूध और मक्खन खाकर और पहाड़की शुद्ध और खुली हवामें मेहनत करके वे सुन्दर और मज़बूत बनते हैं।

स्विस किसान घरपर ही अपना कपड़ा तैयार करता है। घरके भोजनके कमरेके एक कोनेमें हाथ-करघा होता है। इसपर घरकी स्त्रियाँ और लड़कियाँ अपनी भेड़ोंकी ऊनके कपड़े बुना करती हैं। घरके आँगनमें शाक-सब्जी और आसपास अंगूरकी बेलें और फलोंके पेड़ लगे होते हैं। इससे उन्हें खानेको शाक-सब्जी और ताज़े फलोंकी कमी नहीं रहती। अंगूरकी बढ़िया शराब भी वे घरपर ही बना लेते हैं। गरज यह कि यहाँके किसान और ग्वालेको कॉफी, नमक, गेहूँ आदि चीजोंको छोड़कर बाहरसे कुछ भी खरीदनेकी जरूरत नहीं पड़ती।

दूसरे उद्योग-धंधे

केवल पशु पालकर दूध-दही बेचना ही स्विस लोगोंका धंधा नहीं है। यह तो केवल गर्मियों-भरका धंधा है। सर्दियोंमें पहाड़ोंसे नीचे आ जानेपर उन्हें और उनकी स्त्रियोंको बहुत फुरसत मिलती है। उस समय वे चौपालपर बैठकर हमारे यहाँके किसानोंकी तरह आलसमें गप्पें नहीं मारा करते। वे तरह तरहके घरू धंधोंमें लग जाते हैं। लकड़ीपर नक्काशी करनेमें स्विस लोग बहुत प्रसिद्ध हैं। दोपहरको स्त्री और पुरुष दोनों ही नक्काशीवाली कुर्सियाँ, मेज़ें,

कोच, छड़ियाँ और छतरियाँ रखनेके स्टेण्ड और खूँटियाँ वगैरह तैयार करते हैं। यूरोप, अमेरिका और जापानसे इन चीज़ोंकी बड़ी माँग आती है। गर्मियोंमें हवा खानेके लिए आये हुए प्रवासी भी बड़ी बड़ी कीमतें देकर इन लकड़ीकी चीज़ोंको खरीद ले जाते हैं। घरका काम निबट जानेपर दोपहरको आरामके समय स्विस स्त्रियाँ सुन्दर जालीकी कोरें (= लेसिस) और पट्टियाँ (=रिबन) बैठी बुना करती हैं।

घड़ियोंकी जन्म-भूमि

स्विस घड़ियाँ तो बहुत ही प्रसिद्ध हैं। वे सारी दुनियामें खपती हैं। जिनीवा झीलके आसपासके प्रदेशमें हरेक आदमी छोटी हाथकी और बड़ी दीवारपर लगानेकी घड़ियाँ तैयार करनेमं लीन दिखाई देता है। बाहरवाले ग्राहकोंको भास होता है कि स्विस लोगोंने उद्योग-धंधे आपसमें बाँट रक्खे हैं। हरेक शहरका कोई खास रोज़गार होता है। एक शहरमें लकड़ीपर नक्काशीका काम होता है तो दूसरे शहरमें चमड़ेकी चीज़ें तैयार होती हैं और तीसरेमें तरह तरहकी धातुकी चीज़ें बनती हैं।

स्विट्ज़रलैण्डमें कल-कारखाने भी अनेक हैं। स्विस लोग आल्प्स पर्वतपरसे वेगके साथ नीचे बहनेवाली असंख्य जल-धाराओंकी शक्तिसे बिजली उत्पन्न करते हैं और उसकी सहायतासे सैकड़ों सूती और रेशमी कपड़ोंकी मिलें, यंत्र तैयार करनेके कारखाने और फीते, कसीदा आदि काढ़नेकी मशीनें चलाते हैं। इन कारखानोंमें इतना माल तैयार होता है कि स्विट्ज़रलैण्डका हरसालका निर्यात व्यापार आठ करोड़ पौण्डसे ज़्यादह है।

इतने अधिक उद्योग-धंधे हैं फिर भी बढ़ती हुई जन-संख्याके लिए इस छोटेसे देशमें गुज़ारे लायक जगह नहीं मिलती। इसलिए अनेक

शताब्दियोंसे हज़ारों स्विस लोग विदेशोंमें आजीविकाके लिए जाते रहे हैं। ये लोग शरीरसे हट्टे-कट्टे और ईमानदार होते हैं, इसलिए प्राचीन यूरोपमें राजा लोग अंग-रक्षकोंके तौरपर स्विस सिपाहियोंको रखा करते थे और ये सिपाही प्राण रहते तक अपने स्वामीकी रक्षा करते थे। आजकल अन्य देशोंके किरायेके आदमियोंको सेनामें भरती करनेका रिवाज नहीं रहा है, इसलिए अब स्विस लोग रसोइया, ख़ानसामा आदि बनकर अथवा दूसरी तरहकी नौकरियाँ स्वीकार करके सर्दियोंका मौसम परदेशोंमें बिताते हैं और गर्मियाँ शुरू होते ही अपनी मातृ-भूमिमें पशु पालनेके लिए लौट आते हैं। हमारे देशमें कोंकणके और युक्त प्रान्तके लोग भी ऐसा ही करते हैं। खेती थोड़ी और आदमी ज़्यादह होनेसे दो लाखसे ज़्यादह कोंकणी बंबईकी मिलोंमें आकर काम करते हैं। युक्त प्रान्तके भी लाखों आदमी बम्बई कलकत्ता आदि शहरोंमें जाकर नौकरी और दूसरे काम करते हैं। कुछ लोग बारहों महीने बंबई, कलकत्तेमें रहते हैं और बहुत-से खेतीके मौसममें वापस जाकर अपनी खेतीमें लग जाते हैं।

स्वातंत्र्य-प्रेम

पहाड़ोंमें घर बनाकर रहनेवाले और पहाड़ोंकी खुली हवा खानेवाले लोगोंके मन भी हवाकी तरह स्वतंत्र-वृत्तिके होते हैं। वे परतंत्रता कैसे सहन कर सकते हैं? स्विट्ज़रलैण्ड सात-आठ सौ वर्ष पहले अपने बलवान् पड़ौसी आस्ट्रियाके ताबेमें था। आस्ट्रिया इन पहाड़ी लोगोंपर मनमाने अत्याचार करने लगा। उसने सोचा कि ये मुट्ठीभर अनाड़ी लोग हमारा क्या बिगाड़ सकते हैं? पर स्वतंत्रताके दीवाने इन किसानों और ग्वालोंने आस्ट्रियाका जुआ उतारकर फेंक दिया और स्वतंत्रताकी घोषणा कर दी। आस्ट्रियाने बड़ी बड़ी सेनाएँ बड़े बड़े

नामी सेनापतियोंके साथ इन मुट्ठीभर लोगोंको कुचल डालनेके लिए भेजीं, पर शूर स्विस लोगोंने अपनी अटपटी घाटियोंमें उनके दाँत खट्टे कर दिये। तबसे आठ सौ वर्षसे यह छोटा-सा राष्ट्र स्वतंत्र है। इतना ही नहीं, वह एक प्रजातंत्र राज्य है। कहा जाता है कि स्विट्ज़रलैण्ड सबसे पुराना प्रजातंत्र राष्ट्र है।

संपूर्ण प्रजातंत्र राष्ट्र

स्विट्ज़लैण्डमें बाईस केण्टन अर्थात् ज़िले हैं। हरेक ज़िलेमें 'कम्यून' नामक ग्राम-संस्था है। सारे देशमें सब मिला कर ३१६४ कम्यून हैं और उन्हें अपना लगभग सारा ही कारबार देखनेका अधिकार है, जैसा कि पहले मराठाशाहीमें गाँवोंकी पंचायतोंको रहता था। प्रत्येक कैण्टन राज्य-कार्यमें दूसरे केण्टनसे प्रायः स्वतंत्र होता है। केवल कानून बनानेके लिए सारे कैण्टनोंद्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियोंकी दो लोक-सभाएँ हैं। छोटे छोटे केण्टनोंमें तो सब किसान और गड़रिये ही चरागाहमें इकट्ठे बैठ जाते हैं, अधिकारियोंका निर्वाचन कर लेते हैं और केवल अपने कैण्टनके लिए कानून बना लेते हैं। बड़े कैण्टनोंमें यह काम लोगोंके प्रतिनिधि करते हैं। तथापि महत्त्वके प्रश्नोंपर कैण्टनके हरेक आदमीका मत लिया जाता है। इस प्रकार स्विट्ज़रलैण्डकी राज्य-पद्धति पूरे तौरपर स्वतंत्र है।

स्विट्ज़रलैण्ड यद्यपि भूगोलकी दृष्टिसे एक देश है, फिर भी आश्चर्यकी बात है कि उसमें रहनेवाले लोग एक ही तरहके, एक ही धर्मके, और एक ही भाषाके बोलनेवाले नहीं हैं। पश्चिमकी ओरके स्विस लोगोंकी मातृभाषा फ्रेंच है, दक्षिणवालोंकी इटालियन और पूर्व तथा उत्तरवालोंकी जर्मन। इसी प्रकार ५८ फी सदी लोग प्रोटेस्टेण्ट, ४० रोमन कैथलिक और बाकी यहूदी तथा दूसरे धर्मोंके हैं। भाषा

भिन्न, धर्म भिन्न, फिर भी स्विस लोगोंका राष्ट्र एक है। वे एक ही मातृ-भूमिपर प्रेम रखते हैं, उसीके सेवाके लिए लड़ते हैं और उसीकी छत्रछायामें बैठकर कानून बनाते और मिल-जुलकर राज्य-कार्य चलाते हैं। अनेक धर्मों, अनेक जातियों और अनेक भाषाओंसे भरा हुआ हिन्दुस्थान क्या इस छोटेसे राष्ट्रसे कोई पाठ नहीं सीख सकता?

अभ्यास

१ स्विट्ज़रलैण्डके बर्फ़के खेलोंमें तुम्हें कौन-सा सबसे अधिक पसन्द है? इन खेलोंसे क्या क्या फ़ायदे होते हैं? हरेक खेलका संक्षेपमें वर्णन लिखो। अपनी चित्र-पुस्तकमें एक टोबोगनका चित्र खींचो।

२ मेहनती स्विस किसान प्रतिकूल परिस्थितियोंमें भी पहाड़पर किस तरह खेती करता है, इसका वर्णन एक पत्रमें अपने यहाँके किसी किसानको उद्देश्यकर लिखो।

३ गाढ़ा किया हुआ दूध तुमने देखा है? न देखा हो तो बाज़ारमेंसे लाकर चख देखो। ये दूधके डब्बे, पनीर, मक्खन वगैरह स्विट्ज़रलैण्डसे बहुत आते हैं। इसके लिए यह छोटा-सा देश क्यों अधिक योग्य है? दूसरे कौन कौन देश इन्हीं वस्तुओंको बाहर भेजते हैं?

४ स्विस ग्वालेके जीवनका संक्षिप्त वर्णन करो।

५ स्विस घर जापानी घरोंसे किस बातमें जुदे हैं? इनके घरोंको काहेका भय रहता है?

६ स्विस लोगोंके मुख्य पेशे कौन कौन हैं? उनमेंसे किसी एकका वर्णन करो। स्त्रियाँ इन उद्योगोंमें किस प्रकार मदद करती हैं?

७ स्विस प्रजाके उद्योग-धंधोंके सम्बन्धमें एक बात तुमने देखी होगी कि वे घड़ी जैसी छोटी किन्तु कीमती चीज़ बनाते हैं, पर बहुत बड़ी और भारी वस्तुएँ नहीं बनाते। इसका कोई भौगोलिक कारण बता सकते हो?

८ इतना छोटा-सा देश होनेपर भी स्विट्ज़रलैण्ड अब तक स्वतंत्र कैसे रह सका? उसकी राज्य-पद्धतिका संक्षेपमें वर्णन करो।

९ आल्प्स पर्वतपर चढ़नेके लिए हमें पहलेसे क्या क्या तैयारियाँ करनी पड़ती हैं? कल्पना करो कि तुम वहाँके बर्फ़से ढके हुए किसी ऊँचे पहाड़पर चढ़ने गये थे, तब तुम्हें जो जो कठिनाइयाँ पड़ी हों और जो जो सुन्दर दृश्य दिखाई दिये हों, उनका हूबहू वर्णन करो।

१० आल्प्स पर्वतपर चढ़नेवालेकी मार्ग-दर्शकके विना क्या हालत हो?

११ बर्फ़की नदी क्या है? ये नदियाँ पृथ्वीके किन किन भागोंमें होती हैं? नदियोंके साथ इनका क्या संबंध है?

१२ 'बर्फ़की रेखा' पर एक संक्षिप्त निबंध लिखो। हिमालयपर और उत्तरीय ध्रुव-पर बर्फ़की रेखा कितने फुटकी ऊँचाईपर होगी? भिन्न भिन्न स्थानोंपर इस रेखाकी भिन्न भिन्न ऊँचाई होनेका क्या कारण है?

१३ हमारे यहाँ हिमालयके गौरीशंकर (एवरेस्ट) शिखरपर चढ़नेके लिए, अँग्रेज, जर्मन, और दूसरे यूरोपियन साहसियोंने अनेक बार प्रयत्न किये हैं। फिर भी अभी तक गौरीशंकर अजेय रहा है। इन प्रयत्नोंके सम्बन्धमें कोई लेख या पुस्तक * पढ़कर एक निबन्ध लिखो। उनमेंसे एक-आध प्रयत्नका वर्णन भी करो।

---

१३ पवनचक्कियों और नहरोंके देशके डच

अब तक हमने जो देश देखे, वे समुद्रकी सतहसे कुछ थोड़े ऊँचे थे; कमसे कम उनकी ऊँचाई समुद्रकी सतहके बराबर तो अवश्य थी। अब मैं तुम्हे एक ऐसे अद्भुत देशमें ले चलता हूँ जो समुद्रकी सतहसे नीचा है और जो समुद्रके किनारेपर ही है। यदि तुम उस देशमें समुद्रके किनारेकी जमीनपर खड़े होकर समुद्रकी ओर देखोगे तो तुम्हें पता लगेगा कि समुद्रकी सतह तुम्हारे सिरसे भी ऊँची है और तुम्हारे सिरसे भी अधिक ऊँचाईपर मछलियाँ तैर

---

* हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालयद्वारा प्रकाशित 'जीवटकी कहानियाँ' नामक पुस्तकमें इन प्रयत्नोंका खूब विस्तारसे वर्णन किया गया है।

रही हैं। यदि तुम इस देशके समुद्रके किनारेके किसी घरमें बैठकर बाहर देखोगे तो जहाज़ उस घरकी दूसरी मंज़िलसे भी अधिक ऊँचाईपर दिखाई देंगे।

इस अद्भुत देशको 'हालैंड' कहते हैं और वहाँके रहनेवालोंको डच। यह देश बहुत छोटा है। इसकी लम्बाई सिर्फ १५० मील और चौड़ाई १०० मील है। ऊपरकी हकीकत पढ़कर तुम पूछोगे कि आखिर ये लोग समुद्रकी सतहसे इतने नीचे देशमें रहते कैसे होंगे और यह देश समुद्रके हमलोंसे बचा कैसे रहता है? क्योंकि पानीका तो स्वभाव है कि वह नीचेकी ओर बहता है और असम सतहको भर देता है। 'हॉलैंड' शब्दका मूल अर्थ भी 'हॉलो लैण्ड' अर्थात् नीचाईवाला या बर्तनकी तरह गहरा या खाली प्रदेश है। तब समुद्रका पानी सर्वत्र फैलकर हॉलैण्ड समुद्रमय क्यों नहीं हो गया? हॉलैण्डको ऐसा कौन-सा अगस्त्य ऋषि मिल गया जिसने समुद्रको एक तरफ़ धकेल रक्खा?

इस प्रश्नका उत्तर ही 'डच' लोगोंके साहस, परिश्रम और बुद्धिमत्ताका वर्णन है। वास्तवमें हॉलैण्ड दलदलोंका प्रदेश है और वे भी ऐसे कि जिनमें पूरेके पूरे आदमी गड़प हो जायँ! वहाँ मनुष्योंकी बस्ती कैसे हो और दलदलमें अनाज भी कैसे पैदा किया जाय? फिर भी हालैण्डमें शहरों और गाँवोंकी कमी नहीं है। डच किसान और ग्वाले खूब खुशहाल हैं और बैंकोंमें उनके खाते खुले हुए हैं। जन-संख्याकी दृष्टिसे हॉलैण्ड यूरोपके सब देशोंसे अधिक धनी समझा जाता है।

कुदरतपर विजय

तो यह आश्चर्य कैसे हुआ? वे दलदल कहाँ चले गये? यह सब

मनुष्योंके परिश्रम और बुद्धिसे हुआ ! मनुष्यने कुदरतपर जो विजय प्राप्त की है, हॉलैण्ड उसका एक उत्तम उदाहरण है। दलदलोंके आसपास बहुत होता तो आधे-नंगे अनाड़ी मछुए मछलियाँ पकड़ते हुए झोंपड़ियाँ बनाकर रहते होते; पर डच लोग यह माननेवाले न थे कि 'जाही बिधि राखै राम, ताही बिधि रहिए।' उनमें कुदरतको अपनी बुद्धिमत्तासे अपनी इच्छाके अनुसार नचानेका ज़ोर था। इसलिए वे काममें जुट गये।

उन्होंने दलदलोंके छोटे छोटे हिस्से चुन लिये और उनके चारों ओर दीवारें बनाईं। फिर उन दीवारोंके पास बड़ी बड़ी पवनचक्कियाँ खड़ी कीं। हॉलैण्ड देश एक तो सपाट है और फिर समुद्रके किनारेपर है, इसलिए वहाँ समुद्रकी ओरकी हवा चलती ही रहती है जिससे पवनचक्कियोंके बड़े बड़े पंखे ऊपर नीचे अरहटकी तरह फिरते रहते हैं और यंत्रोंको गति और शक्ति देते हैं। इन पवनचक्कियोंके योगसे पंप चलते हैं और उनके द्वारा दलदलका सारा पानी बाहर निकाल दिया जाता है। यह पानी दीवारोंके बाहर जो नहरें खोदी गई हैं उनके द्वारा समुद्रमें पहुँच जाता है। दीवारोंके अन्दरकी जमीन पानी निकल जानेसे सूख जाती है, तब वहाँ घर बनाये जा सकते हैं और खेती भी की जा सकती है। इस प्रकार डच लोगोंने जमीनका एक एक टुकड़ा लेकर उसे सुखाया है। यह काम बड़ी मेहनतका और उकता देनेवाला था। थोड़ी-सी जमीन तैयार करनेमें कितने ही दिन लग जाते थे और पैसा भी बहुत खर्च होता था। परन्तु मेहनती डच लोगोंने धीरे धीरे अपनी पवनचक्कियों और नहरोंद्वारा सारा देश सूखा बना लिया और उस सूखी जमीनपर

बड़े बड़े शहर बसा दिये, रेलगाड़ियाँ चलाई और उद्योग धंधे शुरू कर दिये।

उनका यह काम वर्षों तक लगातार चलता रहा है और अब तक भी वह बंद नहीं हुआ है। यूरोपके नक़्शेमें हॉलैण्डकी तरफ़ देखो। उसके उत्तरकी ओर 'जायडर ज़ी' (Zuider Zee) नामक समुद्रका बहुत बड़ा उथला हिस्सा है। सागरके इस हिस्सेको भी इसी तरह सुखा देनेकी तैयारी इन डच अगस्त्योंने कर रक्खी है। जहाँ आज हम समुद्र देख रहे हैं वहीं कुछ वर्षोंमें छोटे बड़े शहर दीखने लगेंगे।

समुद्रका मुक़ाबला

अब तुम पूछोगे कि दलदलोंको सुखानेके लिए तो पवनचक्कियों और नहरोंसे काम लिया गया, पर समुद्रको जमीनकी सतहसे इतनी ऊँचाईपर जहाँका तहाँ कैसे बाँध रक्खा गया? इसके लिए डच लोगोंने कौन-सी तरकीब लड़ाई? उन्होंने समुद्रको बाँध रखनेके लिए विशाल बाँध बनाये हैं। इन बाँधोंको वे 'डाइक' (Dyke) कहते हैं और ये तीन-मंज़िले घरोंके बराबर ऊँचे तथा इतने चौड़े हैं कि उनपरसे दो ताँगे एक ही साथ जा सकते हैं। इन बाँधोंको बनानेका काम भी बहुत मेहनतका था। पहली कठिनता तो नींव डालनेकी थी। उस दलदलकी जमीनको कितना ही गहरा खोद डालो, मज़बूत नींव नहीं डाली जा सकती और जब नींव ही मज़बूत न हो तब उसके ऊपर बाँध या घर, कैसे बनाया जाय? वह आगे पीछे कभी न कभी गिर ही पड़े।

डाइक अथवा समुद्री बाँध

डच लोगोंने पहले बड़े बड़े पेड़ोंको काटकर खूब गहरेमें

दो पंक्तियोंमें एकपर एक करके गाड़ दिया और उन दो पंक्तियोंके बीचमें बड़े बड़े पत्थर लाकर भर दिये। हॉलैण्डमें पत्थर बहुत कठिनाईसे मिलते हैं, इसलिए वे जहाजोंमें भर-भरकर बहुत दूरसे लाये गये। फिर इन पत्थर और लकड़ीके बाँधोंपर दोनों तरफ़ मिट्टी डाल दी गई। किन्हीं किन्हीं बाँधोंपर घास और पेड़ भी लगाये गये। इन बड़े बड़े बाँधोंको खड़ा करना जितना कठिन है उनकी रखवाली करना भी उतना ही कठिन है। डच लोग रात-दिन उनकी निगरानी रखते हैं और अपने शत्रु समुद्रको अपने देशकी इंच-भर भी ज़मीन नहीं लेने देते। बरसातमें समुद्र क्षुब्ध रहता है और उसकी बड़ी बड़ी लहरें आकर बाँधोंसे टकराया करती हैं। ऐसे समयमें बाँधकी दीवारमें ज़रा-सी भी दरार पड़ जाय तो समुद्र अपना सिर डालकर उसे और बड़ा कर दे और तब अनेक मीलों तकका प्रदेश जल-मग्न हो जाय, अनेक मनुष्योंका नाश हो जाय। पन्द्रहवीं सदीमें ऐसी ही एक दुर्घटना हो गई थी। बाँधमें दरार करके समुद्र अन्दर घुस गया और उसने अनेक शहर और गाँव पानीमें डुबा दिये। बहुत-से मनुष्य मर गये। ऐसा अनर्थ फिर कभी न हो जाय, इस लिए डच लोग बड़ी सावधानीसे इन बाँधोंकी रक्षा और निगरानी करते रहते हैं। ज़रा-सी भी दरार दिखाई दी कि पहरेदार ख़तरेका घंटा बजा देते हैं और लोग चारों ओरसे दौड़ पड़ते हैं। बस तत्काल ही दरार मूँद दी जाती है।

डचोंने केवल समुद्रको रोक रखनेके लिए ही बाँध नहीं बनाये हैं। उन्होंने सारी नदियों और बड़ी बड़ी नहरोंके भी दोनों तरफ़ आदिसे अन्त तक बाँध बना रक्खे हैं। नदियोंकी सतह भी आसपासकी जमीनकी अपेक्षा ऊँची है, इसलिए नदियोंकी बाढ़का पानी भी आसपासके

प्रदेशमें फैल जानेका ख़तरा रहता है। इसीलिए नदियोंके भी दोनों तरफ़ बाँध बनाने पड़े हैं।

हॉलैण्डकी नहरें

संक्षेपमें, हॉलैण्डमें जहाँ भी जाओ पवनचक्कियाँ, नहरें और बाँध दिखाई देते हैं। वहाँ इतने अधिक बाँध हैं कि उन सबको एक-के बाद एक सिलसिलेसे लगाया जाय तो हजारों मील लम्बी दीवार तैयार हो जाय। इसी तरह वहाँ छोटी-बड़ी नहरें भी बहुत हैं। उन सबकी लंबाई दो हजार मीलसे कम नहीं होगी। कई नहरें इतनी बड़ीं और इतनी गहरीं हैं कि उनमेंसे समुद्रके जहाज़ भी अन्दर आ सकते हैं और कई इतनी छोटी हैं कि वे गन्नेके खेतोंको पानी देनेकी नालियों जैसी जान पड़ती हैं। हॉलैण्डकी राजधानी 'आम्स्तरदाम' के पास जो 'नॉर्थ सी' नामक नहर है वह पन्द्रह मील लम्बी ओर पचीस फुट गहरी है। इस नहरके दोनों ओर बाँधोंकी बड़ी बड़ी दीवारें हैं। यह नहर जमीनसे ऊँची है। इसे समुद्रके साथ जोड़ दिया

पवनचक्कियाँ

गया है। इसमें समुद्रके मुखके पास समुद्रको अटका रखनेवाले बड़े बड़े दरवाज़े हैं।

हॉलैण्डमें जहाँ जाओ वहीं छोटी बड़ी नहरें हैं। डच लोग उनका रास्तेके तौर पर उपयोग करते हैं। गाँवोंके लोगोंके आने-जानेके मार्ग नहरें ही हैं। हरेक किसान और ग्वालेके पास छोटी बड़ी नावें होती हैं। इन नावोंमें गेहूँ, शाक-सब्जी वगैरह भरकर वे शहरोंके बाज़ारोंमें बेचनेके लिए जाते हैं। ग्राहक लोग भी अपनी अपनी नावोंके द्वारा बाज़ारोंको आते हैं। कई शहरोंमें रास्तोंके बजाय नहरें ही हैं और उनमेंसे लोग अपनी अपनी नावोंमें बैठ-कर काम-धंधोंके लिए जाते हुए दिखाई पड़ते हैं। ये नहरें ज़मीनसे ऊँची होती हैं, इस लिए आसपासके घरोंकी मंजिलों पर क्या हो रहा है नाववालोंको स्पष्ट दिखाई देता है। इन घरोंके लड़के अपनी खिड़कियोंमें खड़े होकर नहरोंमेंसे मछलियाँ पकड़ते हैं। स्त्रियाँ दीवारोंपर बड़े बड़े दर्पण लगा रखती हैं और नहरोंमेंसे कौन आ-जा रहा है यह देखा करती हैं। उनके बच्चे जब स्कूलसे लौट रहे होते हैं तब उन्हें इन दर्पणोंमें दिख जाते हैं। घर

हालैंडके गाँवका दृश्य

आनेवाले मेहमानोंको प्रतिबिम्ब भी वे उनमें देख लेती हैं। कहो, कैसा सुभीता है?

सर्दियोंमें नहरका पानी जमकर बर्फ़ बन जाता है और तब सभी जवान लड़के-लड़कियाँ पावोंमें स्केट बाँधकर स्केटिंग करते हुए वेगसे सरकते दिखाई देते हैं। उस समय नहरोंपर जो आदमियोंकी भीड़ होती है, वह देखते ही बनती है।

पवनचक्कियोंका उपयोग

नहरोंको पार करनेके लिए जगह जगह छोटे-बड़े पुल होते हैं। बड़ी नहरोंपर जहाज़ पास आया कि पुल ऊपर उठा दिया जाता है और उसके चले जानेपर वह फिर अपनी जगहपर आ जाता है।

बाँधों और नहरोंकी अपेक्षा पवनचक्कियोंकी संख्या बहुत है। नहरके किनारे थोड़े थोड़े हाथोंकी दूरीपर एक एक पवनचक्की होती है। एक ही साथ तुम्हें आसानीसे पचास-साठ पवनचक्कियाँ दीख सकती हैं। हरेक किसानके पास कमसे कम एक पवनचक्की होती है। इस चक्कीका एक ऊँचा बुर्ज़ होता है और बुर्ज़के ऊपर पचाससे साठ फुट लंबे दो पंख होते हैं, जो हवाके जोरसे ऊपर नीचे फिरते रहते हैं। किन्हीं किन्हीं बुर्जोंके निचले भागमें किसानका घर होता है। पवनचक्कियोंका मुख्य काम किसानोंके खेतोंका गीलापन मिटाना है। क्योंकि दलदलोंके मिट जानेपर भी चारों ओर पानी बहते रहने और जमीन पानीसे नीची होनेके कारण उसमें गीलापन बना रहता है और उसको दूर करना पड़ता है। इसके सिवाय पवनचक्कीकी मददसे आटेकी चक्कियाँ, लकड़ी काटनेकी मशीनें और दूसरी तरहके कारखाने चलाये जाते हैं।

पर ऐसा न समझना चाहिए कि हॉलैण्डके लोग आने जानेके

लिए केवल नहरोंका ही उपयोग करते हैं। नहीं समतल होनेके कारण वहाँ रेलकी सड़कें बनाना भी बहुत सरल है। न तो वहाँ पहाड़ोंको फोड़कर बोगदे बनानेकी जरूरत है और न बड़े बड़े पुल बनानेकी। इसी कारण हॉलैण्डमें रेलोंका जाल बिछा हुआ है। रेलोंके अलावा वहाँ भापसे और बिजलीसे चलनेवाली ट्रामगाड़ियाँ भी हैं।

हॉलैण्डमें सारस सरीखा एक पक्षी होता है जो बाँधोंपर बैठकर उसके कीड़े खाया करता है। ये कीड़े बाँधकी लकड़ीको खा जाते हैं और यह उन्हें खाता है, इसलिए इसे देशका मित्र समझा जाता है। हॉलैण्डमें इसको मारने या चोट पहुँचानेकी कानूनद्वारा मनाही है।

शाक-सब्जीकी खेती

डचोंकी खेती व्यवस्थित है और उसे वे बहुत अच्छी तरह करते हैं। वे गेहूँ, जौ, ओट वगैरह अनाज पैदा करते हैं और सबसे अधिक ध्यान शाक-सब्जीपर देते हैं। अधिकांश किसानोंके घरोंके पिछले भागोंमें गोभी, गाजर, भाजी, प्याज, आलू, और फलोंके पेड़ लगे होते हैं। बगीचोंकी इस खेतीपर किसान खास नजर रखता है। पानीकी बहुतायतसे जहाँ देखो वहाँ छोटे छोटे हरे-भरे खेत दिखाई पड़ते हैं और उनके बीच रुपहरे रंगकी नहरें इधरसे उधर खेलतीं-सी प्रतीत होती हैं।

इंग्लैण्डका ग्वालबाड़ा

डचोंकी विशेष प्रसिद्धि उनकी खेतीके कारण नहीं। वे दूध-दहीके रोजगारमें बहुत प्रसिद्ध हैं। हॉलैण्डसे इंग्लैण्डको इतना अधिक मक्खन और पनीर जाता है कि हँसीमें उसको इंग्लैण्डका ग्वाल-बाड़ा कहते हैं। पानी अधिक होनेसे वहाँ घास बहुत होती है और वह पशुओंको बहुत रुचती है। हॉलैण्डकी कोई काई गाय एक

बारमें दस-पन्द्रह सेर तक बढ़िया और मधुर दूध देती है। गर्मियोंमें गौएँ चरागाहमें ही रक्खी जाती हैं और ग्वालिनें वहाँ सुबह-शाम जाकर दूध दुह लाती हैं। केवल वर्षा और सर्दियोंमें ही उन्हें बाड़ेमें बाँधा जाता हैं। हॉलैण्डमें लकड़ी और पत्थर दोनों ही चीजें दुर्लभ हैं। उन्हें परदेशोंसे लाना पड़ता है और इसीलिए वहाँ घर बड़ी किफ़ायतसे बनाने पड़ते हैं। इसी कारण पशुओंके लिए अलग घर नहीं बनाये जा सकते, उनके बाँधनेका इन्तज़ाम रहनेके घरोंमें ही एक तरफ़ कर लेना पड़ता है। डच लोग पशुओंका बहुत खयाल रखते हैं और घरके आदमियोंकी ही तरह उनके साथ प्रेमसे बर्तते हैं। पशुओंके बाँधनेका कमरा घरके दूसरे कमरोंके ही समान स्वच्छ होता है। डच ग्वाला सर्दियोंमें अपने पशुओंके शरीरपर कम्बल डालना कभी नहीं भूलता। इसके सिवाय वह पशुओंको हररोज़ नहला धुलाकर बिल्कुल स्वच्छ रखता है।

घर-गृहस्थीकी चीजें

डच लोग नींवके नीचे लकड़ियाँ जमाते हैं और फिर उनपर घर बनाते हैं। इसीको लक्ष्य करके एक लेखकने मज़ाकमें लिखा है कि 'डच लोग पेड़ोंपर रहते हैं।' इन लोगोंके घरोंकी दीवारें तो छोटी होती हैं परन्तु छप्पर ऊँचा और खड़ा होता है। इससे वर्षाका पानी तत्काल ही घरपरसे बह जाता है। छप्परपर लाल रंगकी खपरैल होती है और दीवारोंपर सफ़ेदी की हुई होती है। बच्चोंके सोनेके लिए पलंगके बदले दीवारमें ही अलमारी जैसी व्यवस्था की होती है। डचोंका चूल्हा बड़ा मज़ेदार होता है। एक कमरेमें रंग-बिरंगी ईंटोंका एक ऊँचा चबूतरा-सा होता है। यही उनका चूल्हा है। उसपर लोहेका एक छींका लटकता है। इस छींकेमें बरतन टाँग दिये जाते हैं। चबूतरेपर कोयले जलाये कि बस रसोईका काम शुरू हो गया। डच-घरोंकी दूसरी विशेषता है एक शोभाका बिछौना जो कभी काममें नहीं

लाया जाता, सिर्फ शोभाके लिए ही होता है । यह बिछौना यथाशक्ति सुन्दर रक्खा जाता है और हमेशा ढका रहता है । मेहमान, मित्र वगैरह आये कि वह उघाड़ दिया जाता है ।

पोशाक

डच लोगोंके कपड़े मज़ेदार होते हैं । पुरुष और लड़के अपने यहाँके काबुलियोंकी तरह पोले और घेरदार काले मखमलके इज़ार पहनते हैं और कमरमें खूब चौड़ा पट्टा बाँधते हैं । इस पट्टेके बंद बड़े बड़े और चाँदीके होते हैं । पुरुष रंग-बिरंगे छोटे जाकिट पहनते हैं और सिरपर सपाट टोपी लगाते हैं । उनके बाल काबुलियोंकी ही तरह लम्बे गरदन तक लटकते रहते हैं । स्त्रियाँ एकपर एक अनेक तंग लहँगे पहनती हैं । उनकी टोपियाँ लेसकी बनी होती हैं और उनके दोनों तरफ़ कनपटी तक दो कान लटकते होते हैं । त्यौहारके दिन डच स्त्रियाँ एक तरहके बख्तर पहनती हैं जो सोनेके, चाँदीके अथवा सोने-चाँदीका मुलम्मा किये हुए टीनके, होते हैं ।

डच माता और बालक

ये बख़्तर पीढ़ियों तक सावधानीसे रक्खे रहते हैं और समयपर काममें लाये जाते हैं। डच लोग पाँवोंमें लकड़ीके जूते पहनते हैं। ज़मीनमें सील रहनेके कारण वे शायद ही कभी चमड़ेके जूते पहनते हैं। इसी कारण जापानी भी लकड़ीके जूते पहनते हैं। शहरोंके डच अब दूसरे यूरोपियन लोगोंके समान पोशाक पहनने लगे हैं।

स्वच्छताकी हद

डच लोग अपनी स्वच्छता और तड़क-भड़कके लिए दुनिया-भरमें प्रसिद्ध हैं। यदि तुम हॉलैण्ड जाओगे तो एक ही दिनमें तुम्हें इसका पता लग जायगा। उनकी नहरोंके सैकड़ों पुलोंको देखो, उनके घरोंकी दीवारें देखो : ऐसा जान पड़ेगा कि अभी हाल ही रंग किया गया है। नहरोंमें आने-जानेवाले जहाजोंको देखो। उनका डेक रोज़ धो-पोंछकर साफ़ किया जाता है और वे बर्फ़ जैसे सफ़ेद दीखते हैं। उनमें कहीं कोई दाग न होगा। बाहरके लोग समझते हैं कि डच स्वच्छताकी आदतमें अति कर गये हैं। उनके घर इतने स्वच्छ होते हैं कि परदेशी लोग भीतर जाते समय डरके मारे पूरे पैर भी ज़मीनपर नहीं रखते। डच-गृहिणी बड़े सबेरे उठते ही साबुनका पानी, कपड़ेके टुकड़े और झाड़ू लेकर सफाई करनेमें लग जाती है। सबसे पहले वह घरके सामनेका रास्ता साफ़ करती है। फिर घरकी दहलीज, दरवाज़े, खिड़कियाँ आदि साबुनके पानीमें भीगे हुए कपड़ेसे पोंछ पोंछ कर चकाचक कर देती है और लम्बे बाँससे ओने-कौने साफ़ कर डालती है। उसका यह हर रोज़का हमला सिर्फ घरके निर्जीव दरवाजों और खिड़कियोंपर ही नहीं होता है, घरकी मुर्गियाँ, बतकें, सूअर, गौएँ वगैरह जानवर भी उससे नहीं बच पाते। उनपर भी साबुनके पानीका प्रयोग होता

है। विरोध तो वे बेचारे करते ही हैं, पर गृहिणी उनकी क्यों सुनने लगी ? उसके रसोईके बर्तनोंमें तुम मजे़से अपना मुँह देख लो, वे इतने साफ़ और चकाचक होते हैं। घरकी छत तक रोज़ धो-पोंछ कर चमका दी जाती है। पशुओंके बाँधनेकी जगह भी मनुष्योंके सोनेके कमरों जैसी स्वच्छ होती है।

मेहनती स्त्रियाँ

डच स्त्रियाँ बड़ी मेहनत करनेवाली होती हैं। पुरुष खेत अथवा बागके काममें लगे रहते हैं, इसलिए गौओंका दूध निकलाना, उन्हें नहलाना, घास डालना, छाछ-मक्खन बनाना आदि काम स्त्रियाँ ही करती हैं। हाँ, दूध बेचनेका काम पुरुष करते हैं। दूधसे भरे हुए डब्बे एक छोटी-सी गाड़ीमें रक्खे जाते हैं और उसमें दो कुत्ते जोत दिये जाते हैं। फिर ग्वाला हाथमें लगाम लेकर गाड़ीके पीछे पीछे चलता है। दोपहरको काम पूरा होनेपर डच स्त्रियाँ सूत कातती हैं और उसके कपड़े तैयार करती हैं। उनके यहाँ एक बड़ा मजे़दार रिवाज़ है। लड़कीकी माँ अपनी बेटीके जन्मसे लेकर विवाह हो जाने तक उसके लिए सुन्दर सुन्दर कपड़े बुनती रहती है और जब उसका विवाह हो जाता है तब उन सभी कपड़ोंको लेकर लड़की अपनी सुसराल जाती है।

जापानियोंकी तरह डच भी फूलोंके बड़े शौकीन हैं। उनके फूलोंके बग़ीचे देखनेलायक होते हैं। उनको गुलेटाला फूल बहुत पसंद है जिसे अँग्रेज़ीमें ट्यूलिप कहते हैं। एक समय था जब कि उनमें फूलोंका प्रेम बेहद बढ़ गया था। सौ-डेढ़सौ वर्ष पहले ट्यूलिपके फूलोंका एक गुच्छा उतने ही वजनके सोनेकी कीमतमें बिकता था! एक तरहके ट्यूलिपके फूलोंके गुच्छेकी कीमत पाँच हजार रुपये तक होती थी! इस समय भी हॉलैण्डसे ट्यूलिप और दूसरे फूलोंके पौधोंकी हजारों गाँठें

विदेशोंको रवाना होती हैं और हॉलैण्डको उनके बदले हरसाल लाखों रुपये मिलते हैं।

चलो, अब हम शहरोंकी ओर मुड़ें। एक तिहाई डच शहरोंमें ही रहते हैं। वहाँ बीस हज़ारसे ज्यादह आबादीके तीस शहर हैं। सब शहर नहरोंद्वारा एक दूसरेसे जुड़े हुए हैं। शहरोंके मकान चार-पाँच मंज़िलके होते हैं। इन मकानोंकी नींवमें वे पूरेके पूरे पेड़ भर देते हैं। यह बात कितनी ठीक मालूम होती है कि डच लोग पेड़ोंपर रहते हैं! शहरोंमें बड़े बड़े बग़ीचे, उपवन, तरह तरहकी सुन्दर दूकानें और पुस्तकालयों, चित्रशालाओं, बेंकों तथा स्कूलोंकी इमारतें होती हैं। आम्स्तरदाम और रोटरडाम नामक बन्दरगाहोंसे हॉलैण्डका दुनियाके साथ बहुत बड़ा व्यापार होता है। इन बन्दरगाहोंमें भिन्न भिन्न देशोंके व्यापारी जहाज़ आते रहते हैं। हॉलैण्ड एक समुद्री राष्ट्र है। इंग्लैंड और फ्रान्सके भी पहले उसने हिन्दुस्तान और स्ट्रेट्स सेटलमेंटमें व्यापारकी कोठियाँ स्थापित की थीं। इस समय यूरोपके बाहर हॉलैण्डकी अपेक्षा साठ-गुना प्रदेश डच लोगोंके ताबेमें है।

हॉलैण्डमें कोयलेकी खानें नहीं हैं। वह उन्हें जहाज़ोंद्वारा दूसरे देशोंसे लाना पड़ता है। कोयले और पवनचक्कियोंकी सहायतासे हॉलैण्डमें तरह तरहके कपड़े और मशीनोंके कारखाने चलते हैं।

हीरोंके व्यापारका केन्द्र

आम्स्तरडाम शहर जिस कामके कारण दुनियामें बहुत ही प्रसिद्ध है वह है हीरोंके पहलू तराशनेका काम। दुनियामें यह शहर हीरोंके व्यापारका मुख्य केन्द्र है। खानोंसे निकाले हुए हीरे खुरदरे होते हैं और उनमें और भी बहुतसे दोष होते हैं। इस कारण उनकी अच्छी क़ीमत नहीं उठती। परन्तु हीरेको सुंदर आकार दिया जाय और घिस-

पोंछकर साफ़ कर दिया जाय तो वह पहलेसे बहुत अच्छा दीखने लगता है और उसकी क़ीमत भी बढ़ जाती है। पर हीरा एक बहुत ही कठिन पदार्थ है। उसे दूसरे किसी भी पदार्थसे नहीं काटा जा सकता। निहाईपर रखकर उसपर कितने ही घन मारो, वह टूटता नहीं। सन् १४५६ ई० में बरघेम नामक जौहरीने परीक्षासे सिद्ध किया कि हीरेको हीरेपर घिसा जाय तो दोनोंमेंसे बारीक कण झड़ते हैं और उन कणोंसे दूसरे हीरे घिसे जावें तो वे साफ़ हो जाते हैं।

बरघेमकी इस खोजके बाद डच लोगोंने हीरोंपर पहलू तराशने और उन्हें साफ़ करनेका काम शुरू किया। अपनी बुद्धिमत्ता और मेहनतके ज़ोरपर वे इस कलामें निष्णात हो गये। इस समय आम्सतर-डाममें हीरोंके पहलू तराशनेके साठसे अधिक कारखाने हैं और हर एक कारखानेमें सैंकड़ों लोग काम करते हैं। उनमें लड़के और स्त्रियाँ भी होती हैं। इन कारखानोंका मुख्य काम, खानोंके हीरोंका जो भाग चपटा, बैठा हुआ और खुरदरा होता है उसको तराशकर अच्छे आकारका बनाना है। इस कामके लिए वे एक चाकू जैसे औजारका उपयोग करते हैं जिसमें बारीक नोकदार हीरा लगा रहता है। पहलू तराशनेका काम बड़ी होशियारी और जोखिमका है। ज़रा-सा भी कम या ज़्यादह भाग कट गया कि हजारों रुपयेका नुकसान हो जाता है। इस कामके लिए भाफसे घूमनेवाले एक पहियेका उपयोग किया जाता है। इस पहियेपर हीरेकी बुकनी लगी होती है। पहिया एक मिनटमें पन्द्रह सौ बार फिरता है। इसी पहियेपर हीरेको रखकर उसको मनचाहा आकार दिया जाता है और उसपर पहलू तराशे जाते हैं। हीरेकी बुकनीका एक भी कण व्यर्थ नहीं जाने दिया जाता। बड़े हीरोंके गहने बनाये जाते हैं और छोटे हीरे काच

काटने, धातुपर नक्काशीका काम करने, छेद करने आदि बहुतसे दूसरे कामोंमें आते हैं।

डच लोग चीनी मिट्टीके बर्तन तैयार करनेमें भी बहुत होशियार हैं। खास करके डेल्फ नामके गाँवके लोग चीनी मिट्टीके बर्तनोंपर पवनचक्की, जहाज, नहरें वगैरह हॉलैण्डके दृश्योंके नीले रंगके बहुत सुन्दर चित्र बनाते हैं।

दलदलोंसे भरा हुआ, संकीर्ण, आधुनिक जगत्की लकड़ी, पत्थर और कोयले जैसी महत्त्वपूर्ण चीजोंसे रहित, शीत कटिबंधका यह एक छोटा-सा देश प्रतिकूल परिस्थितियोंके होते हुए भी अपनी हिम्मत और लगनसे कैसे आगे बढ़ गया और उसने अपनी सुख-सुविधाओंके लिए प्रकृतिका स्वरूप किस तरह बदल डाला, हॉलैण्ड इसका एक बहुत अच्छा उदाहरण है।

अभ्यास

१ हॉलैण्ड पृथ्वीके दूसरे देशोंकी अपेक्षा भौगोलिक दृष्टिसे किस प्रकार भिन्न है और इस देशकी प्रजाने अपनी प्राकृतिक कठिनाइयोंको दूर करनेके लिए क्या क्या किया?

२ डाइक और पवनचक्कियाँ न होतीं तो आज हॉलैण्डकी क्या हालत होती? एक कल्पना-चित्र खींचो।

३ 'डाइक'के सम्बन्धमें पीटर नामक डच लड़केकी कहानी तुमने पढ़ी है? न पढ़ी हो तो अपने स्कूलके पुस्तकालयमें तलाश करके उसे अवश्य पढ़ लो।

४ हॉलैण्डको पवनचक्कियोंका देश क्यों कहते हैं? इन पवनचक्कियोंको बनानेका क्या कारण है?

५ हॉलैण्डकी नहरोंके उपयोग इस विषयपर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखो। हमारे देशकी सिन्धकी नहरोंसे ये नहरें किस बातमें भिन्न हैं?

६ यह कल्पना करके कि तुम हॉलैण्डमें मुसाफिरी कर रहे हो, आसपासके प्रदेशमें जो कुछ देखो उसका सुन्दर वर्णन एक छोटेसे लेखमें करो।

७ हॉलैण्डको इंग्लैण्डका 'ग्वालबाड़ा' क्यों कहा जाता है? हमारे यहाँ हॉलैण्डसे क्या क्या चीजें आती हैं?

८ डच लोग अपनी स्वच्छता और तड़क-भड़कके लिए बहुत प्रसिद्ध हैं। उनके घरोंकी रचना और उनके पहनावे आदिकी विशेषताओंका वर्णन करके उक्त कथनको समझाओ।

९ यह समझाते हुए कि डच स्त्रियाँ दिन-भर किस प्रकार घरके काम-काजमें मशगूल रहती हैं, तुम अपनी छोटी बहिनको एक पत्र लिखो।

१० डच लोग हीरेके हुनरमें किस प्रकार कुशल हुए? हीरोंपर पहलू तराशनेकी रीतिका वर्णन करो।

११ डच लोगोंके जीवनमें तुम्हें जो कुछ नवीन और जानने लायक मालूम हुआ है, उसका संक्षेपमें वर्णन करो।

१२ 'डच लोग पेड़ोंपर रहते हैं' यह बात किस तरह सच्ची है?

१३ डच लोगोंका भूतकाल एक समय बहुत उज्ज्वल था, अध्ययन करके उसकी उनकी वर्तमान परिस्थितिसे तुलना करो।

---

१४ सहकारी आन्दोलनके नेता डेन

डेन्मार्क हॉलैण्डके पड़ोसका ही एक छोटा-सा देश है। यह देश सहकारी आन्दोलनके विषयमें अगुआ गिना जाता है। सहकारी संस्थाएँ देखनेके लिए वहाँ अनेक देशोंके लोग जाते हैं। तो चलो, हम भी उनके साथ चलें। डेन्मार्कमें हिन्दुस्तानके सीखने लायक बहुत कुछ है। हिन्दुस्तानके सैकड़े अस्सी आदमी किसान हैं पर वे कंगाल हालतमें हैं और उन्हें एक समय भी मुश्किलसे भोजन मिलता है। डेन लोगोंका भी मुख्य पेशा खेती है; पर वे इतने सुखी और सम्पन्न हैं कि यूरोपके धनी देशोंमें डेन्मार्कका नम्बर दूसरा है! अलावा इसके, डेन्मार्कमें हिन्दुस्तानहीकी तरह छोटी खेतीकी पद्धति है

और इस पद्धतिको वहाँके साहसी और बुद्धिमान् लोगोंने पूरे तौरपर सफल कर दिखाया है। चलो, हम इसी पद्धतिको देखें।

स्वावलम्बी प्रजाका सहकार

डेन्मार्क बिल्कुल छोटा देश है। उसका क्षेत्रफल हमारे सिन्ध-प्रांतका तीन-पंचमांश भी न होगा। डेन्मार्कमें स्लेशविग हॉलस्टेन एक बहुत उपजाऊ प्रान्त था। जर्मनीने उसे जबर्दस्ती इस छोटे अशक्त राष्ट्रसे छीनकर मानों उसके कलेजेका मांस ही काट लिया। इससे पहले फ्रेंच बादशाह नैपोलियनके आक्रमणोंसे डेन्मार्क तहस नहस हो गया था और डेन लोगोंके पास कुछ भी न बचा था। ऐसी विकट परिस्थितिमें भी डेन्मार्क हिम्मत न हारा और उसने मेहनत करके थोड़े ही समयमें अपनी उन्नति कर ली। स्लेशविग हॉलस्टेन हाथसे निकल जानेपर रेतीली पथरीली और बंजड़ जमीन ही बच रही थी। उसने पहले पड़ती जमीनको सुधारने ओर जोतनेका प्रयत्न किया। जहाँ घने जंगल थे वहाँ रेलकी सड़कें बनाकर खेती शुरू की, नहरें और बाँध डालकर रेतीली जमीन उपजाऊ बनाई, गढ़ों और नालोंको भरकर जमीन सपाट की और जेटलेण्ड द्वीपकी १७७२ एकड़ पड़ती जमीन उपजाऊ बनाई। डेन लोगोंने खेतीके लिए दो बड़ी नदियोंका भी उपयोग किया। इन नदियोंपर अनेक पुल बनाये, अनेक बाँध डाले, जगह जगह खोदकर नदियोंके पाट गहरे किये और लाखों रुपये खर्च करके उक्त नदियोंके पानीसे खेतोंको सींचा। थोड़े ही समयमें उन्होंने २५००० एकड़ रेतीली और बंजर जमीनपर खेती की और ७५००० एकड़ जमीनपर फलोंके पेड़ लगाये। हमारी जमीनपर कौन-सी फसल किस तरह हो सकेगी, जमीन जोतनेकी पद्धति सुधारकर उसका उपजाऊपन कैसे बढ़ाया जाय: यह निश्चित

करनेके लिए चार सौ खेत परीक्षाके लिए रख छोड़े और उन्होंने उनमें नये नये प्रयोग करना शुरू किये।

यह सब अद्भुत काम लोगोंकी खानगी संस्थाओंने ही कर दिखाया। उन्होंने सरकारकी राह नहीं देखी। कुछ लोग इकट्ठे हो गये, पूँजी इकट्ठी कर ली, एकाध पड़ती जमीनके प्रदेशमें खेती शुरू की, नहरें खोदीं, बाँध बाँधे और रेलगाड़ीके रास्ते तैयार किये। इस तरहकी सहयोग-पद्धतिसे खानगी तौरपर ही डेन्मार्कने अपनी जमीनको सुधार लिया।

जमीन तो तैयार हो गई, पर उसे जोतनेवाले किसान क्या करें? डेन्मार्कमें आदमियोंकी कमी न थी। उस समय गरीब बेकार चाहे जितने मिल सकते थे। मजदूरोंकी मजदूरी बहुत कम थी। गरीब लोग पेटके लिए थोड़ी-सी मजूरी लेकर पशुओंकी तरह जुतते थे और धनी लोग इस परिस्थितिसे लाभ उठाकर मजूरीकी दर कम करते जाते थे। इस कारण देशमें कंगाल बहुत बढ़ गये। उन्हें ठिकाने लगाना सरकारका कर्तव्य था और डेन्मार्कमें कारखाने या बड़े कारबार अधिक न थे, इसलिए उन्हें खेतीमें लगानेके सिवाय और कोई उपाय न रहा।

डेन्मार्ककी खेती

लोगोंमें जमीनके विषयमें अपनापनका भाव पैदा हो, अपनी जमीनको लोग मशक्कत करके जोतें बोयें और सुखी हों : इसके लिए डेन्मार्क सरकारने एक नई तरहकी लगान-पद्धति जारी की। सरकारने एक कुटुंबकी गुजरके लिए काफी हों, ऐसे सात एकड़से लेकर दस एकड़ तकके जमीनके टुकड़े किये और उनमेंका एक एक टुकड़ा अच्छे चालचलनके किसी भी पुरुष या अविवाहित स्त्रीको जोतनेके

लिए दे दिया। यदि किसीने एकके साथ एक लगे हुए दो-चार टुकड़े खरीदकर अधिक परिमाणमें खेती करना चाही, तो उसे इसकी इजाज़त नहीं दी गई।

हर किसीको अपनी पसंदगीका अथवा पंचोंद्वारा चुना हुआ खेत मिल जाता था। इस खेतपर उसे अपने रहनेके लिए घर, बाड़ा और गल्ला रखनेका कोठा बनाना पड़ता था और कुछ पशु तथा खेतीके औजार खरीद लेने पड़ते थे।

इन सबके लिए बेचारे गरीब रुपये कहाँसे लाते? इसका प्रबन्ध भी सरकारने किया। खेत, घर, पशु और औजारोंकी कीमतका $\frac{१}{१०}$ भाग किसानोंने अपने आप जमा किया और $\frac{९}{१०}$ भाग तीन रुपया सैकड़ेके ब्याजसे सरकारने कर्ज दिया। यह मदद दो किश्तोंमें दी गई और इसे लौटानेकी मियाद ९३ वर्षकी रक्खी गई। रकम चुकानेकी रीति भी बड़ी आसान है। कर्जदारको हरसाल ब्याजके तीन रुपया और मूलधनका एक रुपया मिलाकर चार रुपया सरकारको देने पड़ते हैं। इस प्रकार थोड़ी थोड़ी रकमकी किश्तोंमें सरकारी लगानके साथ सारा कर्ज़ चुकाना भी लोगोंके लिए सरल हो गया है।

इस छोटे छोटे खेतोंकी पद्धतिसे डेन्मार्कका अपार कल्याण हुआ। सबके खेत पास पास और समान होनेसे बड़े ज़मीनदार और गरीब किसानका विषम भेद नष्ट हो गया। इंग्लैण्डके रायडर हैगर्ड नामके एक ज़मीनदारने डेन्मार्कके किसानोंकी परिस्थितिको अपनी आँखोंसे देखकर इस प्रकार लिखा है—

"डेन्मार्कमें बिलकुल निचले दर्ज़ेका मज़दूर भी आज पूरा पूरा स्वावलंबी बन गया है। इंग्लैण्डकी सरकारको अंधे, लँगड़े, लूले, बूढ़े और अनाथ लोगोंके लिए हरसाल लाखों रुपये खर्चने पड़ते

हैं। औद्योगिक उन्नतिमें दुनियाके तमाम देशोंसे आगे बढ़े हुए जर्मनीकी राजधानीमें पचास हजार भिखारी अन्न-वस्त्रके बिना भटकते फिरते हैं। दूसरी तरफ़ इस छोटेसे देशमें हथेली-भर ज़मीन जोतनेवाले लोगोंमें भी पूर्ण स्वावलम्बी, आत्मविश्वासी और मजबूत जवान तयार हो रहे हैं।"

आदर्श किसान

यह तो हुई डेन्मार्कके छोटे छोटे खेतोंकी कहानी। आगेकी कहानी इससे भी अधिक अद्भुत और मनोरंजक है। डेन्मार्कका जल-वायु खेतीके बहुत अनुकूल नहीं है। एक तो आसपास समुद्र है और फिर हॉलैण्डकी तरह सारा प्रदेश नीचा है: इस कारण समुद्रकी तरफ़से आये हुए कोहरेसे वहाँका सारा आकाश धुँधला बना रहता है, हवा ठंडी रहती है और बहुत-सी फ़सलें हो नहीं सकतीं। फिर भी डेन किसान गेहूँ, जौ, आलू, ओट वगैरहकी खेती ठीक तरहसे कर रहे थे कि इतनेमें जर्मनीने सन् १८७२ में अपनी खेतीकी रक्षाके लिए विदेशसे आनेवाले मालपर ज़बर्दस्त कर लगा दिया। इससे डेन्मार्कका अनाज जर्मनीमें जाना बंद हो गया।

ऐसी विकट परिस्थितिमें डेन्मार्क सरकारने यह जाहिर किया कि क्योंकि हमारे अनाजकी विदेशमें खप नहीं रही, इससे अब हमें ज्यादा अनाज़ पैदा करना बन्द करके दूध देनेवाले पशुओंकी पैदायश बढ़ाकर दूध-दहीका कारबार शुरू करना चाहिए। एकदम मानो जादूकी लकड़ी फिर गई हो, इस तरह डेन्मार्ककी हालत बदल गई। लोग ज्यादह अनाज पैदा करनेके बदले पशुओंके चरनेके लिए चरागाह रखने लगे और पशुओंकी संख्या बढ़ाने लगे।

पर वे इतना करके ही नहीं रह गये। हरएक डेन किसानने सौ-पचास

गौएँ रखकर अपने पाँवोंपर खड़े होकर ग्वालेका ही रोज़गार किया होता तो डेन्मार्कका दुनियामें इतना नाम न होता और शायद मैंने भी यह अध्याय न लिखा होता। डेन्मार्कके लोगोंकी असली करामात दिखाई देती है उनकी सहकारी पद्धतिके व्यवहारमें। इसका उपयोग उन्होंने अकेले दूध-दहीके रोज़गारमें ही नहीं अपने सभी तरहके व्यवहारोंमें करके दिखाया है।

सहकारी आन्दोलन क्या है?

पहले हमें यह समझ लेना चाहिए कि सहकारी आन्दोलन क्या है! बूढ़े बाप और उसके लड़कोंकी कहानी सभी जानते हैं। बूढ़ेके लड़कोंने एक एक लकड़ी सहज ही तोड़ डाली, पर उन्हीं लकड़ियोंका गट्ठा उनमेंसे कोई न तोड़ सका। इसका कारण है एकताका,—सहकारका बल। जो काम अकेला आदमी नहीं कर सकता अथवा जिसे करनेके लिए उसको बहुत समय और बहुत परिश्रम लगता है, उसी कामको यदि अनेक आदमी मिलकर करें तो आसानीसे कर सकते हैं। यही है सहकारी आन्दोलन। इसकी एक दूसरी बाजू भी है। एक आदमी अपनी मालिकीकी एक दूकान खोलता है। गाँववालोंको उसकी दूकानके मालकी गरज होती है, इसलिए सारे गाँवको वह दूकानदार मनमानी कीमतपर अपना माल बेचता है। अर्थात् सारे गाँवका पैसा उस अकेले दूकानदारकी जेबमें जाता है। इसके बदले यदि सारा गाँव मिलकर चन्दा करके अपनी मालिकीकी एक दूकान खोल ले तो वही माल सारे गाँवको थोड़ी कीमतमें मिल सकता है। ऐसी ही दूकानको सहकारी सिद्धान्तपर चलाई हुई दूकान कहते हैं। एक-दो उदाहरणोंसे स्पष्ट हो

जायगा कि इस सहकारिताके अभावसे हमारे देशके लोगोंकी कितनी ठगाई और कितना हानि होती है।

इलाहाबाद, दिल्ली अथवा दूसरे शहरोंमें घी बेचनेवालोंकी दूकानोंपर 'रोहतकका या हाथरसका बढ़िया घी' इस तरहके बोर्ड लगे रहते हैं, और लोग उन दूकानोंमेंसे रुपयेका दस या बारह छटाक घी खरीदते हैं। यह घी असलमें किसकी मालिकीका है? रोहतक या हाथरसके गरीब किसानोंका। इन रोहतक आदि स्थानोंमें साहूकार लोग थैलियोंमें रेजगारी भरे हुए बाजारके नाकोंपर बैठे रहते हैं और घी लानेवाले किसानोंको रोककर उनसे सस्तेमें वह घी खरीद लेते हैं। कोई कोई कोई साहूकार तो पहलेसे ही किसानोंको कर्ज़ देकर बाँध रखते हैं और मनमाने भावसे उन्हें अपना घी देनेके लिए लाचार करते हैं। ये साहूकार डटकर नफ़ा लेकर उसे इलाहाबाद, दिल्ली वगैरह शहरोंको भेजते हैं। फिर वहाँके दूकानदार अपना नफ़ा चढ़ाकर ग्राहकोंको बेचते हैं। अर्थात् उन किसानोंको भी नुकसान और ग्राहकोंको भी नुकसान। केवल बीचके, मुफ्तके मध्यस्थोंको,— साहूकार और दूकानदारोंको फायदा! इसकी अपेक्षा यदि घी-मक्खनवाले अपना सहकारी मंडल बना लें और सबका मक्खन या घी इकट्ठा करके सीधे दिल्ली इलाहाबादको भेजकर अपनी ही सहकारी दूकानपर बेचनेका प्रबन्ध करें तो उन्हें अपने मालका सन्तोषजनक बदला मिल जाय और ग्राहकोंको भी ठीक भावपर घी मिलने लगे। इन बीचके दलालोंको अलग करके माल पैदा करनेवालों और माल खरीदनेवालोंका सीधा सम्बन्ध जोड़ देना ही इस सहकारी आन्दोलनका मुख्य उद्देश्य है।

इसी तरह शहरोंके चौक बाजारोंमें देहाती किसान सिरपर शाक-

सब्जी और फल-मूलके टोकरे रखकर दस दस बारह बारह मीलसे पैदल चलकर आते हैं। उनको रोज़ कितनी तकलीफ़ होती है और कितना नुकसान होता है! उन्हें थोड़ी-सी कीमतकी चीजोंके लिए घर-बार छोड़कर दस-बारह मील आना पड़ता है। दलालोंकी मार्फ़त कुँजड़े कमसे कम भावमें इन लोगोंका माल खरीद लेते हैं और शाक-बाजारमें बेचते हैं। यदि इन शाक-सब्जीवालोंके लिए सहकारी मंडल स्थापित किये जायँ तो घर बैठे ही उनकी शाक-सब्जी और उनके फलोंको बेचनेकी व्यवस्था हो सकती है और घर बैठे उन्हें ज्यादह दाम मिल सकते हैं।

खैर। अब हम डेन्मार्ककी तरफ़ चलें। सारे डेन्मार्कमें सहकारी संस्थाओंका जाल फैला हुआ है। वहाँ साहूकार, गुमाश्ते और आढ़तियोंका नाम भी नहीं है। गाँवके आदमियोंको जो कुछ माल बेचना होता है माल बेचनेवाली सहकारी संस्था उसे उनके घरोंसे ले जाती है और उन्हें कपड़े-लत्ते, अनाज वगैरह जिन जिन चीज़ोंकी जरूरत होती है वे सब घर बैठे पहुँचा देती है। इस प्रकार गाँवका हरेक आदमी इन दोनों प्रकारकी,—माल ले जानेवाली और चीज़ें बेचनेवाली संस्थाओंका एक प्रकारसे मालिक ही होता है क्योंकि उस संस्थामें चन्देके रूपमें उसकी पूँजी लगी हुई होती है।

मक्खन, मुर्गियाँ और सूअर

पहले लिखा जा चुका है कि सन् १८७२ के बाद डेन्मार्कने चरागाहें रखकर और गौएँ पालकर दूध-दहीका रोजगार ज़ोरोंसे शुरू किया। इस काममें इस छोटेसे देशको आश्चर्यजनक फ़ायदा हुआ। सारी दुनियामें जितना मक्खन तैयार होता है उसका २८ प्रतिशत केवल डेन्मार्क तैयार करता है। वहाँसे सिर्फ़ इंग्लैण्डको ही हरसाल

पचास लाख सेर मक्खन जाता है। इसके सिवाय लाखों सेर मक्खन और और देशोंको भी ऐसे डब्बोंमें बंद करके भेजा जाता है जिनमें हवा भीतर नहीं जा सकती।

डेन्मार्कका दूसरा बड़ा व्यापार मुर्गियोंके अंडोंका है। वह लाखों अंडे भी हरसाल विदेशोंको भेजता है। इंग्लैण्डके लोग बहुत करके डेन्मार्कके ही अंडे खाते हैं।

डेन्मार्कका तीसरा रोज़गार सूअर पालना और उनका मांस बेचना है। यह काम उन्हें अचानक ही सूझ गया। दूधका मक्खन निकाल लेनेपर जो छाछ रहती है वह सूअरोंको बहुत अच्छी लगती है और उससे वे खूब मोटे ताज़े हो जाते हैं। वह छाछ व्यर्थ न जाय, इस ख्यालसे डेन्मार्कने सूअर पालना शुरू किया। वह हर साल बहुत अधिक सूअरका मांस बाहर भेजता है। ये सब व्यापार सहकार-सिद्धान्तपर ही चलाये जाते हैं। डेन्मार्ककी जो सबसे प्रधान सहकारी संस्था है सन् १९०९ में उसके अधिकारमें लगभग ११५७ दूध-घर थे और उनमें १,५७००० लोग काम करते थे। दूध और मक्खनकी केवल परीक्षा करनेवाली संस्थाएँ ही ५१९ थीं और उनमें दस हज़ार लोग लगे हुए थे।

इन सब संस्थाओंके सभासद किसान ही होते हैं और उनकी सारी पूँजी भी किसानोंकी ही होती है। यह पूँजी छोटे छोटे भागोंके (शेअरोंके) रूपमें जमा की जाती है। इसलिए छोटे किसान भी इस संस्थाके शेअर ले सकते हैं। हरेक संस्थाका अपना दूध-घर होता है और उसमें उस संस्थाके किसानोंके घरका दूध हररोज़ सबेरे लाया जाता है। जिन किसानोंका जितना दूध आता है उतने ही प्रमाणमें उनका उस संस्थामें हिस्सा होता है। इस पद्धतिके कारण

किसानपर मालके प्रमाणमें जिम्मेदारी रहती है और मालके ही प्रमाणमें उसको मुनाफा मिलता है।

डेन्मार्कके सहकारी दूध-घर

इन दूध-घरोंमें दूधके मक्खन, मलाई और पनीर वगैरह पदार्थ तैयार होते हैं और फिर वे बिक्रीके लिए रवाना किये जाते हैं। एक ऐसे ही दूध-घरका परिचय यहाँ दिया जाता है—

बोसीपका सहकारी दूध-घर मानो एक बड़ा भारी कारखाना ही है। २६४ किसान उसके हिस्सेदार हैं। उनके घरका दूध लानेके लिए १८ मोटरगाड़ियाँ रखी हुई हैं। इस दूध-घरसे हर रोज़ तीन हज़ार सेर दूध तो वहाँके घरोंमें ही बिक जाता है। मक्खन और पनीर वगैरह इससे अलग। मोटरगाड़ी सबेरे छः बजे ही सभासदोंके घरोंका दूध कारखानेमें ले आती है। आते ही दूधका तोल किया जाता है और वह रजिस्टरमें दर्ज़ कर दिया जाता है। दूधमें मिलावट न हो इसलिए हरएक मालिकके दूधके अलग अलग नमूने रक्खे जाते हैं और उन नमूनोंके दूधमें

दूध-गाडी

जो घीका प्रमाण रहता है उसके अनुसार उनकी कीमत बिठाई जाती है। इसके सिवाय इस संस्थाके अधिकारी अक्सर हरेकके घर जाकर दूधकी शुद्धता और उसके कसकी परीक्षा करते हैं। दूध उड़ेल देनेके बाद खाली हुए डब्बोंको औंधा रख दिया जाता है। उनमेंसे

जो बूँद बूँद दूध टपकता है वही एकट्ठा होकर लगभग चालीस-पचास सेर हो जाता है! इसके बाद दूधका मक्खन बनता है। उसके बनानेकी रीति इस प्रकार है—

पहले फ़िल्टर पद्धतिसे दूध छान लिया जाता है। फिर वह एक बड़े बर्तनमें जाता है। इस बर्तनके आसपास भाफ़की नलियाँ होती हैं जिनके योगसे दूध गरम हो जाता है। इसके बाद दूध एक दूसरे बर्तनमें जाता है। इस बर्तनको यंत्रकी सहायतासे चक्राकार इतनी तेजीसे घुमाया जाता है कि एक मिनटमें वह छः हजार बार घूम जाता है। इस गतिके कारण दूध इतना मथा जाता है कि दूधकी चिकनी बूँदें हलकी होनेसे बर्तनके बीचमें आ जाती हैं और एक नलीमेंसे मलाई और दूसरीमेंसे मलाईरहित दूध (इसे मशीनका दूध कहते हैं) बाहर निकल आता है। फिर इस मशीनके दूधको पहलेकी अपेक्षा अधिक तपाते हैं तब वह दूसरी टंकीमें जा पड़ता है। वहाँ उसका वज़न किया जाता है। फिर सभासद किसानोंके घर उनके भेजे हुए दूधका पौना हिस्सा दूध वापिस भेज दिया जाता है और बाकी चौथाई हिस्सा दूध एक दूसरे कारखानेमें भेजकर वहाँ उसका पनीर बनाया जाता है। इसके बाद मलाई-मक्खन डब्बोंमें भर कर बेचनेके लिए रवाना कर दिया जाता है।

यही दूध-घर लोगोंको दूध देते हैं। आधा सेर दूधके मुहरबंद डब्बे घर घर बंधीके अनुसार भेज दिये जाते हैं। दूधवाले ग्वालोंको इस बातकी चिन्ता नहीं करनी पड़ती कि दूध कैसे और किसे बेचें। वे दूध-दहीकी संस्थाके सभासद हो गये कि बस सब झंझटोंसे छुट्टी पा गये। हमारे यहाँके बड़े बड़े शहरोंके आसपासके सैकड़ों गाँवोंसे हजारों स्त्रियाँ बीसों रास्तोंसे न जाने कितना दूध लाया करती हैं।

यदि इन लोगोंके लिए जगह जगह दूध-घर स्थापित हो जायँ तो कितना अच्छा हो !

डेन्मार्कमें केवल दूध-दहीकी ही सहकारी संस्थाएँ नहीं हैं। सहकार तो डेन लोगोंके रोम रोममें रम गया है। कोई भी छोटा-मोटा काम करना होता है तो वे सहकारसे ही करते हैं। उनकी पशु पैदा करनेवाली सरकारी संस्थाएँ बहुत प्रसिद्ध हैं जो पशुओंकी सेवा और उनकी शास्त्रोक्त पैदायशकी तरफ़ बहुत ध्यान देती हैं। किसानोंकी खाद, बीज, औज़ार और कपड़े-लत्तोंकी ज़रूरतोंकी पूर्तिके लिए भी वहाँ अनेक सहकारी संस्थाएँ हैं। उनमें एक बहुत बड़ी राष्ट्रीय संस्था है जिसकी ८०० शाखाएँ हैं और हरेक गाँवमें एक एक उपशाखा है। हर गाँवमें इस शाखाकी एक एक कोठी है जिसमें किसानोंकी ज़रूरतके सब पदार्थ मिल जाते हैं। कोपनहागन शहरमें मालका एक बहुत बड़ा गोदाम है। इस गोदाममेंसे सब शाखाओंको माल पहुँचाया जाता है।

डेन्मार्कमें गौओंको चारा देनेवाली छः संस्थाएँ हैं। ये संस्थाएँ दूध-दहीकी ६०० संस्थाओंने ही स्थापित की हैं। इनके सिवाय उन्होंने खाद देनेवाली भी चार बड़ी संस्थाएँ स्थापित की हैं। और, इन संस्थाओंने दूध-दहीके कारखानेमें लगनेवाली यंत्र-सामग्री जुटानेवाली एक अलग ही संस्था खोल ली है। इस प्रकार बड़ी बड़ी सहकारी संस्थाओंने दूसरी आनुषंगिक जरूरतें मिटानेके लिए अनेक छोटी मोटी संस्थाएँ भी बना ली हैं। वहाँका हरएक किसान साधारण तौरपर आठ-दस सहकारी संस्थाओंका सभासद होता है।

इस अद्भुत सहकारिताके कारण डेन लोग थोड़े ही समयमें, थोड़े खर्चमें और थोड़ी मेहनतसे अपना माल पैदा कर सकते हैं और जिस देशके जिस बाज़ारमें ज़्यादह कीमत मिलती है वहाँ ले जाकर

बेच सकते हैं। इसके सिवाय जरूरतकी चीजें घर बैठे ही उन्हें ठीक कीमतमें मिल जाती हैं। इसीसे डेन लोग बहुत धनवान् हो गये हैं और वहाँके हरएक किसानका सेविंग्स बैंकमें खाता है। गरज यह कि डेन्मार्कको हम सहकारकी विजय कह सकते हैं।*

अभ्यास

१ डेन्मार्कने खेतीमें अपनी उन्नति किस प्रकार की? इस कार्यमें सरकारने क्या सहायता दी?

२ 'सहकारी आन्दोलन' का अर्थ और सिद्धान्त समझाओ। इससे डेन्मार्कको क्या फायदा हुआ?

३ हमारे देशमें भी सहकारी सिद्धान्तपर अनेक संस्थाएँ चल रही हैं। उनका अध्ययन करके संक्षिप्त परिचय दो।

४ ऐसी कल्पना करके कि डेन्मार्कके किसी दूध-घरमें तुम गये हो, उसका विस्तारसहित वर्णन करो। तुम्हारे प्रान्तमें भी ऐसे दूध-घर अथवा 'डेयरी' हैं। तुमने यदि देखे हों तो उनका वर्णन करो।

५ डेन्मार्कको 'सहकारकी विजय' कहना कहाँ तक सत्य है, यह इस प्रकरणमें पढ़ी हुई बातोंके आधारपर लिखो।

---

१५ सुन्दर यूनानके बातूनी लोग

यूरोपसे बिदा लेनेके पहले हमें उस खण्डका एक देश जरूर देख लेना चाहिए। वह देश यूनान या ग्रीस है और वहाँके रहनेवालोंको यूनानी या ग्रीक कहते हैं। ग्रीस यूरोपका बहुत पिछड़ा हुआ देश है। खेती, उद्योग-धंधों और कारखानोंके विषयमें तो उससे कुछ नहीं सीखा जा सकता, पर उसको देखनेका मतलब दूसरा ही है।

आज हम जिसे पाश्चात्य सुधार अथवा संस्कृति कहते हैं उसका

---

* यह प्रकरण रा० सहकारी कृष्णके लेखके आधारपर लिखा गया है।

उद्गम ग्रीससे ही हुआ है। जब यूरोपके इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी वगैरह सभ्य देश जंगली हालतमें थे, तब ग्रीस खूब बढ़ा चढ़ा हुआ था। ग्रीक शहर बड़े धनी थे, वहाँकी राज्य-व्यवस्था उत्तम थी और कला-कौशल, साहित्य और तत्त्वज्ञानमें ग्रीसने बड़ी उन्नति की थी।

प्राकृतिक सौन्दर्य

ग्रीसमें यूरोपके अन्य देशोंकी तरह कोहरेका अथवा ठंडका साम्राज्य नहीं है। वहाँ सूर्यका प्रकाश भरपूर और सुखदायक रहता है। वहाँकी हवा इतनी साफ़ होती है कि बड़ी दूरतकका,—अनेकों मीलोंका आसपासका विस्तृत प्रदेश एकदम नज़र आ जाता है। ग्रीसके तीन तरफ़ नीले समुद्रका घेरा है और सारा प्रदेश पहाड़ी है। जहाँ जाओ वहाँ बर्फ़से ढँके हुए ऊँचे सफ़ेद पर्वत और हरी-भरी घाटियाँ तथा दर्रे दिखाई देते हैं। जहाँ तहाँसे समुद्र अन्दर घुस आया है और मानो समुद्र और पर्वत लुक्का-चोरीका खेल खेल रहे हैं। ऊँचे सफ़ेद पर्वत, हरी-भरी घाटियाँ, नीले समुद्रकी अन्दर पैठी हुई खाड़ियाँ, पीले-से जैतूनके वृक्षोंसे भरे हुए मैदान और सबसे बढ़कर स्वच्छ खुले हुए वातावरणसे ऐसा मालूम होता है कि यूनान नाना रंगोंका एक ग़ालीचा ही है।

प्रकृति और मनुष्य

इस सुन्दर देशकी रचना ही ऐसी है कि वहाँके मनुष्योंको भव्य और सुन्दर विचार सूझें और उनके हाथों भव्य और सुन्दर कार्य हों। प्राचीन कालके ग्रीक ऐसे ही थे। वे सौन्दर्य और भव्यताके उपासक थे। वे प्रयत्न करते रहते थे कि उनके शरीर सुन्दर और भव्य हों और वे ऐसे ही दिखाई भी दें। इसके लिए स्त्रियाँ और पुरुष नियमपूर्वक व्यायाम करते थे। ग्रीक कारीगरोंने भव्य और

सुन्दर मूर्तियाँ बनाईं थीं। उनमेंसे कुछ आज भी हमें दिखाई देती हैं। उनके मंदिर, सभा-भवन और खेलनेके स्थान भव्य और सुन्दर होते थे। उनकी शुरू की हुई शिल्प-कलाका एक खास सम्प्रदाय है जो आज भी आदरकी दृष्टिसे देखा जाता है, और जिसका प्रायः सर्वत्र ही अनुकरण किया जाता है।
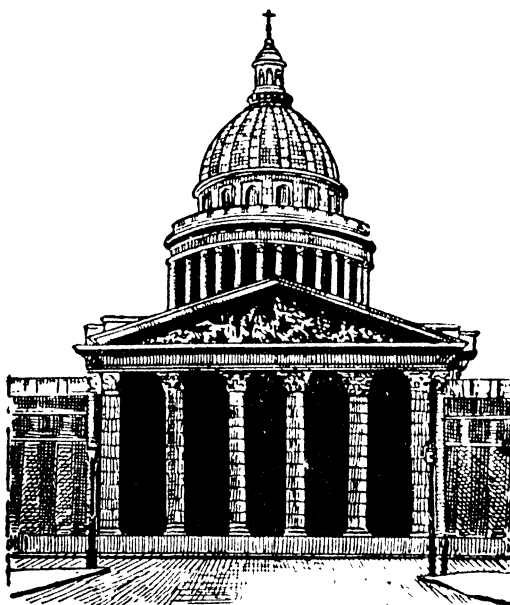
ग्रीक पद्धतिकी पेरिसकी 'पैंथियान' नामक इमारत

शिल्पकला और संस्कृतिका स्थान

ग्रीसकी राजधानी एथेन्सके पास एक्रोपॉलिस नामकी एक ऊँची पहाड़ी है। उसपर आज भी ग्रीक शिल्पकलाके उत्तम नमूनोंके अवशेष दिखाई पड़ते हैं और उन्हें देखनेके लिए सभी देशोंके लोग

बड़े भक्ति-भावसे आते हैं। वहाँ पार्थेनन नामका एक सुन्दर मन्दिर
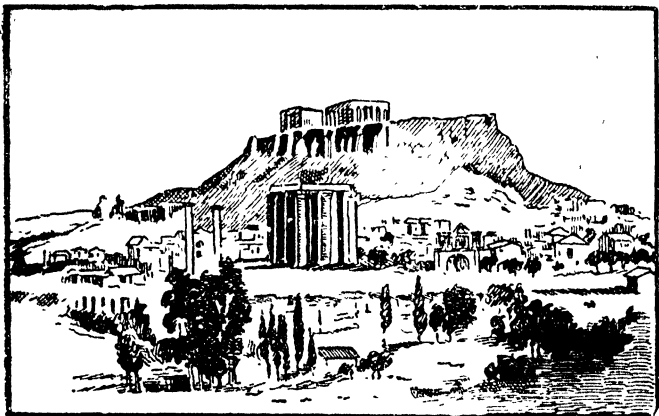
एक्रोपॉलिस
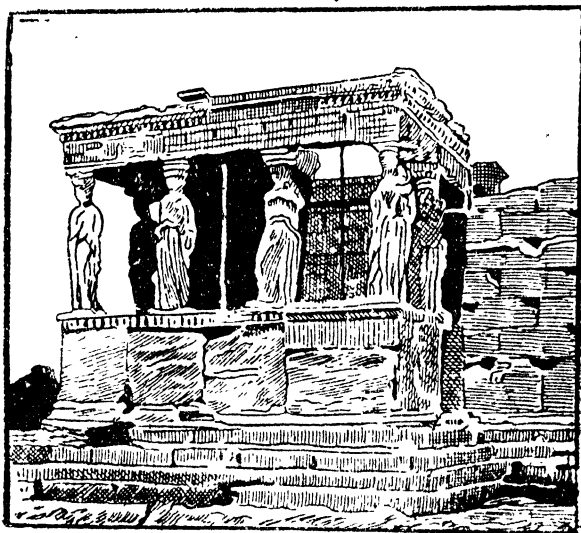
खंभोंकी जगह लगे हुए सुन्दर स्त्रियोंके पुतलोंका मन्दिर

है जिसमें खंभोंकी जगह स्त्रियोंकी मूर्तियाँ लगाई गई हैं। एथीना नामक युद्ध-देवताकी एक अड़तीस फीट ऊँची संगमरमर और सोनेकी सुन्दर प्रतिमा है। इसी तरहके और भी अनेक शिल्प-कलाके अवशेष हैं।

ग्रीक-साहित्यका आदि-कवि होमर बहुत प्रसिद्ध है। उसने इलियड नामका एक रामायण जैसा महाकाव्य लिखा है। कहते हैं कि वह अंधा था। वहाँके सुकरात (साक्रेटीज़), अफलातून (प्लेटो) और अरस्तू (अरिस्टाटल) आदि दार्शनिकोंके नाम तो प्रायः सभी जानते हैं। सुकरात जन्म-भर प्रश्नोत्तर-पद्धतिसे यही सिद्ध करता रहा कि मनुष्यका ज्ञान कितना थोड़ा है और वास्तवमें वह कितना अज्ञानी है! उसका शिष्य प्लेटो था। उसके सृष्टिकी उत्पत्ति-सम्बन्धी विचार वेदान्तसे मिलते जुलते हैं। उसकी भाषा काव्यमय और सरल है। उसका शिष्य अरस्तू इतना भारी विद्वान् था कि उसने उस समयके सभी ज्ञात शास्त्रोंपर,—दर्शन, नीतिशास्त्र, राजनीति, तर्कशास्त्र, ज्योतिष वगैरहपर ग्रंथ-रचना की थी। यूरोपमें उसके ग्रन्थोंका इतना मान था कि पन्द्रहवीं सदी तक वहाँके

ग्रीसका वाल्मीकि अंधा होमर

विद्वान् उन्हें वेद-वाक्यकी तरह प्रमाण मानते थे। अरस्तूके मतके विरुद्ध बोलना या लिखना सोलहवीं सदी तक वहाँ अपराध समझा जाता था!

वक्तृत्व या बोलनेकी कलामें डिमॉस्थेनीज़ नामक वक्ता बहुत प्रसिद्ध है। वीरतामें भी प्राचीन ग्रीक किसीसे हारे नहीं। उनके लियोनिडास नामक योद्धाने सिर्फ चौदह सौ जवानोंकी मददसे 'थर्मोपली' नामक घाटीमें उस समयकी अजेय समझी जानेवाली ईरान-साम्राज्यकी विशाल सेनासे टक्कर ली थी। और ग्रीक-बादशाह सिकन्दरको कौन नहीं जानता? उसने अपनी बत्तीस सालकी उम्रमें ही यूनानसे लेकर पंजाबके उस पार तकके सारे राज्य जीत लिये थे। कहते हैं कि जीतनेके लिए जब और राज्य न बचे, तब उसकी आँखोंमें आँसू भर आये थे!

प्रजातंत्र नगर-राज्य

ग्रीसमें पहाड़ोंके नीचे घाटियोंमें बसे हुए अनेक शहर थे। उस समय एक घाटीसे दूसरी घाटीमें जानेके रास्ते आसान न थे, इस कारण उनमें परस्पर बहुत कम सम्बन्ध रहता था। प्रत्येक शहर और उसके आसपासका दस-पन्द्रह मीलतकका प्रदेश स्वतंत्र और स्वयं पूर्ण था। प्रत्येक शहर एक एक राज्य था। शहरके सयाने लोग शामको सभा-गृहमें इकट्ठे होते, अपने शहरके लायक कानून बनाते और युद्ध तथा सन्धि वगैरहका निश्चय करते थे। इस प्रकार ये पुराने नगर-राज्य वास्तवमें प्रजा-तंत्र राज्य थे और उन्हींने यूरोपको प्रजा-तंत्रका पाठ सिखाया।

ओलिम्पिक खेल

यद्यपि राज्यसम्बन्धी काम-काजोंमें एक शहरका दूसरे शहरसे सम्बन्ध न था, फिर भी राष्ट्रीय खेलोंकी होड़में सारे शहर बड़े चावसे भाग लेते थे। ये खेल ओलिम्पिया नामक विशाल मैदानमें चार सालमें एक बार होते थे। चार वर्षोंके इस कालको ओलिम्पियाड कहते थे

और इसीपरसे ग्रीक लोग समयकी गणना करते थे। इससे मालूम होता है कि ग्रीक लोक शारीरिक सौन्दर्य और उसके विकासके लिए खेलोंको कितना महत्त्व देते थे। इस ओलिम्पिया मैदानके मध्य-भागमें ग्रीक देवता ज़्यूसका सुन्दर मन्दिर था और उसके आसपास स्नान-गृह, कुश्तीके अखाड़े, सभा-गृह, रसोईघर वगैरहकी सुन्दर इमारतें थीं। इस मैदानके जुदे जुदे हिस्सोंमें दौड़ने, घुड़-दौड़ करने, घोड़ोंका रथ चलाने, कूदने, भाला फेंकने, कुश्ती लड़ने, बॉक्सिंग (मुक्केबाजी) करने वगैरह अनेक खेलोंकी होड़ें लगती थीं और विजयी वीरोंको कुमारियोंद्वारा बुने हुए चोगे पहनाये जाते थे। ये खेल ज़्यूस देवताको प्रसन्न करनेके लिए होते थे क्योंकि ग्रीक लोक मानते थे कि मनकी तरह शरीरको भी मज़बूत और फुर्तीला बनाना एक धार्मिक कर्तव्य है। आजकल यूरोपमें जगतके तमाम खिलाड़ियोंके लिए जो अनेक खेलोंकी होड़ें होती हैं उनको भी प्राचीन ग्रीक खेलोंके सम्मानमें 'ओलिम्पिक' कहते हैं।

अब हम प्राचीन ग्रीससे अर्वाचीन ग्रीसकी तरफ़ चलें। दर्रों और घाटियोंमें रहनेवाले अर्वाचीन ग्रीक लोग भी प्राचीन ग्रीकोंके ही समान स्वतंत्रता और समताके प्रेमी हैं। ग्रीसमें मालिक अपने नौकरोंके साथ बराबरीके नाते हाथ मिलाता है और इसमें उसे शर्म नहीं मालूम होती। इतना ही नहीं, एक धनी ग्रीक रास्तोंपर बूट-पॉलिश करनेवाले गरीबके साथ भी हाथ मिलानेमें संकोच नहीं करता।

साहसी ग्रीक व्यापारी

समुद्रके किनारे रहनेके कारण ग्रीक लोगोंका प्राचीन कालसे ही समुद्र-यात्राका पेशा रहा है। पुराने समयसे ही भूमध्य समुद्रका व्यापार ग्रीक लोगोंके हाथमें है। भूमध्य समुद्रके प्रत्येक बन्दरपर तुम्हें मालसे भरे हुए ग्रीक जहाज़ मिलेंगे। इस समुद्रके पासके तमाम

शहरोंमें ग्रीकोंकी बड़ी बड़ी कोठियाँ हैं। कहते हैं कि ग्रीक लोगोंकी संख्या देशकी अपेक्षा परदेशमें अधिक है।

समुद्रपर बड़ी सावधानी रखनी पड़ती है। हवा कब ज़ोरसे चलेगी, कब बन्द हो जायगी, तूफ़ान कब उठेगा: इन बातोंपर समुद्र-यात्रियोंको हमेशा ध्यान देना पड़ता है। समुद्रके अनुभवोंसे ग्रीक लोग बहुत चालाक और चतुर हो गये हैं। व्यापारमें वे बहुत होशियार हैं। यूरोपमें यह कहावत प्रचलित है कि एक ग्रीक दो यहूदियोंके बराबर होता है। यहूदियोंको हम यूरोपके मारवाड़ी कह सकते हैं। एक बन्दरगाहसे दूसरे बन्दरगाहपर भटकते रहनेकी आदत होनेसे ग्रीकोंको एक ही ठौरपर बैठे रहना पसन्द नहीं। वह उन्हें एक तरहकी सज़ा ही मालूम पड़ती है। उनके पाँवोंमें मानो भौंरी रहती है। शरीरके साथ साथ उनका मन भी चंचल बन गया है। जीभ तो उनकी सबेरेसे शामतक कैंचीकी तरह चलती ही रहती है। ग्रीकोंके गलेमें मणियोंकी एक माला होती है। उधर तो जीभ चलती है और इधर उँगलियाँ इन मणियोंसे खेलती हैं।

ग्रीक लोग जरूरतसे ज़्यादा चौकस होते हैं। उनको छोटी मोटी हरेक बातकी जानकारी चाहिए। तुम उनके चक्करमें आये कि वे तुमपर प्रश्नोंकी झड़ी लगा देंगे। सवालपर सवाल पूछते चले जाना उनकी एक आदत ही बन गई है। और कुछ न होगा तो वे यही पूछ बैठेंगे कि तुमने जिस नाईसे बाल कटाये उसका क्या नाम है? तुमने बूटपर पालिश कब कराई? पर उनसे चुप न रहा जायगा।

ग्रीकोंको गाँवमें या एकान्तमें रहना पसंद नहीं। कैसे पसंद हो सकता है? वहाँ गप्पें हाँकनेके लिए दूकानें, होटलें कहाँ रक्खी हैं? परन्तु किसानोंको तो अपने खेतोंपर ही रहना पड़ता है।

करंट और शहद

ग्रीसमें दो चीज़ोंकी पैदायश अधिक है : करंट नामके बेदाना अंगूरकी और जैतूनके फलोंकी। हज़ारों स्त्रियाँ, पुरुष और लड़के बगीचोंमें अंगूर तोड़नेके काममें लगे रहते हैं। इन अंगूरोंको पहले धूपमे डाल कर अच्छी तरह सुखाते हैं और फिर संदूकोंमें बन्द करके बन्दरगाहोंको रवाना कर देते हैं। ग्रीकोंको इस बेदाने अंगूरसे हरसाल लाखों रुपयेकी कमाई होती है। जैतूनका फल, जिसे ओलिव्ह कहते हैं खानेमें अच्छा लगता है और उसका तेल भी निकाला जाता है। ग्रीक इस तेलके साथ रोटी खाते हैं। स्विस लोगोंकी तरह उन्हें दूध, दही या मक्खन नहीं मिलता क्योंकि वहाँ घास बहुत कम होता है, और इसलिए कोई पशु नहीं पालता। वे घरपर केवल भात ही पकाते हैं। रोटी, मांसकी तरकारी, तली हुई मछलियाँ आदि चीजें वे भटियारोंकी दूकानोंसे ले आते हैं। वे भटियारेको कटी हुई मछलियाँ, मांसके टुकड़े, प्याज, आटा वगैरह दे आते हैं और वह उन्हें पैसे लेकर पका देता है।

ग्रीसमें सबेरे रास्तोंपर देखो तो गड़रिये बहुत-सी बकरियोंको लिए हुए घर घर फिरते दिखाई देंगे। घरकी नौकरानी अपने सामने उनसे दूध दुहा लेती है। वहाँ गौएँ न होनेसे लोग बकरीका ही दूध पीते हैं।

ग्रीकोंको शहद बहुत पसन्द है। वहाँ हिमिटसका शहद बहुत प्रसिद्ध है। मधुमक्खियाँ 'हिमिटस' पहाड़के पीले फूलोंका पराग अपने छत्तोंमें इकट्ठा करती हैं, इसीलिए उसका यह नाम पड़ गया है। ग्रीसमें परागसे भरे हुए सुगंधित फूल बहुत होते हैं, इसलिए शहद भी बहुत होता है। वहाँके रास्तोंपर बूढ़ी स्त्रियाँ पेड़की डालियोंमें लगे हुए शहदके छत्ते बेचती हुई दिखाई देती हैं।

ग्रीसमें शहदकी तरह नारंगियाँ और अंजीर भी रास्तोंपर बहुत

कम दामोंमें मिलते हैं। छोटे लड़के इन फलोंको गधोंपर लादे हुए बेचते फिरते हैं। वहाँ रास्तोंपर बेचते फिरनेकी चाल अधिक है। किसी ग्रीक शहरमें घूमने निकलो तो तुम्हें कोई प्याज और लहसुनकी मालाएँ बेचता दिखाई देगा, कोई लेमोनेड और मिठाई लेकर घूमता हुआ दिखाई देगा और कोई मुर्गियाँ लिये घर घर फिरता मिलेगा। घरोंकी स्त्रियाँ मुर्गियोंको हाथमें लेकर ज़ोरसे दबाकर देखती हैं और तब पसंद आती हैं तो उन्हें खरीद लेती हैं। जूतोंकी मरम्मत करनेवाले चमार हमारे यहाँकी तरह ही रास्तोंपर अपना काम करते हैं। और रास्तोंमें बूट-पॉलिश करनेवाले न मिलें, यह हो नहीं सकता। बूट जरा भी मैला हुआ कि वह ग्रीकोंको नहीं सुहाता; इसालिए, वे दिनमें दो दो चार चार दफा पालिश कराते हैं। उनके बूट दूसरे यूरोपियनोंकी तरह नहीं होते। वे बहुधा लाल रंगके होते हैं और उनकी नोक दक्षिणी जूतोंकी तरह ऊपरकी ओर मुड़ी होती है। नोकपर काले रंगका एक शानदार फुँदना लगा होता है।

आजकलका ग्रीक आदमी

पोशाक भी ग्रीकोंकी अन्य यूरोपियनोंसे निराली होती है। वे घुटने तकका तंग पाजामा पहनते हैं और घुटने तकके ही अँगरखेपर कसीदेका एक जाकेट। उनके सिरपर लाल रंगकी एक टोपी होती है, जिसमें एक लम्बा फुँदना लटकता रहता है।

इस समयका ग्रीक देश व्यापारकी कमाईसे धनवान् होता जा रहा है। शिक्षाकी तरफ़ भी उसका

बहुत ध्यान है, पर पूर्वजोंकी असाधारण बुद्धिमत्ता, कला-कौशल और पराक्रम अब उसमें नहीं। वह सब पूर्वजोंके साथ ही चला गया।

अभ्यास

१ यह किस आधारपर कहा जाता है कि प्राचीन कालमें ग्रीसका स्थान संस्कृतिकी दृष्टिसे बहुत ऊँचा था? ग्रीसने उस जमानेमें जिन जिन विषयोंमें प्रसिद्धि प्राप्त की थी, उनका वर्णन करो।

२ जगत्-प्रसिद्ध वक्ता बननेसे पहले डिमॉस्थेनीज़को बहुत सी कठिनाइयोंका मुक़ाबला करना पड़ा था। इस सम्बन्धका कोई लेख या पुस्तक पढ़ो और अपने शब्दोंमें समझाओ कि उन सबपर उसने कैसे विजय पाई?

३ लियोनिडासने ईरानके शाहके साथ थर्मापलीमें जो युद्ध किया था उसे ग्रीसके इतिहासमेंसे पढ़कर एक छोटेसे लेखमें सुन्दरताके साथ लिखो।

४ प्राचीन ग्रीसमें कौन कौन महापुरुष हुए हैं? उनके जीवन और कार्योंके विषयमें जो कुछ तुम जानते हो लिखो।

५ प्राचीन ग्रीसके ओलिम्पिक खेलोंके विषयमें संक्षेपसे लिखो। आजकल भी ओलिम्पिक खेल चल पड़े हैं। उनके सम्बन्धमें जानकारी प्राप्त करके एक छोटा सा निबन्ध लिखो।

६ आधुनिक ग्रीक लोगोंकी विशेषताओंका वर्णन करो।

७ आजकलके ग्रीक लोगोंको बातूनी क्यों कहते हैं?

८ तुमने भूगोलमें पढ़ा होगा कि ग्रीसका जलवायु 'भूमध्यसमुद्रका जलवायु' कहा जाता है। इस विषयमें तुम अधिक क्या जानते हो?

---

१६ भेड़ोंके देशके आस्ट्रेलियन

अब हम एक निराले ही खंडकी ओर चलें। हमारे देशकी आग्नेय दिशामें आस्ट्रेलिया नामका देश है। यह दुनियाके तमाम द्वीपोंमें सबसे बड़ा है। आस्ट्रेलिया और उसके आसपासके छोटे मोटे द्वीपोंको मिलाकर आस्ट्रेलेशिया नामका एक जुदा ही पृथ्वी-खंड माना जाता है।

आस्ट्रेलियाका पता एक अँग्रेज़ने लगाया, इसलिए वह अँग्रेजोंके अधिकारमें आ गया। शुरू शुरूम ब्रिटिश सरकार जन्म-कैद या कालेपानीकी सजा पाये हुए कैदियोंको वहाँ भेजा करती थी; परन्तु, बादमें यह माल्रूम होनेपर कि उसके किनारेका प्रदेश रहनेलायक है अँग्रेज़ लोग ही वहाँ जाकर रहने लगे। तो भी टापूके विस्तारके मुकाबलेमें वहाँकी आबादी बहुत ही थोड़ी है। सन् १९२३ में आस्ट्रेलियाकी जनसंख्या सिर्फ साठ लाख थी। अर्थात् अकेले लण्डन शहरमें जितने आदमी रहते हैं उनसे भी कम आदमी उस लम्बे चौड़े देशमें रहते हैं। पूर्वकी ओरके किनारेका हिस्सा छोड़ दिया जाय तो शेष आस्ट्रेलियाके लगभग नौ दशांश हिस्सेमें एक वर्ग मीलमें औसतन सिर्फ दो आदमी रहते हैं।

निर्जन प्रदेश

इतने बड़े देशमें इतने कम आदमी क्यों? इस टापूको आबाद करना शुरू किये सौ वर्षसे ज़्यादा हो गये। इतने ही समयमें अमेरिकामें लाखों नये आदमी जा बसे, उन्होंने जंगल काटे, जमीनें जोतीं और शहर बसाये तथा इस समय वहाँ पूर्वी किनारेसे लेकर पश्चिमी किनारेतक चींटियोंकी तरह आदमी ही आदमी नज़र आते हैं। आस्ट्रेलियामें बस्ती न बढ़नेका कारण यह है कि यदि उसका समुद्र-किनारेका हिस्सा छोड़ दिया जाय तो वह एक बड़ा भारी मरुस्थल ही है जिसमें इतनी गर्मी पड़ती है कि ठंडी हवामें पले हुए यूरोपियन लोग वहाँ रह नहीं सकते। इस लम्बे-चौड़े प्रदेशमें वर्षा बहुत कम होती है और नदियाँ भी नहीं हैं।

भेड़ोंका वतन

ऐसी हालतमें बसनेके लिए गये हुए लोग यदि समुद्रके किनारेसे

ही चिपटकर रह जायँ तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। किनारोंके इस संकीर्ण भागमें ही उन्होंने बड़े बड़े शहर बसाये और उद्योग-धंधे शुरू किये। इन लोगोंका मुख्य रोज़गार भेड़ें पालकर उनका ऊन और मांस बेचना है। सारी दुनियामें जितनी भेड़ें हैं उनका १/६ भाग अकेले आस्ट्रेलियामें है। सन् १९१९में वहाँ आठ करोड़ चालीस लाख भेड़ें थीं। एक आदमीने हिसाब लगाया है कि यदि आस्ट्रेलियाकी तमाम भेड़ोंको इकट्ठा करके और उनकी चार पंक्तियाँ बनाकर विषुव-वृत्तपर खड़ा कर दिया जाय, तो सारी पृथ्वीके चारों ओर इस जीवित ऊनका चौहरा कमर-पट्टा बन जाय। बस्ती होनेके पहले यहाँ भेड़ें नहीं थीं। शुरूके आनेवालोंने देखा कि पूर्व और दक्षिण भागमें एक तरहकी छोटी छोटी घास होती है जो वर्षा कम होनेपर भी उगती है और जो जमीन उपजाऊ न हो वह भी उसके लिए बुरी नहीं। यह समझते ही उन्होंने यूरोपसे अच्छी जातिकी एक घास लाकर लगाई और स्पेनसे 'मेरिनो' नामकी खूब ऊन देनेवाली भेड़ोंको लाकर उनकी पैदायश शुरू की। इस प्रकार उन्होंने वहाँकी परिस्थिति देखकर अपना काम शुरू कर दिया और उससे वे धनवान् और सुखी हो गये।

गड़रिये राजे

हमारे यहाँ एक गड़रियेके पास बहुत हुई तो सौ दो सौ भेड़ें होती हैं। परन्तु आस्ट्रेलियाके धनी गड़रियोंके पास एक एक लाख भेड़ें हैं! इनको गड़रियोंका राजा कहते हैं। परन्तु गड़रिया कहनेसे कोई उन्हें कंधेपर कम्बल रक्खे भेड़ोंके पीछे पीछे फिरनेवाला आधा नंगा अनाड़ी न समझ ले। नहीं, वे खूब पढ़े-लिखे हैं। कीमती कपड़े पहनते हैं, शानदार बंगलोंमें रहते हैं और मोटरगाड़ियोंमें घूमते

हैं। चलो, अब हम एक ऐसे गड़रियेके ही घर चलें जिससे उनके रहन-सहनका परिचय मिल जाय।

तो चलो, अब हम रेलगाड़ीमें बैठ जायँ। हमारे यहाँकी तरह यहाँ भी तेज़ गर्मी पड़ रही है, फिर भी प्यास बुझानेकी चिन्ता करनेकी ज़रूरत नहीं। रेलगाड़ीके डब्बोंके बाहर पानीसे भरे हुए कपड़ेके डोल लटके हुए हैं और उनके पास ही पीनेके प्याले भी हैं। कितना अच्छा इन्तजाम है! हमारे यहाँकी रेलोंमें भी ऐसा इन्तज़ाम हो जाय तो कितना चैन मिले! खिड़कीमेंसे देखो। जगह जगह हरे-भरे गेहूँ लहरा रहे हैं। गेहूँको वर्षा कम चाहिए। वहाँ दस इंचसे कम वर्षामें ही गेहूँकी अच्छी फसल हो जाती है। खिड़कियोंमेंसे हमेशा भेड़ोंका ही दृश्य दिखाई देता है। जहाँ देखो वहाँ दूर क्षितिज तक भेड़ें ही भेड़ें दिखाई देती हैं! लो देखो, स्टेशन आ गया। वे देखो, हमारे मित्र गड़रिया साहब प्लेट फार्मपर खड़े हैं। हमें ले जानेके लिए वे अपनी मोटर भी ले आये हैं। तो चलो, बैठ जाओ मोटरमें।

गड़रियेकी मुलाकात

यह देखो, हम अपने मित्रके घर आ पहुँचे। क्या कहते हो? यह तो एक छोटा-सा गाँव है? हाँ भाई, सचमुच ही ऐसा है। ये सब घर हमारे मित्रके ही हैं। बीचमें वह जो बड़ा बंगला दिखाई देता है उसमें वे खुद रहते हैं। कितना मजबूत घर है! बंगलेके आसपास ऑफिस, गोदाम, लुहार-घर, बढ़ई-घर वगैरह बहुत-सी इमारतें हैं और बाकीके घरोंमें उनके नौकर रहते हैं। मित्रके बंगलेके पीछे क्रिकेट, गोल्फ और क्रोके खेलनेके मैदान भी हैं। ऑस्ट्रेलियन लोग खेलनेके बड़े शौक़ीन हैं। हरएक ऑस्ट्रेलियन स्त्री-पुरुष हफ्तेमें कुछ न कुछ समय खेलनेमें अवश्य बिताता है। उनके हरेक शहरमें क्रिकेटके मैदान

और मनोरंजक खेलोंके लिए बगीचे हैं। परन्तु हमारे मित्र तो शहरसे सैकड़ों मील दूर चरागाहमें रहते हैं। ऐसी हालतमें वे और उनके नौकर खेलनेके लिए उतनी दूर कैसे जा सकते हैं? उनके खेलनेका सुभीता उन्हें अपने यहाँ करना ही चाहिए।

घरोंके ऊपर लोहेके हौज तो देखो, कैसे हैं। वे पानी इकट्ठा करनेके लिए हैं। वहाँ वर्षा कम होती है। कहीं वर्षाका पानी व्यर्थ न चला जाय, इसके लिए यह उपाय किया गया है। हमारे यहाँ मारवाड़में भी घरोंमें बड़े बड़े हौज रहते हैं जिनमें वर्षाका पानी संग्रह किया जाता है। गुजरातमें भी कुछ स्थानोंमें पानी इकट्ठा कर रखनेके लिए मकानकी छतोंपर चूनेके पक्के हौज बनाये जाते हैं।

घुड़सवार गड़रिये

हमारे मित्रकी मालिकीका एक पचास-साठ मील लंबा चरागाह है। उसके चारों ओर तारोंकी बाड़ लगी हुई है। चरागाहमें जहाँ तहाँ भेड़ें विचर रही हैं। यही उनका बाड़ा है। चरागाहकी घास खाना, जगह जगह पानीका इन्तजाम है उसे पीना और वहीं सो जाना, यही उनकी दिनचर्या है। रखवाले नौकर घोड़ोंपर चढ़े घूमते रहते हैं। इतने बड़े चरागाहमें इतनी भेड़ोंकी रखवाली पैदल चल कर कैसे हो सकती है? कोई कोई चरागाह तो इतने बड़े हैं कि उनके चारों ओर घोड़ेपर फिरनेमें भी कई दिन लग जाते हैं। इसीलिए आस्ट्रेलियनोंका काम घोड़ोंके बिना नहीं चल सकता। वे बढ़िया नस्लके घोड़े पैदा करते हैं। वेलर नामक नस्लके घोड़े बहुत सुन्दर और मजबूत होते हैं। सन् १९१९ ई० में इस देशमें पचीस लाख घोड़े थे। जिस तरह धीवरोंके लड़के बचपनसे ही अपनी नावें निडर होकर समुद्रमें छोड़ देते हैं, उसी तरह आस्ट्रेलियन लड़के बिना

जीनके ही घोड़ोंकी नंगी पीठपर बैठ जाते हैं और बिना लगाम जहाँ चाहे वहाँ चल देते हैं। अस्तबलकी जरूरत नहीं, घोड़े भी मजेसे चरागाहमें चरते फिरते हैं।

रखवाले बहुत होशियार और फुर्तीले होने चाहिए। घोड़ेपर अच्छी तरह बैठना, हजारों भेड़ोंको झटपट गिन लेना और एक जगह इकट्ठा कर लेना, उन्हें कोई दुख दर्द हो तो उसको पहचानना, इलाज करना, नहलाना-धुलाना, ऊन उतारना और काटना वगैरह सारे काम उन्हें आने चाहिए।

बीस-पचीस मील चलना तो आस्ट्रेलियन गड़रियोंकी किसी गिनतीमें ही नहीं। उनके लड़के क्रिकेट खेलनेके लिए दस दस मील मजेसे चले जाते हैं और वापिस आ जाते हैं। लड़कियाँ अपनी सहेलियोंसे मिलने-भेंटनेके लिए आसानीसे बीस बीस मील चली जाती हैं। यह सब घोड़ोंपर ही होता है। आजकल तो मोटरोंका भी उपयोग होने लगा है और एक गड़रियेके घरसे पचास-साठ मील दूर रहनेवाले दूसरे गड़रियेके घरके साथ टेलीफोनका सम्बन्ध भी हो गया है। वे घरमें बैठे बैठे ही अपने दूर रहनेवाले मित्रोंके साथ बाजार-भावकी और दूसरी बातोंकी चर्चा कर सकते हैं। इसी तरह उनके घरोंमें बेतारके रेडियो भी लगे हुए हैं जिनके द्वारा वे सिडनी, मेलबोर्न वगैरह सैकड़ों मील दूरके शहरोंके गाने और व्याख्यान घर बैठे सुनते हैं।

भेड़ोंके शत्रु

सभी गड़रियोंके पास हज़ारों-लाखों भेड़ें नहीं हैं। बहुतोंके पास थोड़ी थोड़ी भी हैं। इस समय एक लाख भेड़ोंका जो मालिक है वही अथवा उसका बाप शुरूमें बिलकुल गरीब रहा होगा। उसके पास दो सौ-तीन सौ भेड़ें, आठ-दस घोड़े और दो-तीन रखवाले: बस,

इतना ही ठाठ होगा। बहुतसे गड़रिये राजाओंका इतिहास ऐसा ही है। सरकार उस निर्जन प्रदेशको आबाद करना चाहती थी, इसलिए उसने नाम-मात्रकी कीमत लेकर समुद्रके पासकी जमीनें शुरूके बसनेवालोंको दे डालीं। भेड़ें जैसे जैसे बढ़ती गईं वैसे वैसे भेड़ोंके बाड़े भी बड़े होते गये और गड़रिये धीरे धीरे डरते डरते समुद्रसे दूर दूर तक फैलते गये।

'डरते डरते' कहनेका कारण पहले बतलाया जा चुका है। इस विस्तृत टापूमें वर्षा होती है और जमीन भी अच्छी है, पर कब अकाल पड़ जायगा, इसका कोई भरोसा नहीं। वर्षा न हुई तो भेड़ोंके खानेके लिए घास और पीनेके लिए पानी नहीं मिलता और वे पटापट मरने लगती हैं। कोई पन्द्रह-बीस वर्ष पहले आस्ट्रेलियामें पाँच साल तक अकाल रहा और छः करोड़ भेड़ें भूख-प्यासके मारे तड़प तड़पकर मर गईं। कहते हैं कि उस समय आँखोंके सामने अपनी भेड़ोंको इस तरह मरते देखकर कई गड़रिये दुःखसे पागल हो गये थे।—अब तुम समझ गये होगे कि आस्ट्रेलियाकी आबादी क्यों नहीं बढ़ती है?

अकालकी तरह भेड़ोंके दूसरे शत्रु खरगोश, कांगारू, एनू वगैरह प्राणी हैं। ये चरागाहोंकी घास खा जाते हैं और तब भेड़ोंको फ़ाके करने पड़ते हैं। कांगारू केवल आस्ट्रेलियामें ही पाया जाता है। यह एक अद्भुत
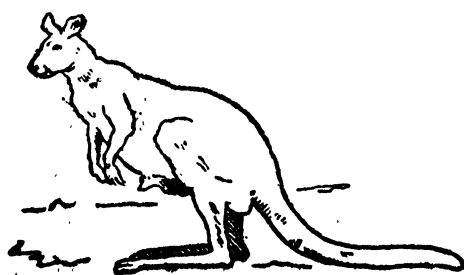
कांगारू

जानवर है। मादा कांगारूके पेटमें एक थैली रहती है। वह अपने बच्चोंको, जब तक वे बड़े नहीं हो जाते, उसीमें छिपा कर रखती है। एनू एक शुतुरमुर्ग जैसा परन्तु छोटे आकारका प्राणी है। आस्ट्रेलियन गड़रिये इसका शिकार किया करते हैं।

पानीकी तंगीसे भेड़ें मर न जायँ, इसलिए इस दूरके प्रदेशमें वे जगह जगह यंत्रोंकी सहायतासे हज़ारों फुट गहरे छेद करते हैं और पंपके द्वारा पानीको ऊपर लाते हैं। इस प्रकारके कुँओंको आर्टेसियन कूँए कहते हैं। इन कुँओंके कारण अब बहुत सुविधा होती जा रही है। आस्ट्रेलियन सरकार अब प्रयत्न कर रही है कि नदियोंको बाँधकर उनका पानी रोक रखा जाय जिससे वह बारह महीने काम दे सके और नहरें निकालकर खेती और भेड़ोंके लिए दूर दूर तक ले जाया जा सके। इस प्रयत्नमें यदि सफलता मिल गई तो आस्ट्रेलियाका स्वरूप ही बदल जायगा। वहाँकी बहुत-सी जमीन आबाद हो जायगी और जन-संख्या भी खूब बढ़ जायगी।

बढ़िया ऊन देनेवाली भेड़ें

पहले कह चुके हैं कि आस्ट्रेलियन लोग स्पेनमेंसे मेरिनो जातिकी भेड़ोंको लाये और उनकी पैदायश बढ़ाने लगे। इन भेड़ोंमें ऊन बहुत होता है। किसी किसी भेड़पर तो बीस बीस सेर ऊन होता है और वह ऊनके गट्ठे जैसी दिखाई देती है। ऊनके वज़नके कारण उसके शरीरपर बल पड़ जाते हैं। सिरपरका ऊन इतना घना होता है कि उसमेंसे सिर्फ़ कानोंकी नोकें और आँखोंकी जगह दो छेद-से ही दिखाई देते हैं। उनके ऊनमें हम यदि हाथ डालें तो वह टेहुनी तक भीतर जाकर भी उनकी चमड़ी तक नहीं पहुँच पाता! इस तरहकी एक भेड़की कीमत छः-सात हज़ार रुपये होती है। हरेक भेड़पर तो

इतना ऊन निकलता नहीं, फिर भी आठ-दस सेर तो निकलता ही है। आस्ट्रेलियाकी मुख्य उपज ऊन है, इसलिए भेड़पर जितना ज्यादह ऊन निकलेगा, उतनी ही ज्यादह कमाई होगी, यह सोचकर भेड़ोंकी नस्ल सुधारनेकी ओर आस्ट्रेलियन सरकार बहुत ध्यान देती है। सिडनी शहरमें हरसाल भेड़ोंकी प्रदर्शिनी होती है और उसमें अच्छी भेड़ोंके लिए सर्टिफिकेट और इनाम दिये जाते हैं। इस प्रदर्शिनीमें सारे आस्ट्रेलियाके गड़रिये अपनी चुनी हुई भेड़ें लेकर आते हैं।

भेड़ोंकी हजामत

भेड़ोंका ऊन काटनेका दिन गड़रियोंके लिए बड़े महत्त्वका होता है। सब लोग बहुत सबेरे उठते हैं और छः बजे काम शुरू हो जाता है। इससे पहले एंजिनवाले एंजिन साफ करने और उसमें तेल देनेमें लग जाते हैं। मैनेजर इधर उधर दौड़ता हुआ देखता फिरता है कि सब व्यवस्था ठीक है या नहीं। रखवाली करनेवाले लड़के अपने अपने ताबेकी भेड़ें लानेकी तैयारीमें रहते हैं और उनके हाथके नीचेके नौकर जो काम कहा जाय उसे करनेके लिए तैयार रहते हैं।

आजकल भाफ अथवा बिजलीसे चलनेवाले यंत्रोंसे भेड़ोंका ऊन निकाला जाता है। यह यंत्र उसी तरहका होता है जिस तरहका डाक्टरोंके पास दाँत साफ करनेका यंत्र होता है। प्रत्येक यंत्रके पास एक आदमी खड़ा रहता है। जैसे ही नई भेड़ आई कि वह उस यंत्रको चलाने लगता है। कैंचीसे सारी ऊन तेजीसे कटकर पीठ साफ हुई कि तत्काल ही वह भेड़ दूसरे आदमीको दे देता है और दूसरी नई भेड़ हाथमें ले लेता है। यदि कभी ग़लतीसे भेड़को कोई घाव हो जाता है, तो उसके लिए 'टार-बॉयज़' अर्थात् अलकतरेवाले

लड़के अलकतरा हाथमें लिये तैयार रहते हैं और घावोंपर अलकतरा लगा देते हैं। इस तरह रात होनेतक यह काम जारी रहता है। बीचमें केवल दो दफ़ा खानेके लिए और एक दो दफ़ा सिगरेट पीनेके लिए छुट्टी मिलती है।

भेड़ोंके उतारे हुए ऊनको इकट्ठा करनेके लिए अलग आदमी होते हैं। वे उसे इकट्ठा कर करके मेजपर फेंकते जाते हैं। वहाँ जो दूसरे लोग खड़े रहते हैं वे ऊनकी घड़ी कर करके चुननेवालोंके हाथमें देते जाते हैं। ये चुननेवाले बहुत होशियार होते हैं और शीघ्रतासे जुदा जुदा तरहका ऊन चुनकर अलग करते जाते हैं। पाँव और पूँछका ऊन अलग तरहका होता है। पेटका और ही तरहका होता है। इसके अलावा कुछ भेड़ोंका ऊन हलके दर्जेका और कुछ ऊँचे दर्जेका होता है। चुनाव हो जानेके बाद ऊन दाबकर उसकी बड़ी बड़ी गाँठें बाँध दी जाती हैं और उनपर भेड़ोंकी जात, उनका दर्जा, गाँठका वज़न, भेड़ोंके मालिकका नाम आदि तफसील लिख दी जाती है। इसके बाद वह नज़दीकके बन्दरगाहको रवाना कर दिया जाता है। इस प्रकार कुछ ही सप्ताहोंमें पचास हज़ारसे लेकर दो लाख भेड़ोंतकका ऊन काट लिया जाता है।

बन्दरगाहपर ऊनकी गाँठें रखनेके लिए बड़े बड़े गोदाम होते हैं। एक एक गोदाममें हजारों गाँठें रक्खी जाती हैं। प्रत्येक गाँठ लगभग दो सौ सेर वज़नकी होती है। इन गोदामोंमें ही मालका सौदा होता है। व्यापारी गोदाममें आते हैं और गाँठमें छेद करके ऊनकी विशेषता देखते हैं और भाव निश्चित करते हैं। ये ही व्यापारी फिर सारा माल विदेशोंको भेजते हैं। आस्ट्रेलियाका व्यापार अधिकतर इंग्लैण्डके साथ होता है।

मांस और मक्खन

आस्ट्रेलिया चरागाहोंका देश है, इससे भेड़ोंकी तरह वहाँ गौएँ भी बहुत हैं। १९१९ ई० में वहाँ लगभग एक करोड़ तीस लाख पशु थे। भेड़ों और ढोरोंका मांस भी बहुत बड़ी मात्रामें आस्ट्रेलियासे बाहर जाता है। इंग्लैण्डमें जो मांस खाया जाता है उसका अधिक भाग आस्ट्रेलियाका ही होता है। यह मांस बर्फ़में रक्खा जाता है, इसलिए बहुत दिनों तक खराब नहीं होता। मांस ले जानेके लिए खास तरहके जहाज़ हैं जिनमें बर्फ़से ठंडे किये हुए कमरे रहते हैं। मांस, मक्खन वगैरह चीज़ें बिगड़ न जायँ इसलिए इन कमरोंमें ही रक्खी जाती हैं। आस्ट्रेलियाका मक्खनका व्यापार भी बहुत बड़ा है। अकेले न्यू साउथ वेल्समें सन् १९०६ में २०९१४५ दुधारू गौएँ थीं। दूध-दहीका व्यापार सहकारी सिद्धान्त-पर चलानेका प्रयत्न आस्ट्रेलियामें भी शुरू हो गया है। कहते हैं कि बायरन बे नामक जगहमें मक्खनका जो कारखाना है, दुनियामें कहीं भी उससे बड़ा कारखाना नहीं है। किसान दूधपरकी मलाईके औसतन पाँच सौ डब्बे हर रोज इस कारखानेमं लाते हैं और हर सप्ताहमें उसका साठ टन मक्खन तैयार होकर विदेशोंको जाता है। हर महीने किसानोंको इसकी बिक्रीके दाम मिल जाते हैं। आम तौर पर किसानोंको हर महीने ६८००० पौण्ड बाँटे जाते हैं। इसपरसे उक्त कारखानेके विशाल व्यवसायकी कल्पना की जा सकती है।

सोनेकी खानें

यह कहा जा सकता है कि आस्ट्रेलियामें सोनेका धूआँ निकलता है, क्योंकि उसके पाँचों प्रान्तोंमें सोनेकी हजारों खाने हैं। अकेले क्वीन्सलैण्ड प्रान्तमें ही लगभग दो हज़ार खाने हैं। इस प्रान्तके

माउण्ट मॉर्गन पर्वतमें लोहा और सोना दोनों इकट्ठे मिले हुए मिलते हैं। माउण्ट मार्गन दुनियाकी सबसे बड़ी सोनेकी खान है। क्वीन्सलैण्डकी ज़मीनमें धूलमें मिला हुआ इतना अधिक सोना है कि वर्षा पड़ चुकनेपर लड़के गटरोंमें सोनेके कण ढूँढ़ते फिरते हैं। सोनेका सबसे प्रधान प्रान्त विक्टोरिया है। इस प्रान्तमें प्रायः सर्वत्र ही सोनेके कण मिलते हैं। कहते हैं कि विक्टोरिया प्रान्तमें शायद ही कोई ऐसा जमीनका टुकड़ा हो जिसकी मिट्टीको लोगोंने पाँच-दस दफ़ा छान-छूनकर न देख लिया हो।

सोनेके व्यवसायका प्रारंभ बैलेरेट नामक गाँवमें हुआ क्योंकि पहले पहल यहीं सोना मिला था। और ज्यों ही लोगोंको इसका पता चला त्यों ही साहसी लोग सोनेकी आशासे इस प्रान्तमें आने लगे। आस्टेलियामें जो थोड़ी बहुत बस्ती हो पाई है, उसका कारण यह सोना ही है। सौ-पचास भेड़ें रखना, अनेक वर्षों तक मेहनत करके ऊन बेच-बेचकर पैसे इकट्ठा करना : भला सबमें इतना धीरज कहाँ? आस्टेलियामें सोना मिलता है, नसीब अच्छा होगा तो एकाध सोनेका ढेला हमें भी मिल जायगा और एक ही दिनमें हम कुबेर बन जायेंगे : बस, इसी आशासे हज़ारों लोग आस्ट्रेलियामें दौड़े गये। सभी मेलबोर्न बन्दरगाहमें उतरते और पैदल चल चल कर बेलरेटको जाते। बेलरेटकी खानके कारण मेलबोर्न देखते देखते बड़ा शहर बन गया। किन्हींको सोना मिला, किन्हींको नहीं मिला। जो एक दिनमें कुबेर न बन सके उन्होंने सोचा : अब लौटनेसे क्या लाभ? यहीं न रह जाओ। आखिर वे वहीं रह गये और खेती-बारी करने लगे या भेड़ें पालने लगे। मेहनतके जोरसे कुछ वर्षोंमें वे कुबेर तो नहीं पर अच्छे खासे धनवान् बन गये।

बेलेरेटमें खोदते खोदते सोनेका एक उनंचास सेरका ढेला मिला और, उसके बाद, तो एक ढेला बानवे सेरका भी मिला। पहले ढेलेका नाम आस्ट्रेलियन लोगोंने 'वेलकम नगेट' (=स्वागत ढेला) रक्खा। यह ढेला मेलबोर्नके सर्राफ़ेमें डेढ़ लाख रुपयेमें बिका। बेलेरेटकी खानकी मिट्टीको ऊपर लाकर छन्नेमं डालते और फिर उसपर पानी छोड़ते हैं। मिट्टी छन्नेमेंसे छनकर नीचे गिर जाती है और सोना बच रहता है। उसे पिघलाकर ईंटें और पाट बनाये जाते हैं। दूसरी कई खाने ऐसी हैं जिनकी चट्टानोंमें सोना होता है। इन चट्टानोंका ज़ोरसे हथौड़ा मारकर चूरा कर डालते हैं और फिर उस चूरेको पारेके बहते हुए प्रवाहमें छोड़ देते हैं। सोना पारेमें घुल जाता है और दूसरी चीज़ें रह जाती हैं। फिर पारा और सोनेका मिश्रण खूब तपाया जाता है जिससे पारा भाफ़ बनकर बाहर निकल आता है और सोना बच रहता है। फिर उसकी छोटी छोटी ईंटें बना ली जाती हैं।

बेलेरेटकी खान खुदते खुदते आधी मील गहरी हो गई है। इस गहरी जमीनके पेटमें चारों ओर रास्तोंका जाल बिछा दिया गया है और उनपर घोड़ोंकी ट्राम-गाड़ियाँ इधर उधर दौड़ती रहती हैं। रात-दिन बिजलीके लेम्प जलते और पंखे चलते रहते हैं।

बेलेरेटकी खानके मुखके पास खनन-शास्त्रका एक कालेज है। इस कालेजके अधीन एक स्वतंत्र खान भी है जिसमें शिक्षकोंकी देख-रेखमें विद्यार्थी काम करते हैं। विद्यार्थी ही सुरंग लगाकर चट्टानें तोड़ते हैं और जिन यंत्रोंकी मददसे चट्टानें खानेमेंसे निकाली जाती हैं उन्हें भी वे ही चलाते हैं। खानके पत्थरोंका चूरा करना, सोना अलग करना, उसकी ईंटें और पाट तैयार करना वगैरह सब काम विद्यार्थी ही करते हैं।

सोनेकी खानमें

पहले ही कहा जा चुका है पश्चिमी आस्ट्रेलिया एक बंजर और गरम रेगिस्तान है जिसमें सैकड़ों मील चले जाओ तो भी बड़ी बड़ी चट्टानों और रेतके सिवाय कुछ नहीं दिखाई देता; परन्तु, चट्टानोंमें सोना है और रेतमें सोनेके कण, इसलिए साहसी लोग जाकर, इस रेगिस्तानमें भी समुद्रके किनारे और पानीसे सैकड़ों मील दूर, सोनेकी खानें खोदनेका काम करते हैं। इन लोगोंके लिए अन्न-पानी ऊँटोंपर लादकर सैंकड़ों मील दूरसे लाया जाता है। पर, अब तो प्रायः समुद्रके किनारेके प्रदेशसे इन सोनेकी खानोंतक पानीके नल भी लगा दिये गये हैं।

पश्चिमी आस्ट्रेलियाकी खानोंमें नयेसे नये आधुनिक यंत्रोंद्वारा काम होता है। खानके मुखतक पहुँचाई गई चट्टानोंको ढोनेके लिए जो ट्रामगाड़ियाँ हैं वे ज़मीनपर नहीं चलतीं, किन्तु ऊपर लगे हुए तारोंपर ऊपर ही ऊपर कारखानोंकी ओर जाती हैं। माल लाने ले जानेके लिए इसी प्रकारका एक और भी दूसरा मज़ेदार यंत्र है जिसको लोग मज़ाकमें 'उड़ता गीदड़' कहते हैं। यह 'उड़ता गीदड़' तारोंपर टँगा हुआ एक डोल है जो खानके मुँहपर पड़ी हुई चट्टानोंको यंत्रकी सहायतासे अंदर खींच लेता है और तारके सहारे लगभग चौथाई मील दूर कारखानेमें ले जाता है। वहाँ वह फिर एक यंत्रकी सहायतासे उन्हें नीचे छोड़ देता है तथा तारके सहारे खानकी ओर अपने कामपर फिर लौट आता है। खानके अंदर सब जगह बिजलीके दीपकोंका प्रकाश होता रहता है। इस प्रकाशमें सुवर्ण-मिश्रित चट्टानोंका रंग बहुत सुन्दर दिखाई देता है। खानोंमें हवाके दबावसे बड़ी बड़ी चट्टानें तोड़ी जाती हैं और यंत्रकी सहायतासे ऊपर लाई जाती हैं। ऊपर कारखानेमें रासायनिक मिश्रणोंसे भरी हुई बड़ी बड़ी परातें होती

हैं और पास ही चट्टानोंका चूरा करनेवाले भयंकर यंत्र मुँह फाड़े खड़े रहते हैं। इन यंत्रोंके सामने बड़ी बड़ी कढ़ाहियाँवाली विशाल भट्टियाँ होती हैं। ये इतनी मँहगी हैं कि इनकी कीमत एक एक लाख पौंड तक होती है और इनमें इतनी गर्मी होती है कि इनके पास फटकातक नहीं जा सकता। काम करनेवाले लोग नखसे शिखतक अस्बेस्टॉसकी पोशाक पहन कर पास जाते हैं।

रेगिस्तानके दो अनुभव

अब सोनेकी खानोंको छोड़कर पश्चिमी आस्ट्रेलियाके रेगिस्तानका हाल सुनाता हूँ जो दो यात्रियोंने लिखा है।

पहला यात्री और उसके साथी पानीके नज़दीकका रास्ता भूलकर भटक रहे थे। वह लिखता है: "भयंकर गर्मी पड़ रही थी। साथके लोग कष्टसे कराह रहे थे। मुझसे उनका कष्ट देखा न जाता था। मैं वैसे ही कष्टमें मार्ग-दर्शकको साथ लेकर पानी खोजनेको निकला। हम लोग खूब ही भटके, पर चारों ओर सूखा मरुस्थल था। पानीका नाम नहीं। मैं निराश होकर उलटे पाँव लौटा। मेरे साथियोंकी बहुत ही खराब हालत हो गई थी। मेरी भी दशा ख़राब ही थी। गला बिलकुल सूख गया था और प्यासके मारे ठीक तरहसे न कुछ बोल पाता था और न कुछ सुन ही सकता था।

"मैंने साथियोंसे कहा कि पानी मिल जाय तो ही हम जी सकते हैं। इसलिए जैसे भी हो, पानीका पता लगाने चलो। हम आगे आगे चलने लगे। दो मील चलनेमें हमें डेढ़ घंटा लग गया। अन्तमें हम एक छोटी-सी दलदलके पास आ पहुँचे। हमारा मार्गदर्शक एकदम दौड़ पड़ा और दलदलमें घुस गया। मैंने पीछेसे जाकर देखा कि उसने एक जगह पतले कीचड़में अपना मुँह डाल दिया है और

आधा-सा कीचड़ गटगटा गया है। मैंने टाँग पकड़कर उसे पीछेकी ओर खींच लिया और फिर हम सबने भी उस पतले कीचड़का बड़े आनन्दसे प्राशन किया। कैसे समझाऊँ कि वह हमें कितना मीठा लगा!"

दूसरा यात्री अपने अनुभवोंमें लिखता है: "सबेरेसे पूर्वकी ओरकी लू चल रही थी। यह लू इतनी गरम थी कि मैं एक झाड़ीके पीछे छिप गया। न जाने वह झाड़ी झुलसकर सूख क्यों न गई थी। दोपहरको सन्दूकमेंसे थर्मामीटर निकालकर देखा तो पारा १२५ डिग्री तक चढ़ा हुआ था। मुझे वह सच न लगा। मैंने उसे पेड़की आड़की छायामें रख दिया। एक घंटे बाद आकर देखा तो पारा अन्तकी १२७ डिग्रीसे भी ऊपर चढ़कर नली फोड़कर बाहर निकल गया है! इसपरसे कल्पना की जा सकती है कि उस प्रदेशमें कितनी गर्मी होगी और वह लू कितनी भयंकर होगी।

गोरोंके लिए सुरक्षित

आस्ट्रेलिया एक नवीन देश है। वहाँ काम-धंधोंके लिए बहुत गुंजाइश है। चाहे जितना काम मिलता है और मज़दूरी भी खूब मिलती है। लोग खूब कमाते हैं और खुलकर खर्च करते हैं। कीमती चीज़ें ख़रीदने और उनका उपयोग करनेमें वे आगा-पीछा नहीं करते। इसलिए वहाँका रहन-सहन बड़ा खर्चीला हो गया है। आस्ट्रेलियन लोग इंग्लैण्डसे गये हुए लोगोंके वंशज हैं, इस कारण वे रंग-रूपमें साधारणतया उनके जैसे ही दिखाई देते हैं; परंतु आस्ट्रेलियाकी गरम हवामें पले होनेके कारण उनका रंग कुछ फीका-सा हो गया है। शरीर भी उनका छरहरा और ऊँचा होता है। बहुतसे लोग छः फुटसे भी अधिक ऊँचे होते हैं। ऐसा क्यों हुआ, कुछ समझमें नहीं

आता। खूब ऊँचे और पतले होनेके कारण इन्हें दूसरे लोग मज़ाकमें 'मकईके ठूँठ' कहते हैं।

आस्ट्रेलियामें चार-पाँच बातें प्रतिकूल हैं। सबसे अधिक प्रतिकूल है वहाँकी बहुत गरम हवा। आस्ट्रेलियाके गोरे समुद्रसे ही चिपटकर रह गये हैं। ज़्यादहसे ज़्यादह वे समुद्र-किनारेके पर्वतों या उनके पारके मैदानोंतक ही पहुँच पाये हैं। परेके विशाल मध्यभागमें या उत्तरकी ओरके प्रदेशमें जाकर रहनेकी हिम्मत उनमें नहीं। देखा गया है कि उस गर्म हवामें जो गोरे जाते हैं वे थोड़े ही समयमें मृत्यु-मुखमें जा पड़ते हैं। मध्य भागकी जमीन बहुत ही उपजाऊ है और अनेक कीमती धातुओंकी वहाँ खानें हैं। पश्चिमी आस्ट्रेलियामें सैकड़ों मीलकी दूरीसे पानी ले जाकर बड़ी बड़ी खानें खोदनेका काम आस्ट्रेलियन लोग कर रहे हैं, पर उससे आगेके फैले हुए असीम प्रदेशका क्या किया जाय? उस गोरोंके लिए डरावने प्रदेशमें हिन्दुस्तान, चीन और जापान जैसे उष्ण कटिबंधके देशोंके लोग ही मजेमें रह सकते है और आबाद होकर खेती कर सकते हैं। और नहीं तो कमसे कम मज़दूरोंके नाते ही वे उन्हें बहुत मदद पहुचा सकते हैं। परन्तु वे इन एशियाखंडके काले लोगोंको अपने देशमें आने देनेके विरुद्ध हैं और आस्ट्रेलियाको सौ टंचका शुद्ध 'गोरा' ही बनाये रखना चाहते हैं,—भले ही उसके आबाद होनेमें कितना ही समय क्यों न लग जाय। वे कहते हैं कि कालोंकी संस्कृति हमारी संस्कृतिसे नीचे दर्जेकी और भिन्न है। ये हमारे देशमें आकर रहेंगे तो हमारी संस्कृतिको धक्का लगेगा। काले लोग खाने-पीने और कपड़ोंमें बहुत कम खर्च करते हैं, उनकी ज़रूरतें थोड़ी होती हैं, वे अल्प-संतुष्ट और बहुत मेहनती होते हैं। उनको

यदि आने दिया गया तो वे मज़दूरीको सस्ती कर देंगे और हम लोग भूखे मरने लगेंगे।

आस्ट्रेलियाका भविष्य

आस्ट्रेलियनोंकी यह नीति कैसी ही क्यों न हो, पर कहना होगा कि उस थोड़े संख्या-बलपर भी वे अपनी उन्नति करनेका भगीरथ प्रयत्न कर रहे हैं। उन्होंने पूर्व और पश्चिम आस्ट्रेलियाको रेलगाड़ीद्वारा जोड़ दिया है। नदियोंके बड़े बड़े बाँध बनाये हैं और उनके पानीको नहरोंके द्वारा देशके मध्य-भागमें ले जानेका प्रयत्न शुरू कर दिया है। उन्हें कोयले और लोहेकी खानें भी मिल गई हैं, इससे अब वे पहलेकी तरह केवल ऊनकी ही निकास न करते रहेंगे। वे बड़े बड़े कारखाने खोलेंगे, लोहे और फौलादके यंत्र बनायँगे और मिलें चलाकर कपड़ा तैयार करेंगे। यह सब ठीक है, पर प्रकृतिके विरुद्ध और अपने प्रकृति-धर्मके विरुद्ध वे कितनी देर तक टिके रह सकेंगे, यह देखना है। यह भी देखना चाहिए कि मुट्ठीभर लोगोंके लिए ही इस विशाल चरागाहको सुरक्षित बनाये रखनेकी उनकी प्रतिज्ञा कब तक टिकी रहती है।

अभ्यास

१ 'आस्ट्रेलिया' नाम कैसे पड़ा? यह खंड कब और कैसे खोजा गया? नक्शेपर बंबईसे आस्ट्रेलिया जानेका मार्ग दिखाओ।

२ आस्ट्रेलियाके 'गड़रिया राजा' का वर्णन करके उसकी अमीरी और उसके जीवनके विषयमें संक्षेपसे लिखो।

३ ऊनकी पैदावारमें आस्ट्रेलियाका दुनियामें पहला नंबर है, इसके जितने कारण हो सकें बताओ।

४ क्या कारण है कि जब हमारे यहाँके गड़रिये पैदल अपनी भेड़ोंको चराते

हैं तब आस्ट्रेलियाके गड़रियोंको घोड़ोंपर बैठकर रखवाली करनी पड़ती है ?

५ तुमने पढ़ा होगा कि आस्ट्रेलियामें अकालके समय लाखों भेड़ें मर जाती हैं, पर वहाँ दुर्भिक्ष पड़नेका भौगोलिक कारण क्या है ? पानी प्राप्त करने और उसे संग्रह करनेके लिए वहाँके लोग क्या उपाय करते हैं ?

६ कांगारूका वर्णन करो और उसका चित्र अपनी चित्र-पुस्तकमें खींचो। आस्ट्रेलियामें और भी जो विचित्र प्राणी होते हों, उनका वर्णन करो।

७ मेरिनो नामक भेड़की विशेषता क्या है ?

८ भेड़की ऊन काटनेकी क्रियाका वर्णन करो। ऊन उत्पन्न करनेवाले दूसरे देशोंके नाम गिनाओ। हिन्दुस्तानमें ऊन कहाँ कहाँ पैदा होती है ?

९ आस्ट्रेलियाकी सोनेकी खोजका इतिहास बहुत मनोरंजक है। हो सके तो दूसरी किताबोंमेंसे इस विषयको पढ़कर अपनी पाठशालाकी मासिक पत्रिका अथवा अन्य किसी पत्रिकाके लिए लगभग हज़ार शब्दोंका एक लेख लिखो।

१० हिन्दुस्तानमें सोनेकी खान कहाँ है ? उसके विषयमें क्या जानते हो ? दुनियामें सोना पैदा करनेवाले देश कौन कौन हैं ? सोनेकी खानमेंसे सोना कैसे निकाला जाता है और कैसे शुद्ध किया जाता है ?

११ इसका क्या कारण है कि हिन्दुस्तानकी अपेक्षा आस्ट्रेलिया डेढ़ गुना बड़ा होने पर भी वहाँकी बस्ती हिन्दुस्तानकी आबादीका पचासवाँ भाग भी नहीं है ? हिन्दुस्तानियोंके लायक आबोहवा होनेपर भी वहाँ लोग आबाद होनेके लिए क्यों नहीं जाते ? गोरोंके लिए अपने देशको सुरक्षित रखनेके संबंधमें आस्ट्रेलियन लोगोंके विचारके साथ तुम कहाँ तक सहमत हो ?

१२ रेगिस्तानकी मुसाफ़िरीका एक शब्द-चित्र खींचो।

१३ आस्ट्रेलियन किस खेलमें बहुत प्रसिद्ध हैं ? इस खेलके किसी नामी खिलाड़ीके विषयमें कुछ जानते हो तो लिखो।

१७ कोयले और लोहेके देशके ब्रिटिश

हमारे देशपर ब्रिटिश लोगोंका राज्य है। संस्कृति, शिक्षा, व्यापार वगैरह विषयोंमें पिछले सौ सालोंसे हमारा उनके साथ बहुत निकट सम्बन्ध रहा है। हम उनकी भाषा बोलते हैं, उनकी पुस्तकें पढ़ते हैं, उनके तथा उनके जैसे कपड़े पहनते हैं और ऊँची शिक्षा प्राप्त करनेके लिए उनके देशमें जाते हैं। इतना ही नहीं, हम उन्हींकी तरह सोचते-विचारते भी हैं। इस प्रकार जब आज ग्रेटब्रिटेन हमारे गुरुपद-पर है, तब उसकी जानकारी तो हमें होनी ही चाहिए।

सिवाय इसके हम अलग अलग तरहके देशोंका निरीक्षण कर चुके। हमने देखा कि डेन्मार्कने सहकार पद्धतिद्वारा कैसे अपनी हालत सुधारी, हॉलैण्डने पवनचक्कियों, नहरों और बाँधोंके द्वारा कैसे अपनी जमीन उपजाऊ बनाई और कारखाने खड़े किये। आस्ट्रेलियाका भेड़ें पालनेका विशाल व्यवसाय भी हमने देखा। अभीतकके हमारे देखे हुए देशोंमेंसे कुछ तो खेती करनेवाले, कुछ भेड़ें चरानेवाले और कुछ दूध मक्खन उत्पन्न करनेवाले हैं। अब हमें यह देखना है कि ग्रेटब्रिटेन जैसे उन्नत राष्ट्रकी भौगोलिक विशेषता क्या है।

ग्रेट ब्रिटेनकी कुछ विशेषताएँ

वास्तवमें ग्रेटब्रिटेन एक छोटा-सा द्वीप है। उसका आकार आयर्लैण्डको मिलाकर भी हमारे बम्बई इलाकेसे बड़ा नहीं है। उसमें खेतीके लायक ज़मीन बहुत थोड़ी है। बहुत-सा भाग पहाड़ी और बंजर है। जो सपाट और अच्छी जमीन है उसमें पशुओंको चरानेके चरागाह ही ज़्यादह हैं; परन्तु फिर भी वहाँकी जन-संख्या बम्बई इलाकेसे सवा दो गुनी ही है। अर्थात् खेतीकी उपज थोड़ी और

खानेवाले आदमी ज़्यादह : ऐसी अवस्था इंग्लैण्डकी है। इंग्लैण्डमें जितना अनाज होता है उससे, बहुत हो, तो ब्रिटिश लोगोंका सिर्फ महीने-भर ही काम चल सकता है। बाकी ग्यारह महीने उन्हें बाहरसे आनेवाले अनाजपर ही निर्भर रहना पड़ता है। हालैण्ड, डेन्मार्क, न्यूज़ीलैण्ड आदि देश मक्खन, पनीर और अंडे भेजें, और आस्ट्रेलिया और अमेरिका गेहूँ और मांस भेजें, तभी ब्रिटिश लोगोंको भर-पेट खाना मिले। फिर भी ग्रेटब्रिटेन दुनियाके बलवान् और समृद्ध राष्ट्रोंमें प्रमुख है। क्योंकि :

(१) अमेरिकाको (संयुक्तराष्ट्रोंको) छोड़कर दुनियामें और किसी भी राष्ट्रकी अपेक्षा ग्रेटब्रिटेनके कारखाने और परदेशोंसे होनेवाला व्यापार ज़्यादह है।

(२) दुनियाके और किसी भी राष्ट्रकी अपेक्षा ग्रेटब्रिटनके पास व्यापारी जहाज़ ज्यादह हैं।

(३) दुनियाके और किसी भी राष्ट्रकी अपेक्षा ग्रेटब्रिटेनके फौजी जहाज बड़े और शक्तिशाली हैं।

(४) दुनियाके और किसी भी राष्ट्रकी अपेक्षा ग्रेटब्रिटेनके उपनिवेश और अधीन देश ज़्यादह हैं। ब्रिटिश साम्राज्य पाँचों खंडोंमें फैला हुआ है और कहा जाता है कि उसपर सूर्य कभी अस्त नहीं होता।

इन दोनों बातोंका मेल कैसे बिठाया जाय? अपने पेटके लायक अन्न भी न पैदा कर सकनेवाले लोगोंको इतनी संपत्ति और शक्ति कैसे प्राप्त हो गई?

पर इसके कारणोंका पता लगाना कुछ बहुत कठिन नहीं है। वे ग्रेटब्रिटेनकी भौगोलिक परिस्थितिमें ही मिल जायँगे। घरमें भर-पेट खानेको मिलता है तो आदमी घरमें ही बैठा रहता है; घरसे बाहर

निकल कर रोटी कमानेकी उसे ज़रूरत ही नहीं महसूस होती। भारतवासियोंकी तरह वह तृप्त, अल्पसंतुष्ट और आलसी बन जाता है। इसके विरुद्ध यदि घरमें खानेको न हो तो आदमीको घरके बाहर निकलना पड़ता है, हाथ-पाँव हिलाने पड़ते हैं, रोटी प्राप्त करनेको मेहनत-मज़दूरी करनी पड़ती है। और ऐसा करते हुए उसका बाहर चार आदमियोंसे सम्बन्ध हो जाता है, उसको दुनियाके तरह तरहके अनुभव प्राप्त होते हैं और किसके साथ कैसे बर्तना चाहिए, इसका भी उसे ज्ञान हो जाता है।

विदेशी व्यापारका प्रारंभ

ग्रेटब्रिटेनकी कुछ कुछ वही दशा हुई जो घरमें अनाज न होनेसे बाहर निकल पड़नेवाले आदमीकी होती है। उनका देश एक द्वीप है, इसलिए समुद्र-यात्राका उन्हें अभ्यास था। अनन्त महासागरमें हवा जहाँ ले जाय वहाँ जानेवाले और छोटे छोटे जहाज़ोंमें बैठकर लम्बी लम्बी यात्रा करनेवाले लोगोंमें हिम्मत, सूझ, दूरदर्शिता दृढता आदि गुण तो बढ़ेंगे ही। खेती आजीविकाका प्रधान उपाय बन नहीं सकता था, इसलिए अगर इस समुद्र-पेशा राष्ट्रने विदेशोंके साथके व्यापारपर विशेष ध्यान दिया, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? व्यापार करने और विदेशोंसे खानेके पदार्थ लानेके लिए जहाज़ तो चाहिए ही। साथ ही व्यापारी जहाजोंकी रक्षाके लिए समुद्री सेना भी चाहिए। फिर ग्रेटब्रिटेन एक टापू ठहरा, इसके कारण समुद्रमेंसे शत्रु कब किधरसे आ पहुँचे इसका भी कोई नियम नहीं। सब तरफ़से वह खुला है। इसलिए देशकी रक्षाके लिए भी बलवती नौ-सेनाकी जरूरत है। इन्हीं सब कारणोंसे इंग्लैण्डका व्यापार और समुद्र-बल बढ़ता गया। विदेशोंके साथ व्यापार करते करते अनायास

ही केवल बुद्धिमानीके जोरसे यदि राज्य मिलने लगें तो उन्हें कौन छोड़ देगा ? और इसके सिवा, जब व्यापारके लिए समुद्र-पर्यटनकी आदत पड़ गई तब बढ़ती हुई जन-संख्या और दूसरे अन्य कारणोंसे नये प्रदेशमें उपनिवेश बसाना भी स्वाभाविक ही है। इस प्रकार ब्रिटिश साम्राज्यका उदय और विस्तार होता गया।

ऊपरके वर्णनसे कोई ऐसा न समझ ले कि घरमें अनाज न होना ही अभ्युदयका साधन है। यह केवल एक प्रेरक कारण माना जा सकता है। आदमीमें कर्तृत्व-शक्ति तो चाहिए ही, पर उसको दिखानेके लिए अनुकूल भौगोलिक परिस्थिति भी आवश्यक है। हिन्दुस्तानके बहुसंख्यक लोगोंको एक ही समय खाना मिलता है और सो भी खराब और अधूरा, तो भी उनका अभ्युदय नहीं हुआ। इस विषयमें मनुष्यकी हिम्मत और लगन ही महत्त्वकी चीज है।

उत्कर्षके कारण

ग्रेटब्रिटेनके आधुनिक अभ्युदयके नीचे लिखे कारण बतलाये जा सकते हैं।

(१) **स्थल-माहात्म्य**—ये द्वीप यूरोप और अमेरिकाके बीचमें हैं और यूरोपके उत्पादक देशोंका माल दुनियाके बाज़ारोंमें भेजनेके मार्गपर हैं, मानो इसीलिए प्रकृतिने ग्रेटब्रिटेनको यूरोपका आढ़तिया और माल ढोनेवाला बना दिया है।

(२) **कोयला और लोहा**—आज कलके उद्योग-धंधेके युगमें कोयले और लोहेकी बड़ी महिमा है। बहुत-से धंधे तो इन्हीं दो पदार्थोंपर अवलम्बित हैं। इसलिए जिस देशके पास इन दोनोंका खूब संग्रह है वह देश अवश्य ही उद्योग-धंधोंमें आगे बढ़ेगा। ग्रेट ब्रिटेनमें कोयले और लोहेकी बहुत-सी खानें हैं और उनमें मानों

कोयले और लोहेका अनन्त भंडार भरा हुआ है। इन्हीं खानोंके बलपर ग्रेट ब्रिटेन अपने बड़े बड़े और तरह तरहके कारखाने चला रहा है।

(३) **आबोहवा**—ग्रेट ब्रिटेनकी हवा यद्यपि ठंडी है, परन्तु वह एस्किमो लोगोंके देशकी तरह अत्यधिक ठंडी नहीं है। वह कुछ सौम्य है और उद्योगशीलताको उत्तेजित करनेवाली है। इस हवाके कुछ कारण ब्रिटिश लोगोंके शरीरमें हमेशा ताजगी रहती है और मेहनत करनेसे थकावट नहीं आती। इसके विरुद्ध हिन्दुस्तानकी गरम हवामें मेहनत ज़्यादह नहीं होती और आराम लेनेकी ज़रूरत महसूस होती है। इस प्रकार उत्तेजक हवा भी ब्रिटेनके अभ्युदयके लिए कुछ अंशोंमें कारण हुई है।

(४) **स्वभाव**—यदि हवा उत्तेजक हो और दूसरे साधन भी अनुकूल हों, पर आदमी मट्ठे स्वभावके हुए, तो सब व्यर्थ है। देशको आगे बढ़ानेके लिए आवश्यक गुण—लगन, सूझ, साहस, एकता, उद्यमशीलता, व्यवस्थितता, स्वार्थत्याग वगैरह—हवा पानीपर ही अवलंबित हैं, सो बात नहीं है और वे केवल भौगोलिक कारणोंसे ही उत्पन्न होते हैं सो बात भी नहीं है। मनुष्यमें मूल प्रकृतिसे ही ऐसे कुछ गुण होने चाहिए; फिर कुछ गुण सोनेके और कुछ सुहागेके।

ब्रिटिश लोग स्वभावसे ही सूझवाले, बुद्धिमान् और उद्यमशील हैं। यही उनकी उन्नतिका मुख्य कारण है। अमेरिकाको (संयुक्तराष्ट्रको) छोड़ कर दुनियाके किसी भी राष्ट्रकी अपेक्षा ग्रेटब्रिटनने अधिक यांत्रिक आविष्कार किये हैं। जेम्स वॉट और स्टीफेन्सनके नाम ही इसके लिए काफ़ी हैं।

(५) **उपनिवेश तथा अधीन देश**—आस्ट्रेलिया, केनाडा,

दक्षिण आफ्रिका वगैरह उपनिवेश और हिन्दुस्तान जैसे अधीन देश ग्रेटब्रिटेनके लिए बहुत ही उपयोगी हैं। उसे इन देशोंसे व्यापार करनेकी विशेष सहूलियतें और हक प्राप्त हैं। और इन देशोंका कपास वगैरह कच्चा माल भी वह रियायतके साथ पा जाता है। इसी प्रकार इन देशोंमें फायदेके व्यापारोंमें और उद्योग-धंधोंमें वह पूँजी भी लगा सकता है। सिवाय इसके हिन्दुस्तान जैसे गरीब और गरज़-मंद देशको वह व्याजपर कर्ज़ भी देता है। दूसरे राष्ट्र ब्रिटिश-साम्राज्यान्तर्गत देशोंसे यह फ़ायदा नहीं उठा सकते। हालमें 'इम्पीरियल प्रेफरंस' अर्थात् दूसरे देशोंके मुकाबिलेमें साम्राज्यके भीतरके देशोंके मालपर चुंगी कम लगानेकी एक नई नीति भी ब्रिटिशसाम्राज्यमें प्रचलित हुई है।

औद्योगिक इंग्लैण्ड : कोयलेका महत्त्व

ग्रेटब्रिटेनमें इंग्लैण्ड, स्काटलैण्ड और वेल्स इन तीन देशोंका समावेश होता है। तथापि सुविधाके लिहाजसे इनमें मुख्य जो इंग्लैण्ड है आगे उसीका वर्णन किया जायगा।

इंग्लैण्ड मुख्यतया औद्योगिक देश है। उसकी आबादीके चार पंचमांश लोग शहरोंमें रहकर मिलों, कारखानों, खानों वगैरहमें काम करके अपना पेट भरते हैं और एक पंचमांश गाँवोंमें रहकर खेती या पशु-पालन करते हैं।

ऊपर लिखा जा चुका है कि आजकलके सब उद्योगोंके लिए कोयला एक अत्यन्त महत्त्वकी चीज़ है। एक तरहसे यह भी कहा जा सकता है कि कोयला आधुनिक जगतका सोना है। रेलगाड़ी चलानेके लिए कोयला चाहिए, जहाज चलानेके लिए कोयला चाहिए, लोहेकी वस्तुएँ तैयार करने और कारखाने चलानेके लिए कोयला चाहिए।

इतना ही नहीं, कोयलेकी जगह जिस दूसरी शक्तिका इस काममें प्रयोग किया जा सकता है उस बिजलीको उत्पन्न करनेके लिए भी कभी कभी कोयला ही लगता है। इसके अतिरिक्त रसोई करने और रोशनी करनेके लिए तो कोयला चाहिए ही। कोयलेका दूसरा महत्त्वका उपयोग ठंडसे बचनेका भी है। यूरोपके इंग्लैण्ड वगैरह देशोंमें ठंड बहुत पड़ती है और फिर हिम-ऋतुकी तो कुछ बात ही न पूछो। उस समय अँगीठीमें जलानेके लिए यदि कोयला न हो, तो जो हाल हो, उसकी तो हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

कोयलेके पहलेका इंग्लैण्ड

अठारहवीं सदीके उत्तरार्धतक इंग्लैण्डको कोयलेकी खानोंका पता न लगा था। उस समयका, कोयलेके पहलेका, इंग्लैण्ड दूसरी ही तरहका था। उसके उत्तरीय भागमें बस्ती बहुत कम थी। पहाड़, जंगल और दलदलोंका साम्राज्य था। घाटियों और नदियोंके किनारोंपर कहीं कहीं छोटे-मोटे गाँवोंमें लोग रहते थे, परन्तु उनके बीच परस्पर सम्बन्ध न था। इंग्लैण्डके उत्तर-दक्षिणमें पेनाइन पर्वत-श्रेणी १६० मील तक फैली हुई ह। इसके पश्चिमका कुछ भाग पहाड़ी और कुछ दलदलोंवाला था। पूर्वका भाग सपाट था और वहाँ वर्षा भी साधारण होती थी, इससे लोग वहाँ खेती करते थे। पहाड़के पठारोंपरके और आसपासकी घाटियोंके लोग पठारोंके समीपके चरागाहोंमें भेड़ें चराते और उनकी ऊन निकालकर विदेशोंको भेजते थे। इंग्लैण्डके मध्यका आग्नेय कोणका भाग सपाट और उपजाऊ था जिसमें लोग खेती करते थे। इसी प्रदेशका प्राचीन कालमें महत्त्व था। इसी भागमें शहर बसे थे और अधिकांश बस्ती भी यहीं थी। समुद्र-किनारेके लोग मछलियाँ मारकर अपनी आजीविका चलाते थे।

उन दिनों इंग्लैंडका उत्तरी भाग अज्ञात, भयंकर और वीरान था। दक्षिण और मध्यभागके लोग उधर ज़्यादह न जाते थे। यदि कभी फेरीवाले कुछ कपड़े, खिलौने वग़ैरह चीज़ें लेकर उत्तरकी ओर जाते थे तो उनको देखनेके लिए सारा गाँव जमा हो जाता था और उत्तरकी स्त्रियाँ कहा करतीं कि ये दक्षिणके लोग जादू-टोना जानते हैं।

खेती-प्रधान देश

उस समयके शहर उँगलियोंपर गिने जा सकते थे। सारे देशमें छोटे छोटे सुंदर गाँव थे। जन-संख्या इतनी कम थी कि उपजाऊ प्रदेश थोड़ा होनेपर भी जितना गेहूँ यॉर्कशायरकी घाटियोंमें अथवा ईस्ट आँग्लियामें पैदा होता था वह सबके खानेके लिए काफी होकर भी परदेश भेजनेके लिए बच रहता था। किसान छोटे छोटे घरेलू धंधे करके पेट भरते थे। जरूरतकी सब चीजें प्रायः घरपर ही तैयार हो जाती थीं। घरके लायक कपड़े घरकी स्त्रियाँ ही फ़ुरसतके वक्त बुन लेती थीं; पर वह मोटा-झोंटा ही होता था। मुलायम और सुन्दर कपड़े तो बड़ी मेहनतसे हिन्दुस्तानसे लाने पड़ते थे और कीमत भी उनकी खूब देनी पड़ती थी।

जगह जगह बड़े बड़े सरदार किलोंमें रहते थे और उनके पास फौज-फाँटा रहता था। आसपासकी सौ-एक मीलके इर्द-गिर्दकी जमीन उनकी मालिकीकी होती थी जिसे काश्तकार किराएपर लेकर खेती करते और अपना गुज़ारा करते थे। इसी प्रकार आज जहाँ बड़े बड़े शहर हैं और हजारों आदमी कारखानोंमें मेहनत करते हैं वहाँ पहले लम्बे-चौड़े भयंकर जंगल थे। कुछ जंगल राजाओं और सरदारोंने

शिकार खेलनेके लिए रख छोड़े थे और कुछमें डाकू लोग टोलियाँ बनाकर रहते और आसपासमें डाके डाला करते थे।

युग-परिवर्तन

कोयलेके पहलेका इंग्लैण्ड इस तरह खेती-प्रधान, छोटे मोटे घरेलू धंधोंवाला, कष्टसहिष्णु पर निद्रालु था। कोयलेने इंग्लैण्डका स्वरूप जादूकी लकड़ीकी तरह बदल डाला। पेनाइन पहाड़के पूर्व और पश्चिममें कोयलेकी खानें मिल गईं। कोयला भारी होता है और उसको दूर ले जानेका काम बहुत मेहनतका और मँहगा होता है। इसलिए, जब कोयला देशके अधिक बस्तीवाले मध्य और दक्षिण भागमें न ले जाया जा सका, तब उत्तर और वायव्यके उस उजाड़ प्रदेशमें ही कल-कारखाने खोले गये। कल-कारखानोंमें माल जल्दी तैयार होता है और सस्ता बेचा जा सकता है। उसके सामने हाथके करघोंपर बुना हुआ कपड़ा कैसे टिकता? परिणाम यह हुआ कि घरेलू धंधे नष्ट हो गये। कारखानोंमें काम करनेके लिए हजारों मज़दूर लग गये और जब उनको मजूरी भी अच्छी मिलने लगी तब कष्ट-साध्य खेतीके रोज़गारको छोड़कर गाँवोंके लोगोंका प्रवाह वायव्य और ईशान दिशाकी ओर बह चला और थोड़े ही समयमें देख पड़ा कि उस बीरान प्रदेशमें कोयलेकी खानोंके आसपास बड़े बड़े कारखाने खड़े हो गये हैं और उनमें काम करनेवाले आदमियोंके हजारों घर बस गये हैं। इस तरह खानोंके इर्द-गिर्द धड़ाधड़ शहर बसने लगे और कोयलेका नया युग शुरू हुआ।

कोयलेकी खानोंके इर्द-गिर्द प्रधान रूपसे तीन तरहके कारखाने हैं—कपाससे सूत कातने और कपड़ा बुननेके, ऊनके कपड़े बुननेके और लोहेकी चीज़ें बनानेके। लंकेशायरकी खानोंके इर्द-गिर्द कपासके,

यॉर्कशायरमें ऊनके और नॉर्थम्ब्ररलैण्डमें और बीचके भागमें लोहेके कारखाने समृद्ध हुए हैं। सूत और ऊनकी मिलोंमें लगनेवाले यंत्र बनानेके कारखाने नॉर्थम्बरलैण्डमें और मध्यभागके बर्मिंगहाम नामक शहरके इर्द-गिर्द हैं।

ऊनका व्यवसाय : नया और पुराना

अब हम पहले इंग्लैण्डका सबसे अधिक पुराना जो ऊनी कपड़ोंका व्यवसाय है उसका ज्ञान प्राप्त करें। पेनाइन पर्वतके पठारके पश्चिमी हिस्सेपर समुद्रकी ओरसे आनेवाली मानसून वायुके थपेड़े पड़ते हैं जिससे वहाँ वर्षा खूब होती है। पूर्वी भागमें इसके मुकाबलेमें कम वर्षा होती है। इस भागके पहाड़ी पठारपर सैकड़ों वर्षोंसे भेड़ें चरती रही हैं। पहले इन भेड़ोंकी ऊन हॉलैण्ड भेजी जाती थी क्योंकि उस समय दुनियामें ऊनके कपड़े बनानेका काम मुख्यतया हॉलैण्डमें ही होता था। फिर कुछ डच लोग अपने देशके अत्याचारोंसे तंग आकर इंग्लैंडमें भाग आये और उन लोगोंने अँग्रेज़ोंको ऊनी कपड़े बुनना सिखा दिया। इस लिए अब ऊन पहलेकी तरह विदेशोंको नहीं जाता। इतना ही नहीं, आजकल तो इंग्लैण्डके कारखानोंको अपने देशकी ऊन कम पड़ने लगी है, और उसकी पूर्तिके लिए आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, दक्षिण अमेरिका और दक्षिण आफ्रिकासे और भी मँगानी पड़ती है।

शुरूमें ऊनके कपड़े लोग हाथसे ही बुन लेते थे, इस कारण यह धंधा सारे देशमें फैला हुआ था। फिर बहते हुए पानीकी सहायतासे बुननेके यंत्रोंके चक्रोंको गति देनेकी खोज हुई और उससे कपड़ा कम मेहनत और कम समयमें तैयार होने लगा। परंतु देश-भरमें सब कहीं तेज बहनेवाले पानीके प्रवाह कैसे मिल सकते? वे केवल

पहाड़ी प्रदेशमें ही मिल सकते हैं, इससे पेनाइनके पठारोंपरसे यॉर्कशायरकी ओर वेगसे बहनेवाली नदियोंके किनारे ही यह रोज़गार टिक सका। फिर भाफसे चलनेवाले यंत्रोंका आविष्कार हुआ। भाफके लिए कोयला चाहिए, और उसकी खानें भी इसी परगनेमें निकल आईं। नतीजा इसका यह हुआ कि जिन स्थानोंके समीप कोयला न था वहाँके पुतलीघर बन्द हो गये और यॉर्कशायरके पुतलीघर बढ़ते गये।

इस प्रकार यॉर्कशायरको सब साधन अनुकूल मिल गये। पड़ोसके पठारपर भेड़ें चरानेके लिए काफी घास, पठारके बगलमें कोयलेकी खानें और ऊन धोने तथा रँगनेके लिए ज़रूरी पानीके स्रोत जितने चाहिए उतने थे। ऊनके कपड़े तैयार करनेवाले सभी शहर पेनाइनकी तलहटीमें ही बसे हुए हैं, क्योंकि वहाँ ऊपर लिखे सभी साधन अनुकूल हैं।

यॉर्कशायरका लीडस शहर ऊनी कपड़े सबसे अधिक परिमाणमें बनाता है। यहाँ ऊनके कारखानोंके सिवाय चमड़ा कमानेके कारखाने भी बहुत हैं। भेड़ोंकी खालें पासमें बहुत मिलती हैं, इससे चमड़ा पकानेके व्यवसायकी भी लीडसमें उन्नति होना स्वाभाविक है। इसके अलावा लोहेके यंत्र तैयार करनेके कारखाने भी वहाँ हैं।

लिवरपूल और मैंचेस्टर

अब हम सूती कपड़े तैयार करनेवाले लंकेशायरके परगनेकी ओर मुड़ें। इस प्रदेशमें पहले दलदल और जंगल थे। आने-जानेके रास्ते न थे, कसबे न थे और आबादी बहुत विरल थी। पर कोयलेकी खोजने यह सब पलट दिया। इंग्लैण्डमें कपास बिलकुल नहीं होती, फिर भी यह एक आश्चर्य है कि दुनियामें जितने तकुए हैं उनके चालीस सैकड़े अकेले इंग्लैण्डमें ही चलते हैं! अन्दाज़ लगाया

गया है कि लंकेशायरमें तैयार होनेवाले कपड़ेसे दुनियाके पचास करोड़ आदमी अपना तन ढकते हैं।

लंकेशायरकी मिलोंकी भूख बड़ी ज़बर्दस्त है। अमेरिका, हिन्दुस्तान इजिप्त और चीनसे रुईकी हजारों गाँठें लादे हुए जहाज लिवरपूल बन्दरगाहमें आते रहते हैं। अमेरिका जाने-आनेके लिए भी यही बन्दरगाह नजदीक और सुविधाजनक होनेके कारण तथा लंकेशायरको लगनेवाले कपासका दो-तिहाई हिस्सा अमेरिकासे आनेके कारण इंग्लैण्डके शहरोंमें लंडनके बाद दूसरा नंबर लिवरपूलका ही है। आज इस बंदरकी गोदियाँ (डॅक्स) नौ मील तक फैली हुई हैं और माल चढ़ाने-उतारनेवाले प्लेटफार्मोंकी लम्बाई चालीस मील है। लिवरपूलसे ही लंकेशायरके बेरी, ओल्डहम, ब्लेकबर्न, प्रेस्टन, वगैरह कारखानोंवाले शहरोंको रुईकी गाँठें रवाना होती हैं और वहाँ तैयार हुए कपड़ेकी गाँठें फिर वापिस यहींपर दूसरे देशोंको भेजनेके लिए आती हैं। इसी तरह इस कारखानोंके प्रदेशमें रहनेवाले लाखों आदमियोंके खानेके लिए ज़रूरी अनाज भी लिवरपूलसे ही आता है।

लिवरपूलसे आई हुई कपासको सब शहरोंमें बाँटनेके लिए और उन शहरोंमें तैयार हुए कपड़ेको गोदाममें भर रखकर फिर लिवरपूलको रवाना करनेके लिए एक मध्यवर्ती ठिकानेकी जरूरत थी। इस कमीको मैंचेस्टरने दूर कर दिया। पर मैंचेस्टर केवल गोदामोंका ही शहर नहीं रहा; वहाँ भी अनेक पुतलीघर खुलने लगे और वह वेगसे बढ़ने लगा। १७७७ में इस शहरकी जन-संख्या केवल सत्ताईस हजार थी। सन् १७८९ में वहाँ सबसे पहली भाफ़की मिल खुली और इसके बाद बारह वर्षोंमें उसकी आबादी ८४००० हो गई और अब तो दस लाखके ऊपर है। व्यापारका कितना प्रभाव है! सन् १८९४ तक

अमेरिका हिन्दुस्तान वगैरह देशोंसे आये हुए बड़े बड़े जहाज अपना माल लिवरपूलमें उतारते थे और वहाँसे रेलद्वारा वह मैंचेस्टर जाता था। १८९४ में मैंचेस्टर और लिवरपूलके बीचमें करोड़ों रुपये खर्च करके पैंतीस मील लम्बी, एकसौ बीस फुट चौड़ी और छब्बीस फुट गहरी एक नहर खोद दी गई। तबसे महासागरके बड़े बड़े जहाज मैंचेस्टरतक आने जाने लगे। इस नहरके दोनों ओर श्रेणीबद्ध पुतलीघर खड़े हुए हैं।

लंकेशायरकी योग्यता

लंकेशायरमें ही यह कपड़ेका व्यवसाय क्यों चलता है? पानीका प्रवाह और कोयलेकी खानें रुईके पुतलीघरोंके लिए ज़रूरी हैं, और यॉर्कशायरमें भी ये दोनों सुभीते हैं, फिर वहाँ ऊनकी तरह सूतके पुतलीघर क्यों न खुले? इसका कारण है हवा। लंकेशायरका परगना समुद्रके किनारे है, इसलिए पश्चिम और आग्नेय दिशाओंसे उठनेवाली मानसून हवाएँ उसके ऊपर होकर बहती हैं जिससे वहाँ वर्षा बहुत होती है और इस कारण वहाँकी हवा बहुत नम रहती है। इसके विरुद्ध यॉर्कशायर समुद्रसे दूर है और वर्षा भी वहाँ बहुत नहीं होती जिससे वहाँकी हवा खुश्क है। खुश्क हवामें बारीक सूत नहीं काता जा सकता, वह बीचमें ही टूट जाता है। भीनी हवामें चाहे जितना पतला सूत काता जा सकता ह और लंकेशायरमें इसी कारण सूतकी मिलें हैं।

लोहेके व्यवसाय

लोहा खानोंमें ही मिलता है। वह खानोंकी चट्टानोंमें दूसरे खनिजोंके साथ मिला हुआ होता है। इन लोह-मिश्रित पत्थरोंको कोयला और चुन-कंकड़ोंके साथ मिला कर भट्ठीमें डालते हैं और तेज आँच देते

हैं। इससे उनका लोहा पिघल कर द्रवरूपमें नलीके द्वारा बाहर निकल आता है। इसी द्रवका शुद्ध लोहा बनता है। कोयलेकी खोज होनेके सैकड़ों वर्ष पहले इंग्लिश लोग लोहेका उपयोग करते थे। उस समय भट्टियोंमें लकड़ियाँ जलाई जाती थीं और इस कारण जंगलोंके पास ही लोहेकी भट्टियाँ होती थीं। यॉर्कशायरमें शेफील्ड और उसके आसपासके प्रदेशमें लोहेकी खानें हैं और पासमें ही जंगल है। सिवाय इसके लोहेको शुद्ध करनेके लिए ज़रूरी चुन-कंकड़ भी वहाँ जितने चाहिए उतने मिल सकते हैं और सान चढ़ानेका पत्थर भी पासके पेनाइन पर्वतमें मिलता है। आगे चलकर कोयलेकी खानें भी इसी प्रदेशमें निकल आनेसे और भी सुविधा हो गई। चाकू, कैंची, उस्तरे और अनेक प्रकारके छोटे मोटे हथियार शेफील्डके ही उत्तम होते हैं और वहाँसे हरसाल लाखों चाकू विदेशोंको जाते हैं।

बर्मिंगहामकी कथा

शेफील्डके दक्षिणमें इंग्लैण्डके मध्यभागका मुख्य शहर बर्मिंगहाम है। इसके नज़दीक लोहेकी खानें हैं। पहले पासमें ही आर्डन नामका जंगल था, इसलिए लोग लोहा निकालकर उसकी वस्तुएँ बनानेका रोज़गार तीनसौ-चारसौ सालसे अपने घरोंपर ही किया करते थे। उस समय हरेक घर मानो एक कारखाना ही था और घरके सब आदमी कीलें, जंज़ीरें वगैरह लोहेकी चीज़ें बनाया करते थे। फिर कोयलेकी खोज हुई, पर कोयला बर्मिंगहामसे दूरीपर था और यह देखते हुए वास्तवमें बर्मिंगहामका यह रोज़गार बैठ जाना चाहिए था। परन्तु, मज़ा यह हुआ कि एक तो लोगोंको बहुत वर्षोंसे यह काम करनेकी आदत पड़ी हुई थी; साथ ही लोहा भी पासमें ही था। ले-देकर कोयलेकी ही कमी थी। सो उसे लोग रेलगाड़ी और नहरों

द्वारा यॉर्कशायरकी खानोंसे ले आने लगे। इससे बर्मिंगहामका व्यापार जोरोंसे चलता ही रहा और बादमें तो फिर कोयला भी पड़ौसमें निकल आया। इस समय बर्मिंगहाममें कीलोंसे लेकर रेलगाड़ीके एंजिन तक सब प्रकारकी छोटी बड़ी चीज़ें बनती हैं। वहाँ पेच, कीलें, पिनें और सुइयाँ हीं इतनी ज़्यादह तैयार होती हैं कि सिर्फ एक महीनेमें तैयार हुई सुइयों और पिनोंको गिनने बैठो तो एक जन्म भी काफी न हो। इस शहरमें भाफ़के एंजिन, पुतलीघरोंके बड़े बड़े कल-पुर्जे, तोपें और वैज्ञानिक यंत्र आदि बनानेके अनेक कारखाने हैं। छोटी छोटी रेलगाड़ियाँ, जहाज वगैरह बच्चोंके खिलौने भी इतने ज़्यादह बनते हैं कि बर्मिंगहामको लोग 'यूरोपकी खिलौनोंकी दूकान' कहते हैं।

पेनाइन पर्वतके ईशानमें नॉर्थम्बरलैण्डमें कोयलेकी जो खाने हैं वे दूर तक फैली हुई हैं और टाइन नदीके नज़दीक ही हैं। यह नदी जहाँ समुद्रसे मिलती है वहाँ न्यूकेसल नामका प्रसिद्ध बन्दरगाह है। कोयला नदीद्वारा और फिर समुद्रद्वारा दूसरे स्थानोंको ले जाया जाय तो बहुत सस्ता पड़ता है, इसलिए न्यूकेसल बन्दरगाहसे हरसाल लाखों टन कोयला विदेशोंको रवाना होता है। अलावा इसके स्वीडनसे भी समुद्रद्वारा लोहा लानेमें सुभीता है, इससे न्यूकैसलमें और टाइन नदीके किनारेके दूसरे शहरोंमें फौलादके बड़े बड़े जहाज, जहाजके एंजिन, रेलें और रेलोंके डब्बे, पटरियाँ और पुलोंके हिस्से बनानेके कारखाने खड़े हो गये हैं। कहते हैं कि इंग्लैण्डमें बननेवाले कुल जहाज़ोंमेंसे आधे टाइन नदीके किनारेके शहरोंमें ही बनाये जाते हैं।

ऊपर इंग्लैण्डके कोयले और लोहेके व्यवसायका जो थोड़ा-सा विगतवार वर्णन दिया है उसका उद्देश्य यह बताना है कि ज़मीनके

पेटमें छिपे हुए इन पदार्थोंको परिश्रमसे बाहर निकालकर अँग्रेज लोगोंने अपने बलसे प्रकृतिपर कितनी बड़ी विजय पाई है। हम कह सकते हैं कि पेनाइनके पूर्व-पश्चिमकी तरफ़का यॉर्कशायर-लंकेशायरका सैकड़ों मीलों तक फैला हुआ यह पूरा हिस्सा धड़धड़ आवाज करनेवाला मानो एक ही बड़ा भारी कारखाना है। जहाँ जाओ वहाँ पुतलीघर, लोहेकी बड़ी बड़ी भट्ठियाँ और उनमेंसे निकलनेवाला धुआँ ही धुआँ दिखाई देता है। जहाँ जाओ वहाँके रास्ते और सामनेसे आते हुए आदमियोंके कपड़े भी कोयले-से काले देख पड़ेंगे। कोयला लादकर ले जानेवाली मालगाड़ियाँ एकके बाद एक जाती हुई दिखाई देंगीं। यहाँकी नदियोंके पानीका रंग भी इतना बदल गया है कि मालूम होता है नदियोंमें स्याही बह रही है। जहाँ जाओ वहाँ कारखानोंकी धड़धड़ आवाज़ ही सुनाई देती है। सारांश यह कि कोयला-महाराजके इस राज्यमें चारों ओर भीड़, धूआँ, काला रंग, मैले कपड़े और कर्कश आवाज़का ही बोलबाला है।

आर्थिक परिवर्तन : मज़दूरोंकी स्थिति

कोयलेने इंग्लैण्डकी समाज-व्यवस्था और आर्थिक परिस्थितिमें भी क्रांति ला दी है। पहले घरू उद्योग थे, हरेक आदमी एक तरहसे स्वतंत्र था; अब पुतलीघर चलानेके लिए लाखों रुपयोंकी पूँजी चाहिए। इससे मुट्ठी-भर धनवानोंके हाथमें सब कारखाने आ गये और लाखों मज़दूरोंपर उनका अधिकार हो गया। इस प्रकार मालिक और मज़दूर : दो भेद पड़ गये। कारखानोंके, खानोंके, बन्दरगाहों और रेल्वेमें काम करनेवाले मज़दूरोंने अपने अपने संघ स्थापित कर लिये और ठीक तनख्वाह पाने, कामके घंटे कम कराने वगैरहके आन्दोलन शुरू किये। उनको अच्छे अच्छे नेता

मिल गये और उन्होंने मज़दूरोंकी माँगोंको जनताके सामने बड़े ही अच्छे ढँगसे पेश किया जिससे मज़दूरोंकी बहुत-सी माँगें मालिकोंको स्वीकार करनी पड़ीं। कारखानोंमें काम करनेवालोंकी हालत अब सन्तोष-जनक है : उनको आठ घंटे काम करना पड़ता है और भरपूर वेतन मिलता है, वे तीन-चार कमरोंके घरोंमे रहते हैं, छुट्टीके दिन बाल-बच्चोंके साथ शहरके बाहर जाते हैं और पैसे खर्च कर सकते हैं।

इधर कुछ समयसे सब संघोंने मिलकर अपना एक बड़ा सामान्य संघ भी बना लिया है जिसके द्वारा वे ऐसे महत्त्वके प्रश्नोंपर आन्दोलन करते हैं जो सबके लिए समान हितके होते हैं। इस संघके पास लाखों रुपये हैं और अख़बार, व्याख्यान वगैरह साधनोंके द्वारा वह लोगोंके सामने अपनी बातें पेश करता है। यदि यह कहा जाय कि इस संघके हाथमें इंग्लैण्डकी नाड़ी है तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। यदि किसी कारण कोयलेकी खानोंके मज़दूर हड़ताल कर देते हैं तो इंग्लैण्डकी नसें ढीली पड़ जाती हैं : लोहेके कारखाने बंद, पुतलीघर बंद, रेलगाड़ियाँ बंद, घरकी रोशनी बंद और यहाँतक कि घरके चूल्हे भी बंद। यदि कभी कोई एक ही संघ किसी कारणसे हड़ताल कर दे तो दूसरे संघ भी उसके साथ सहानुभूति प्रकट करनेके लिए और मालिकोंकी अक्ल ठिकाने लानेके लिए हड़ताल करनेको तैयार रहते हैं। यदि कभी ऐसी कोई सार्वत्रिक हड़ताल हो जाय तो उससे कितना अनर्थ होगा, इसकी कल्पना नहीं की जा सकती।

इस प्रकार पिछले सौ वर्षोंमें व्यवस्थित आन्दोलन करके इंग्लैण्डके मज़दूरोंने बहुत-सी सहूलियतें प्राप्त कर ली हैं। पार्लमेंटमें मजदूरोंकी माँगें पेश करनेके लिए २५-३० साल पहले ‘ मज़दूर दल ’ नामक

एक नया दल स्थापित हुआ और इस दलके कुछ लोग पार्लमेंटमें भी चुन लिये गये। इस दलने बड़ी लगनसे काम किया और अपने कार्य-क्रमकी सचाईका जनताको विश्वास दिलाकर सन् १९२९ के चुनावमें पार्लमेंटमें बहुमत भी प्राप्त कर लिया। फल यह हुआ कि ब्रिटिश-साम्राज्यपर मज़दूर दलके मंत्रिमण्डलका राज्य हो गया और विद्यार्थी-अवस्थामें जिनको चायके बदले गरम पानी पीना पड़ता था वे मि० मेकडानल्ड इंग्लैण्डके प्रधान मंत्रीके पदपर बैठ गये।

इंग्लैण्डकी खेती

इंग्लैण्डके पूर्व भागकी ज़मीन नीची है, इसलिए वहाँ वर्षा कम होती है और गर्मियोंमें हवा गरम रहती है। गेहूँके लिए यह हवा अनुकूल है, इसलिए इस भागमें सैंकड़ों वर्षोंसे गेहूँकी खेती होती है। इसी प्रकार उत्तरकी ओरके यॉर्कशायरमें एक चालीस मील चौड़ी बहुत उपजाऊ घाटी है। वहाँ भी काफी गेहूँ होता है। इंग्लैण्डकी मुख्य फसल गेहूँ ही है, पर वह काफी नहीं होता, इसलिए आस्ट्रेलिया, कॅनाडा वगैरह देशोंसे गेहूँ और गेहूँका आटा मँगाना पड़ता है। गेहूँके सिवाय जौ और ओट भी वहाँ होते हैं। इनके लिए बहुत अच्छी ज़मीनकी जरूरत नहीं होती इसीलिए इंग्लैण्डमें इनकी खेती बहुत होती है। इसके अलावा नैऋत्यकी ओरके प्रदेशमें स्ट्राबेरी, चेरी, सेब और हॉप नामक फलोंकी खेती होती है। वहाँके बाग़वान इनके पौधे लगाते और तरह तरहके फल रेलगाड़ीके द्वारा हर रोज लंदनको भेजते हैं। इंग्लैण्डके किसान और बाग़बान कारखानेवालोंके समान ही होशियार हैं। जिस झाड़के लिए जो लाभकारी होता है उसी खादका उपयोग करके, जमीनको मेहनतसे कमाकर, किस फ़सलके बाद क्या बोना फ़ायदेमंद है, इसकी अच्छी तरह

जाँच करके और उसके अनुसार फसलका सिलसिला डालकर वे सारे साल काम करते रहते हैं। इस तरह थोड़ी जमीनमें बहुत कमाई कर लेते हैं। ईस्ट ऑंग्लियाका एक किसान एक एकड़में बत्तीस बुशल गेहूँ पैदा करता है जब कि पँजाबकी नहरोंवाली उत्तमसे उत्तम जमीनमें भी ज़्यादहसे ज्यादह एक एकड़में बीस बुशल गेहूँ पैदा होता है। इंग्लैण्डमें वर्षाका कोई खास मौसम नहीं है, सारे ही साल रिमझिम रिमझिम वर्षा होती रहती है, इसलिए अँग्रेज किसानको अकालका डर या नहरसे पानी लेनेकी दिक़्त नहीं होती।

इंग्लैण्डमें बैलोंकी जगह घोड़ोंका उपयोग होता है। भाफ़से चलनेवाले हलों और काटनेके यंत्रोंका आविष्कार हो जानेके कारण अब बहुतसे किसान उनका भी उपयोग करने लगे हैं। उत्तरके और मध्यभागके कारखानोंके प्रदेश जैसी घनी आबादी दक्षिणके इस खेती-प्रधान प्रदेशमें नहीं है। इस भागमें अब भी छोटे छोटे गाँव हैं और उनका

इंग्लैण्डका एक गाँव

सृष्टि-सौन्दर्य बखानने लायक है। गाँवोंमें दो तरहके लोग रहते हैं:

किसान और खेतोंमें काम करनेवाले मज़दूर। किसान लंडन या दूसरे शहरोंमें रहनेवाले ज़मीनदारोंसे किरायेपर खेत ले लेते हैं और उनके पास ही घर बनाकर रहते हैं। उनके छोटे छोटे घर सुन्दर और दोमंज़िले होते हैं। घरके पिछले भागमें बगीचा होता है। पास ही घोड़ोंके लिए अस्तबल, गौओंके लिए गोशाला और घासकी गंजी होती है। घरके अगले भागमें मुर्गियोंके दरबे होते हैं और इधर उधर मुर्गियाँ, सुअर और बत्तखें फिरती रहती हैं। घरोंपर बेलें फैली होती हैं और हरेक खेतके चारों ओर बाड़ होती है।
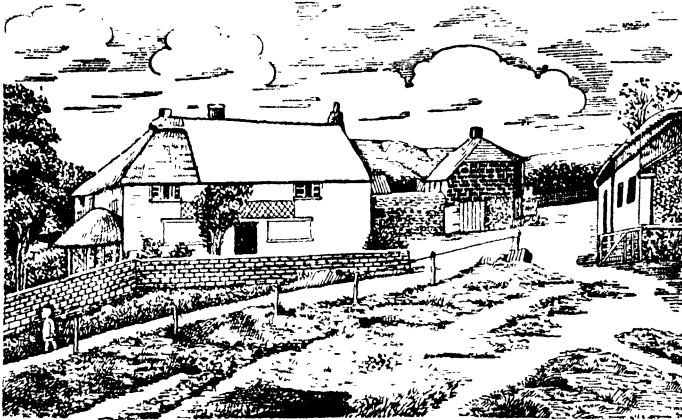
इंग्लैण्डमें एक किसानका घर

गिरजाघर और स्कूल

मज़दूर किसानोंकी मालिकीकी झोंपड़ियोंमें रहते हैं। उनकी मज़दूरीमेंसे झोंपड़ीका किराया काट लिया जाता है। झोंपड़ीके पिछले भागमें शाक-सब्जी उगानेके लिए थोड़ी-सी जगह होती है। थोड़े-से किरायेपर मज़दूरोंको भी खेतका एक छोटा-सा टुकड़ा मिल सकता है जिसे एलौटमेण्ट कहते हैं। वे इसमें थोड़ी-सी शाक-सब्जी लगाकर

अपनी कमाईको कुछ बढ़ा लेते हैं। इन मज़दूरोंकी स्थिति सन्तोषजनक नहीं है। कारखानोंके मज़दूरोंकी तरह इनका कोई संघ भी नहीं है। मौसम अच्छा हो तो उन्हें साल-भर काम मिलता है, नहीं तो जब मिलता है तभी करते हैं। महायुद्धसे पहले वे थोड़े-बहुत रुपये जमा करके किरायेपर खेत ले लेते थे, पर अब किरायेपर इस तरह खेत मिलना भी कठिन होता जा रहा है।

गाँवके बाहर एक ऊँची इमारत होती है। यही गाँवका गिरजाघर है। इसमें रविवारको बाल-बच्चोंके साथ गाँवके सब लोग साफ़ कपड़े पहिनकर परमात्माकी प्रार्थना करनेके लिए जमा होते हैं। इसी गिरजाघरमें गाँवके लोगोंकी शादियाँ होती हैं और लड़कोंका नामकरण और बप्तिस्मा होता है। कोई मर जाता है तो उसका शव गिरजाघरमें लाया जाता है और जब पादरी मृत आत्माके लिए प्रार्थना कर चुकता है तब गिरजाघरके पिछले भागमें जो बड़ा मैदान होता है वहाँ उसे लकड़ीके सन्दूकमें रखकर गाड़ देते हैं और उस जगह स्मारकके रूपमें एक पत्थर लगाकर उसपर मृत मनुष्यका नाम खोद देते हैं। इंग्लैण्डमें मुर्दे जलानेकी प्रथा नहीं है। गाँवोंमें गिरजाघरके अलावा दूसरी महत्त्वकी इमारत पाठशाला होती है। यह इमारत छोटी परन्तु मज़बूत होती है और उसमें हवा और प्रकाश काफी होता है। लड़कोंके बैठनेके लिए बेञ्चें और लिखनेके लिए डेस्कें होती हैं। लड़कोंको पुस्तकें, कापियाँ, निबें, पेन्सिलें वगैरह सरकारकी ओरसे ही मिलती हैं।

जागिरदार और अमीर

लंडन राजधानीमें इंग्लैण्डके सरदारोंके बड़े बड़े मकान हैं। जब तक पार्लमेण्टकी बैठकें होती रहती हैं तब तक वे उन मकानोंमें रहते हैं, पर

उनके गाँवोंमें भी उनका एक एक महल अवश्य होता है। ये महल पुराने और विशाल होते हैं। उनके चारों ओर सुन्दर बगीचे होते हैं और उनमें पुराने समयके कीमती चित्र और फर्नीचर होते हैं। सरदार लोग वर्षके कुछ महीने अपने इन महलोंमें ही बिताते हैं और अपने असामियों और दूसरे किसानोंसे हिलमिलकर रहते हैं। वे अपने मित्रोंको मेज़वानीके लिए बुलाते और उनके साथ शिकार और सैर किया करते हैं। ये सुशिक्षित होते हैं और अपने गाँवका बहुत ख्याल रखते हैं। इंग्लैण्डकी खेतीका जो कुछ सुधार हुआ है, उसमें इन लोगोंका बहुत बड़ा हाथ है।

हमारे यहाँके माफीदार, ज़ागीरदार आदि भी पहले अपने गाँवोंमें ही रहते थे और उनपर उनका बहुत प्रेम रहता था। महादजी सिन्धियाको, इतने ऊँचे पदपर पहुँच जानेपर भी अपने जन्मके गाँवका बहुत अभिमान था और वे अपनेको 'पाटीलबुवा' कहलानेमें ही गौरव समझते थे। पर अब तो जागीरदारों और पेन्शनयाफ्ता लोगोंको शहरोंमें ही रहना अच्छा लगता है। यदि वे अपने गाँवोंमें जाकर वहाँके ही लोगोंमें हिलमिल कर रहें तो कितना अच्छा हो!

अँग्रेज़ लोग व्यक्ति-स्वातंत्र्यके कितने हिमायती हैं इसका पता उनकी कुटुम्ब-पद्धतिसे लगता है। उनके यहाँ हमारी तरहकी संयुक्त कुटुम्ब-पद्धति नहीं है। लड़का जबतक रोज़गार करके अपना और अपनी स्त्रीका पेट भरने लायक नहीं हो जाता, तब तक शादी नहीं करता। शादी होते ही वह अपनी स्त्रीके साथ अलग घर बना कर रहने लगता है। माँ-बाप, तीन-चार भाई, उनकी स्त्रियाँ, बच्चे-कच्चे और दो-चार पासके या दूरके रिश्तेदारोंसे किसी अँग्रेज़का घर भरा नहीं होता। सासका त्रास, देवरानियों, जेठानियों और ननदोंकी काना-

फूसी, बहुओंकी किटकिट, बच्चोंपरसे झगड़े किसी अँग्रेज़-परिवारमें नहीं दिखाई देते। अँग्रेज़-परिवार छोटा होता है। हरेक अँग्रेज़ अपने अलग घरमें अपनी मर्ज़ीके अनुसार रहता है। भाई अलग रहते हैं, इससे उनमें प्रेम नहीं होता हो सो बात नहीं। वे एक दूसरेसे मिलते जुलते हैं, एक दूसरेके यहाँ भोजन करते हैं, सुख-दुःखकी बातें करते हैं और परस्पर सहायता भी करते हैं।

व्यक्ति-स्वातंत्र्यका पोषण

अँग्रेजोंके घर भी व्यक्ति-स्वातंत्र्यके पोषक होते हैं। गरीब मज़दूरोंकी बात छोड़ दो, पर मध्यम और ऊँचे दर्ज़ेके कुटुम्बोंमें हरेकके सोनेके लिए अलग कमरा होता है। लड़का तीन-चार सालका हुआ कि मातासे अलग दूसरे कमरेमें सोने लगता है। शामके छः बजे कि माँ बच्चेको नहला देती है और खिला-पिलाकर अँधेरे कमरेमें सुलाकर अपने काममें लग जाती है। दोपहरको भी बच्चे घरके पीछेके बागकी खुली जगहमें ही बच्चे-गाड़ीमें सुला दिये जाते हैं और उनके पास कोई नहीं बैठता।

सुखी परिवारोंमें छोटे बच्चोंके खेलनेके लिए अलग कमरा होता है जिसको नर्सरी कहते हैं। इस नर्सरीमें बच्चोंके खिलौने, चित्र, चित्रोंकी किताबें, घर बनानेकी लकड़ीकी ईंटें, मेकैनो वगैरह सामान होता है।

अँग्रेजोंके घरका दरवाज़ा और हरेक कमरेका दरवाज़ा हमेशा बन्द रहता है। घरके अन्दर जानेके लिए दरवाज़ेके पास लगे हुए बिजलीके बटनको दबाना चाहिए अथवा दरवाजा खटखटाना चाहिए। कमरेमें जानेसे पहले भी दरवाजा खटखटाना होता है। 'अंदर आइए' ऐसा उत्तर मिलनेपर ही अंदर जाना चाहिए। कहावत है कि

अँग्रेज गृहस्थका घर उसका किला है और यह कथन उनकी व्यक्ति-स्वातंत्र्यकी भावनाको देखते हुए सार्थक भी है।

अँग्रेजोंका व्यक्ति-स्वातंत्र्य उनकी स्थानिक स्वराज्य-पद्धतिमें और सामाजिक संस्थाओंके काम-काजमें अच्छी तरह दिखाई पड़ता है। दूसरे देशोंमें जो बहुतसे काम स्वयं वहाँकी सरकारोंको करने पड़ते हैं उन्हें इंग्लैण्डकी जनता अपनी ही जवाबदारीपर कर लेती है। उसमें सरकारका हाथ डालना अँग्रेज-समाज कभी बरदाश्त नहीं कर सकता। कुछ समय पहले तक तो इंग्लैण्डमें शिक्षा-विभाग भी सरकारी न था; और अब, यद्यपि वह है तो भी उसका अधिकार सलाह या रुपये देनेसे ज्यादह कुछ नहीं है। इसका मूल व्यक्ति-स्वातंत्र्यमें ही है। लंडन शहरके दवाखाने और अस्पताल सरकारकी एक पाईकी भी सहायताके बिना लोगोंकी खानगी मददसे चल रहे हैं। सरकारका उनपर कोई अधिकार नहीं।

अँग्रेजोंकी कार्य-पद्धति

यह कहनेमें कोई अतिशयोक्ति नहीं कि इंग्लैण्डके विविध प्रकारके समाज-सुधारोंका इतिहास वहाँकी स्वतंत्र व्यक्तियों और खानगी संस्थाओंके कर्तृत्वका ही इतिहास है। यदि एक-दो आदमियोंके ध्यानमें आता है कि कोई काम होना चाहिए, तो वे एक सभा बुलाते हैं और अपना उद्देश्य और अपनी योजना उसके सामने पेश करते हैं। तत्काल ही अलग अलग समितियाँ बना दी जाती हैं और वे अच्छे ढँगसे काम शुरू कर देती हैं। कोई चन्दा इकट्ठा करती हैं और कोई लोगोंमें उस सम्बन्धकी जागृति उत्पन्न करती हैं। इस तरह शान्तिके साथ कुछ बरसोंतक काम जारी रक्खा जाता है। कुछ समय बाद पार्लमेंटका कोई मेम्बर उस प्रश्नको हाथमें ले लेता है और पार्लमेंटके सामने पेश कर देता है। पूरी लोक-

जागृति हो चुकी होती है तो कानून पास हो जाता है और वह सुधार अमलमें आने लगता है।

कोई भी सामाजिक कार्य करना हो तो सभाएँ करना, समितियाँ बनाना, काम बाँट लेना और उसे नियमित रूपसे अच्छी तरह करना : यह अँग्रेजोंका स्वभाव हो गया है। धनी कुटुंबोंके स्त्री और पुरुष दोनों ही भोजनके बाद किसी न किसी सभा या कमेटीमे सप्ताहमें एक-दो बार ज़रूर जाते हैं। चार-छह आदमियोंका इकट्टे होना, बहस करना और बहुमतसे जो निश्चित हो वह करना : यह इंग्लैण्डकी 'कमेटी-संस्था' की विशेषता है और यह अपूर्व है। अँग्रेज लोग विशेषज्ञोंपर विश्वास रखकर उन्हींपर सब काम और जवाबदारी डालकर अलग नहीं बैठ जाते। इंग्लैण्डके युद्ध-विभागके मुख्य अधिकारीकी जगह आजतक किसी पेशेवर सिपाहीको नहीं मिली। शिक्षा-विभाग, स्थानिक स्वराज्य-विभाग वगैरह विभाग लोगों द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियोंके ही हाथमें रहते हैं और उन विभागोंके वेतन-भोगी अधिकारियोंको प्रतिनिधियोंका ही हुक्म मानना पड़ता है।

स्त्री-स्वातंत्र्यकी भावना

व्यक्तिस्वातंत्र्य-प्रिय अँग्रेज-समाजमें पुरुषोंके ही समान स्त्रियोंको भी स्वतंत्रता और सत्ता प्राप्त है। अँग्रेज स्त्रियाँ पुरुषोंकी तरह सब तरहके रोज़गार करती हैं और यदि वे चाहें तो जन्म-भर विवाह न करके भी स्वतंत्र रह सकती हैं। ऐसा कोई भी मर्दाना खेल नहीं जिसे स्त्रियाँ न खेलती हों। स्त्रियोंकी पोशाकमें भी इन दिनों बड़ा परिवर्तन हो गया है। वे घुटने तकके तंग घाघरे पहनती हैं और गर्दन तक बाल रखती हैं। कुछ स्त्रियाँ तो बिल्कुल पुरुषोंकी तरह ही बाल कटवाने लगी हैं। कुछ लोग कहते हैं कि अँग्रेज पुरुषोंके शरीरपर

जरूरतसे ज्यादह और स्त्रियोंके शरीरपर जरूरतसे कम कपड़े होते हैं। परन्तु डाक्टरोंकी राय है कि कम कपड़े पहननेसे अँग्रेज स्त्रियोंके स्वास्थ्यमें विशेष सुधार हुआ है।

कुटुंबका दैनिक कार्य

हमारे यहाँकी माताएँ और सासें, यदि लड़की या बहू काम न करती हो, तो, व्यंग कसती हैं 'अजी, अब तो यह मेम होनेवाली है!' पर वास्तवमें वे नहीं जानतीं कि अपने देशमें इन मेमोंको कितना काम करना पड़ता है। इंग्लैण्डमें मँहगाई बहुत है, इसलिए मध्यम स्थितिके कुटुम्ब तक नौकर-नौकरानी नहीं रख सकते। रखते भी हैं तो ऊपरके कामके लिए रखते हैं। रसोई करना, कपड़े धोना-सुखाना, इस्तरी करना, कपड़े सीना और रफू करना, चीजें खरीदना, हिसाब रखना, पत्र लिखना वगैरह सब काम घरकी मालकिनको ही करने पड़ते हैं। परन्तु उन्हें वे नये ढंगसे और सिलसिलसे करती हैं, इसलिए उनको गाने-बजाने और लिखने-पढ़नेके लिए भी काफी फुरसत मिल जाती है और संध्याके भोजनके बाद वे सभा, सिनेमा, नाटक, गानेके जलसे वगैरहमें भी जा सकती हैं।

रविवारका दिन आरामका होता है। इस दिन रेस्टोराँ, सिनेमा और नाटक बंद होते हैं और परिवारके आदमी एक दूसरेके सहवासमें अपना समय बिताते हैं। सबेरे गिरजाघरमें प्रार्थनाको जाते हैं और दोपहरको बाल-बच्चोंके साथ बागोंमें घूमते हैं। कुछ परिवार तो शनिवार और रविवार समुद्रके किनारेके किसी अच्छे गाँवमें जाकर बिताते हैं। रातको यदि कहीं बाहर न जाना हो तो कुटुंबके आदमी एक बड़े कमरेमें अँगीठीके चारों ओर बैठ जाते हैं। कोई किताब पढ़ता है, कोई पियानो बजाता है और कोई गाता है।

दिन-भरकी एक दूसरेकी बातें इसी समय एक दूसरेको मालूम होती हैं क्योंकि सबेरे साढ़े आठ बजे काम-धंधेके लिए बाहर निकले हुए आदमी शामको छः साढ़े छः बजे वापिस आ जाते हैं। दोपहरका भोजन प्रायः सभी लोग अपने कामकी जगहके नज़दीकके ही किसी होटलमें कर लेते हैं।

अँग्रेज़ खुले मैदानके खेलोंके बड़े शौकीन हैं। महत्त्वके क्रिकेट अथवा फुटबॉलके मेच देखनेके लिए चालीस-पचास हज़ार तक लोग जमा हो जाते हैं। स्कूलों और कॉलेजोंमें मर्दाना खेलोंको बड़ा महत्त्व दिया जाता है। अच्छे खिलाड़ीका अँग्रेज़-समाजमें बड़ा आदर होता है। सन् १९२६ की गर्मियोंमें किसी अँग्रेज़ गृहस्थसे यदि कोई पूछता कि इंग्लैण्डमें सर्वप्रिय पुरुष कौन है तो वह झट क्रिकेटके उस समयके मशहूर खिलाड़ी हॉब्सका नाम ले देता। खेलमें नियमोंकी ठीक ठीक पाबंदी करने तथा नियम-विरुद्ध खेल कर प्रतिपक्षीको हरानेकी वृत्तिसे दूर रहनेको अँग्रेज़ 'फेयर प्ले' कहते हैं। अँग्रेजोंकी खेलके मैदानकी यह ईमानदारी और नियम-पालनकी वृत्ति उनके खानगी जीवन और सामुदायिक राजनीतिमें भी दिखाई देती है। यदि कोई नियम-विरुद्ध आचरण करता है तो अँग्रेज उसे तुरंत 'This is not cricket' (यह क्रिकेट नहीं है) कह कर याद दिला देता है।

अँग्रेजोंका आदर्श शिष्टि-पालन या डिसिप्लिन

इंग्लैण्डकी (Queue) क्यू-पद्धति शिष्टि-पालनका एक उत्तम उदाहरण है। 'क्यू'का मतलब है एक कतारमें एकके पीछे एक खड़े होना और अपनी बारी आनेपर आगे बढ़ना। इंग्लैण्डमें रेलके टिकिटघरों, ट्रामगाड़ी और ऑम्नीबसके ठहरनेके स्थानों या नाटक-सिनेमाके टिकिटघरोंके पास कभी गड़बड़, धक्कामुक्की और गाली-गलौज सुनाई

नहीं देती। सब आदमी 'क्यू' में कतार बाँधे खड़े रहते हैं और अपनी बारी आनेपर ही टिकिट लेते हैं या ट्राम और बसमें बैठते हैं: कभी कभी जब किसी प्रसिद्ध नाटकके शुरू होनेके दिन बहुत भीड़ होती है तब तो टिकिट लेनेके लिए लोग आठ आठ दस दस घंटेतक शान्तिके साथ 'क्यू' बनाये खड़े रहते हैं।
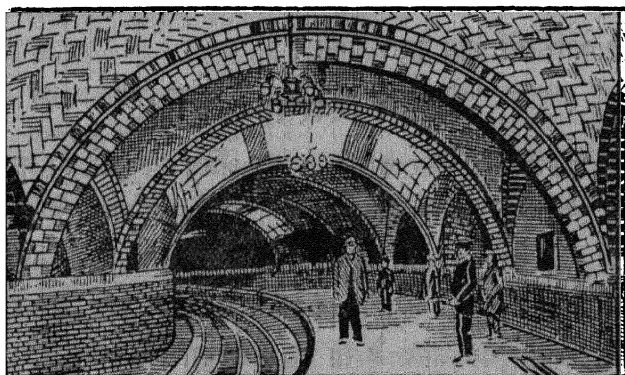
जमीनके अंदर चलनेवाली ट्यूब-रेलवेका एक स्टेशन

छुटपनसे ही इस तरह अपने मनपर काबू रखनेकी आदत हो जानेके कारण प्रत्येक अँग्रेजको शिष्टि-पालनका अभ्यास पड़ जाता है। अँग्रेज़ कभी एकाएक अपने मनके भीतरके विचारको व्यक्त नहीं करेगा। उसके होठ बंद ही होंगे। कितना ही डर लगे अथवा प्रेम पैदा हो अँग्रेज कभी उसे जल्दी बेढंगे तौरपर व्यक्त नहीं करेगा। किसी अँग्रेज बच्चेको यह पसन्द न आयगा कि उसकी माँ स्कूलके दो-चार साथियोंके सामने उसका चुंबन करे। इसकी अपेक्षा वह उसकी दो थप्पड़ें खाना अधिक पसंद करेगा। व्याख्यान देते समय किसी अँग्रेजकी आवाज़ जोशके कारण काँपेगी नहीं और न उसकी आँखोंमें पानी

ही आयगा। रेलगाड़ीमें तुम्हारे पास कोई अँग्रेज़ मुसाफ़िर आकर बैठे तो वह कभी तुमसे एक शब्द भी न बोलेगा। यदि तुम्हारे हाथसे अख़बार गिर पड़ेगा तो वह एकदम उठाकर दे देगा, तुम्हें सामान उठानेमें मदद कर देगा, पर उसके बाद ही वह गुम-शुम होकर बैठ जायगा। कठोर समाज-सेवा और उज्ज्वल स्वार्थ-त्याग करते समय भी अँग्रेजका बर्ताव वैसा ही शान्त होता है जैसा कारखाने अथवा ऑफ़िसमें काम करते समय।

राष्ट्रीय स्थिरताकी वृत्ति

इस शान्त और स्थिर वृत्तिके कारण अँग्रेज़ स्वभावसे ही क्रान्तिकी अपेक्षा उत्क्रान्ति या क्रम-विकासको अधिक पसन्द करता है। उसको एकदम कोई चीज़ बदलना अच्छा नहीं लगता और किसी नई बातपर जल्दी उसका विश्वास भी नहीं जमता। साथ ही, यदि उसको किसी बातपर विश्वास बैठ जाता है तो वह उसे दूसरोंके जीमें बिठा देनेके लिए भी वर्षों बिता देता है, पर कभी ऊबता नहीं और न कभी बिगड़ ही उठता है। इस जन्म-स्वभावके कारण वह या तो अकसर दूसरे देशोंकी राजनीतिको समझता नहीं और यदि समझता भी है तो उस भावनासे समरस होनेमें बहुत समय लगा देता है। इसी धीमी वृत्तिके कारण अँग्रेज-समाजमें और सरकारमें एक प्रकारकी स्थिर-वृत्ति आ गई है जिसकी हाथका छोड़कर भागते हुएके पीछे लगनेवाले भावनाशील और चंचल वृत्तिके राष्ट्रोंमें बड़ी कमी है।

अभ्यास

१ भौगोलिक परिस्थितिको ध्यानमें रखकर बताओ कि किस प्रकार ग्रेट ब्रिटेन व्यापार और हुनर-उद्योगमें दुनियासे बहुत आगे बढ़ गया है?

२ यॉर्कशायरमें ही ऊनके कपड़ेका व्यवसाय क्यों स्थायी हुआ ? इसके मुख्य केन्द्र कौन कौन-से हैं ? ब्रिटेनको ऊन कहाँ कहाँसे मिलता है ?
३ ग्रेटब्रिटेन इतना धनवान् और बलवान् होनेपर भी खानेकी चीज़ोंके लिए इतना पराधीन क्यों है ? क्या यह पराधीनता अब दूर की जा सकती है ? इस दिशामें कुछ प्रयत्न हुए हों तो बताओ ।
४ किन भौगोलिक परिस्थितियोंके कारण अँग्रेज लोग नाविक, मुसाफ़िर और व्यापारी बने ? पुराने समयमें, जब हिन्दुस्तानमें अशोकका राज्य था, ब्रिटेनके लोगोंकी क्या हालत थी ?
५ भौगोलिक दृष्टिसे ग्रेटब्रिटेनके आधुनिक उन्नतिके कारणोंको समझाओ।
६ ब्रिटिश-साम्राज्यके विकासको ध्यानमें रखकर उसकी स्थापनाके अंगभूत तत्त्वोंको समझाओ।
७ आधुनिक युगको कभी कभी ' कोयले और लोहेका युग ' कहा जाता है। पिछली सदीकी इंग्लैण्डकी औद्योगिक उन्नतिको ध्यानमें रखकर समझाओ कि यह कथन कहाँतक सत्य है ।
८ अपने शब्दोंमें बताओ कि कोयलेकी खोजके पहलेका इंग्लैण्ड कैसा था।
९ इंग्लैण्डके औद्योगिक परिवर्तनका इतिहास बड़ा मनोरंजक है। इस विषयकी अधिक जानकारी तुम्हें इतिहासकी पाठ्य-पुस्तकोंमेंसे मिलेगी। उनका अध्ययन करके इस विषयपर एक निबंध लिखो ।
१० भौगोलिक दृष्टिसे ऊनका उद्योग इंग्लैण्डके लिए क्यों आवश्यक है ? इस उद्योगके परिवर्तनका इतिहास संक्षेपमें लिखो ।
११ इंग्लैण्डमें कपड़ेके व्यवसायका विकास किन्हीं विशेष यंत्रोंके आविष्कारके कारण ही हो सका है। इन यंत्रों और उनके आविष्कारकोंके विषयमें संक्षेपमें एक लेख लिखो ।
१२ लंकेशायर सूती कपड़ेके व्यवसायके लिए भौगोलिक दृष्टिसे किस प्रकार विशेष अनुकूल कहा जा सकता है ?
१३ लिवरपूल और मैंचेस्टरके विषयमें टिप्पणी लिखो। उनके साथ हिन्दुस्तानके जिन शहरोंकी अधिकसे अधिक तुलना की जा सकती है उनके नाम लिखो।
१४ अहमदाबादके सूती कपड़ेके व्यवसायका केन्द्र बन जानेके कौनसे भौगोलिक कारण हैं ?

१५ इंग्लैण्डमें लोहेके व्यवसायके केन्द्र कौन कौनसे हैं ? उनमेंसे किसी एक-पर टिप्पणी लिखो । बर्मिंगहामके साथ हिन्दुस्तानके जमशेदपुरकी तुलना की जा सकती है । उसकी स्थापना और विकासके विषयमें कुछ जानते हो तो लिखो ।

१६ आर्थिक क्रांतिके कारण इंग्लैण्डके मज़दूरोंकी हालतमें जो परिवर्तन हुए हैं उनका वर्णन करो ।

१७ औद्योगिक देश होनेपर भी इंग्लैण्डमें अभीतक खेती होती है । इस खेतीकी क्या विशेषता है ? अपने यहाँकी खेतीकी पद्धतिसे यह खेती किस बातमें भिन्न है ?

१८ इंग्लैण्डके ग्राम-जीवनके विषयमें क्या जानते हो ?

१९ यह दिखाओ कि व्यक्ति-स्वातंत्र्यको अँग्रेज-समाजमें और अँग्रेज-घरमें कैसे पोषण मिला । हमारे यहाँ यह गुण आवश्यक परिमाणमें क्यों नहीं फैलता ? तुम इसका क्या कारण समझते हो ?

२० उदाहरण देकर समझाओ कि किस प्रकार स्त्री-स्वातंत्र्यकी भावना अँग्रेजोंमें बड़े परिमाणमें दिखाई देती है ।

२१ एक अँग्रेज स्त्री घरमें जो काम करती है उसका वर्णन करके सिद्ध करो कि 'तू तो मेम हो गई है' का लड़कियोंको उलहना देना बहुत अंशोंमें ग़लत है ।

२२ यह क्यों कहा गया है कि 'वाटरलूका युद्ध ईटनके खेलके मैदानमें जीता गया' ? अनुकरण करने लायक ऐसे कौन-से गुण हैं जो अँग्रेजोंके खेलोंमें पाये जाते हैं ?

२३ अँग्रेज लोगोंकी जानने-योग्य विशेषताओंका वर्णन करते हुए अपने मित्रको एक पत्र लिखो ।

१८ नई दुनियाके अमेरिकन

चलो, अब हम अमेरिकाकी मुलाकात लें। अमेरिका खंडके दो भाग हैं : दक्षिण अमेरिका और उत्तर अमेरिका। उत्तर अमेरिकाके भी यद्यपि दो विभाग हैं : केनेडा और संयुक्त-राज्य। पर साधारणतः संयुक्त-राज्य ही अमेरिका कहलाता है। उसीकी चर्चा हम इस अन्तिम अध्यायमें करेंगे।

कुदरतकी देन

अमेरिका एक वैभव-संपन्न और भाग्यशाली देश है। विस्तारमें वह हिन्दुस्तानसे लगभग दुगना और ग्रेटब्रिटेनसे चौंतीस गुना है। इस विशाल देशमें सैकड़ों बड़ी बड़ी नदियाँ हैं और उन नदियोंके किनारेका प्रदेश बहुत ही उपजाऊ है। दुनियामें पैदा होनेवाले गेहूँका चौथा भाग अकेले अमेरिकामें ही होता है और दुनियाके सारे देश मिलकर जितनी कपास पैदा करते हैं उससे अधिक अकेला अमेरिका ही करता है। वहाँके बाग भी मीलों लंबे होते हैं जिनमें नारंगियाँ, सेब और दूसरे तरहके लाखों फल होते हैं और गन्ना भी बहुत होता है। वहाँकी खानोंमें आस्ट्रेलिया और दक्षिण आफ्रिकाकी खानों जितना ही बेशुमार सोना और इंग्लैण्डकी खानों जितना ही कोयला निकलता है। दूसरे किसी भी देशकी अपेक्षा वहाँ लोहा और चाँदी अधिक निकलती है और दुनियामें पैदा होनेवाले ताँबेका भी आधा भाग वहीं होता है। वहाँके जंगलोंमें दूसरे देशोंकी अपेक्षा इमारती लकड़ी ज़्यादह होती है और चरागाहोंमें असंख्य गौएँ और सूअर चरते हैं जिनसे वहाँका मांसका व्यापार भी बहुत बड़ा है।

अमेरिकाकी सैकड़ों नदियोंके हज़ारों प्रपातों या धबधबोंसे जो बिजली पैदा की जाती है उससे हजारों सूती और ऊनी कपड़ेके

पुतलीघर, लोहेके कारखाने तथा अन्य हजारों प्रकारके कारखाने चलते हैं। इस भाग्यशाली देशका समुद्र-तट बहुत विस्तृत है, इससे वहाँ मछलियोंका रोज़गार भी बहुत जोरोंपर चलता है। इसके अलावा, उसपर सैकड़ों सुविधाजनक बन्दरगाह हैं जहाँसे सैकड़ों जहाज तरह तरहका माल दुनियाके विभिन्न देशोंको ले जाते ले आते हैं।

अमेरिकाका मूल निवासी रेड इंडियन

अमेरिकावालोंके पास बेशुमार दौलत है। वहाँके कुछ व्यापारियोंके पास तो अरबोंकी दौलत है और वे करोड़ों रुपये दान करते हैं। अमेरिकन मज़दूर रोज़ पन्द्रह रुपये कमाता है और किसान और ग्वाले तक अपनी वरू मोटरोंमें बैठ कर कामपर जाते हैं। वहाँ मोटरें इतनी ज़्यादह हैं कि औसतन पाँच आदमियोंके पीछे एक मोटर पड़ती है। अमेरिकाकी सरकार भी बहुत धनी है, इस कारण यूरोपके सभी बड़े बड़े राष्ट्र उसके कर्ज़दार हैं। सारांश यह कि खेती, खनिज-संपत्ति, पशु, कल-कारखाने और व्यापार : इन सब विषयोंमें अमेरिका सारी दुनियाके आगे है।

अमेरिकन प्रजाका संघटन

अमेरिकामें ग्यारह करोड़ आदमी रहते हैं। वे प्रायः यूरोपियन जातियोंके हैं। परंतु तीन सौ साल पहले इस विशाल देशमें एक भी यूरोपियन न था। सारे देशमें भयंकर जंगल फैला हुआ था और

उसमें अनेक जातियोंके, ताँबेके रंगके, सिरोंपर पंख लगानेवाले जंगली लोग शिकार करके अपनी गुज़र करते थे जिन्हें और जिनकी संतानको ' रेड इण्डियन ' कहते हैं ।

सोलहवीं और सत्रहवीं सदीमें इंग्लैण्डमें लोगोंपर धर्मके नामपर बहुत अत्याचार होते थे और अधिकांश लोगोंको अपने धार्मिक मतोंके अनुसार चलनेकी स्वतंत्रता नहीं थी । सन् १६२० ई० में कुछ ऐसे मतवादी लोगोंने सोचा कि धर्म छोड़नेकी अपेक्षा तो देश छोड़ देना बहतर है और वे इंग्लैण्ड छोड़कर इस नये देशमें आकर रहने लगे । कुछ लोग अपनी साहसकी वृत्तिको ही संतुष्ट करनेके ख्यालसे आ बसे । इन नये लोगोंने पेड़ काटे, जमीन जोती और घर बनाये । पहले उन्हें जंगली रेड इण्डियन लोगोंने बहुत दिक किया और ठंडके कारण भी उनकी बड़ी दुर्दशा हुई, पर वे दृढ़प्रतिज्ञ थे, इसलिए वहाँ टिके रहे ।

यह सुनकर कि अमेरिकामें धार्मिक स्वतंत्रता है, दूसरे देशोंके लोग भी वहाँ आने लगे । इसी प्रकार राजसत्ताओंसे त्रस्त हुए भी अनेक यूरोपियन देशोंके हजारों लोग प्रजासत्तावादी और समताके हिमायती अमेरिकाकी ओर दौड़े । सिवाय इनके स्वदेशमें पेटभर खाना न मिलनेके कारण भी बहुतसे गरीब यूरोपियन इस उपजाऊ प्रदेशमें खेती करने आ गये । इस प्रकार अनेक कारणोंसे लाखों यूरोपियनोंका अखंड प्रवाह लगभग सवा सौ वर्षतक अमेरिकाकी ओर बहता रहा । सन् १९१० तक अमेरिकाकी जन-संख्याका लगभग आधा भाग ऐसे लोगोंका था कि जो स्वयं अथवा जिनके माँ-बाप दूसरे देशोंमें पैदा हुए थे । शुरूके बसनेवाले अँग्रेज थे, पर पीछे सब तरहके लोगोंकी भरती होती रही । अब भी यदि तुम न्यूयार्क बन्दरगाहपर खड़े होकर देखो तो कुछ साँवले रंगके इटालियन, लम्बी

दाढ़ीवाले रशियन और पोल, फीके रंगके यहूदी, पाँवोंमें लकड़ीके जूते पहननेवाले डच, लाल कनटोपोंवाले ग्रीक और आयरिश, तथा इंग्लैण्ड, जर्मनी, स्वीडन, नार्वे वगैरह देशोंके हज़ारों लोग अपने अपने सामान और बाल-बच्चोंके साथ जहाज़से उतरते हुए दिखाई देंगे।

सारांश यह कि अमेरिका वर्ण-संकरता और राष्ट्र-संकरताका एक बढ़िया नमूना है। वहाँ भिन्न भिन्न देशोंके, भिन्न भिन्न भाषाएँ बोलनेवाले, भिन्न भिन्न धर्मोंके लाखों लोग इकट्ठे हो गये हैं। तो भी उन लोगोंमें न कभी लड़ाई-झगड़े हुए और न उन्होंने अपने अलग अलग दल ही स्थापित किये। अमेरिकामें आनेसे पहले लोग चाहे जो क्यों न रहें, वहाँ आनेके बाद थोड़े ही वर्षोंमें चाल-चलन और आचार-विचारमें सौ टंच अमेरिकन बन जाते हैं और परस्पर रोटी-बेटीके व्यवहारसे बिल्कुल एकरूप हो जाते हैं। इसी प्रकार पहले उनकी अपनी कोई भी मातृभाषा रहे, अमेरिकामें आनेके बाद उनके लड़कोंको एक ही राष्ट्रीय भाषा अँग्रेजी सीखनी पड़ती है क्योंकि अमेरिकन सरकारने अलग अलग भाषाएँ बोलनेवाले लोगोंके लिए अलग अलग स्कूल नहीं खोले हैं। पर, यह अद्भुत संगठन अपने आप अचानक भी नहीं हो गया है। दूरदर्शी अमेरिकन सरकार बड़े अच्छे ढँगके साथ पहलेसे ही यह करती आई है और उसके उपनिवेश-विभाग, शिक्षा-विभाग, अखबार और लेखक सभी राष्ट्रके इस एकीकरणके प्रयत्नमें कारणभूत हुए हैं।

पाँच प्राकृतिक विभाग

उद्योग-धंधे, जल-वायु और देश-रचनाकी दृष्टिसे अमेरिकाके पाँच भाग किये जा सकते हैं : पूर्वी किनारेका न्यूइंग्लैण्ड नामक उपनिवेश, पूर्वी किनारेका मध्यभाग, दक्षिण भाग, मध्यभाग और पश्चिमी किनारा।

न्यू इंग्लैंडका प्रदेश उत्तर समशीतोष्ण कटिबंधमें है। वहाँ गर्मियोंमें बहुत गर्मी नहीं होती पर सर्दियोंमें ठंड बहुत पड़ती है। तीन-चार महीने जमीनपर बर्फकी तहें जमी रहती हैं और नदियों और झीलोंपर तो दो-तीन फुट बर्फ जम जाती है। इस भागकी जमीन पहाड़ी और पथरीली है। इससे यहाँ बड़े पैमानेपर खेती नहीं की जा सकती। दूसरे भागोंकी अपेक्षा यों तो यह भाग बहुत छोटा है, पर बस्ती बहुत घनी है और सैकड़ों शहर पास पास बसे हुए हैं। इसका कारण इस भागके हजारों कारखाने और बड़ा भारी व्यापार है। न्यू इंग्लैण्डके पश्चिमकी ओर पहाड़ोंकी कतार लगी हुई है और उसमेंसे अनेक नदियाँ निकलकर न्यू इंग्लैण्डमेंसे बहती हुई समुद्रमें गिरती हैं। इन नदियोंके धबधबोंद्वारा पैदा की गई बिजलीकी शक्तिसे न्यू इंग्लैण्डके कपड़े, ऊन, बूट, घड़ियाँ, चाकू, बटन, कागज, बन्दूकें, तोपें वगैरह चीज़ें बनानेके कारखाने चलते हैं। इस भागमें कपास नहीं होती, पर वह दक्षिण भागसे लाई जा सकती है।

न्यू इंग्लैण्डके किनारे सैकड़ों बन्दरगाह हैं। मेन नामके राज्यका किनारा आरेकी शक्लका है। इसे 'सौ बन्दरगाहोंका राज्य' कहते हैं। इन सब बन्दरगाहोंसे अमेरिकाके विशाल और उपजाऊ प्रदेशका अनाज और धातुएँ यूरोपको रवाना होती हैं और यूरोपका माल अमेरिकामें वितरित होता है।

पूर्वी किनारेका मध्यभाग भी न्यू इंग्लैण्डकी तरह कारखानोंसे भरा हुआ है। प्रसिद्ध न्यूयार्क शहर इसी भागमें है। अकेले इसी शहरमें बीस हजार कारखाने हैं। फ़िलाडेल्फिया शहरमें कपड़ेके, जहाज और रेलगाड़ियाँ बनानेके, तथा बन्दूकें और तोपें ढालनेके

हजारों कारखाने हैं। मध्यभाग पहाड़ी है, इसलिए वहाँके कारखाने बिजलीसे नहीं चलते, कोयलेसे ही चलते हैं।

कोयलेकी खानें

अमेरिकाकी खानोंसे यूरोपखंडकी समस्त खानोंकी अपेक्षा बीस गुना कोयला अधिक निकलता है जिसमेंसे आधा तो पूर्व-किनारेके मध्यभागके पेनसिल्वेनिया राज्यमें ही निकलता है। इस राज्यके विल्सबरी गाँवके पास एक बड़ी भारी कोयलेकी खान है जिसमें निकलनेवाले कोयलेकी कीमत अमेरिकाकी तमाम खानोंसे निकलनेवाले सोनेसे भी ज़्यादह होती है। इस खानसे हरसाल सात करोड़ टन कोयला निकलता है। इस खानका पता अचानक ही लग गया था: एलेन नामका एक आदमी शिकार करनेको निकला था। वह रातको वहाँ आकर सोया जहाँ यह खान है और ठंडसे बचनेके लिए उसने पास ही एक अलाव जला लिया। रातको दम घुटने लगनेसे वह एकदम घबराकर उठ बैठा। देखा, जिस पत्थरपर उसने अलाव जलाया था उसीने आग पकड़ ली है, उसमेंसे गैस निकल रही है और उससे दम घुट रहा है। वह पत्थर पत्थर न था, पत्थरका कोयला था।

इसके पहले लोग पत्थरके कोयलेका उपयोग नहीं जानते थे। अब तो साधारणतः 'कोयले'का अर्थ ही पत्थरका कोयला होता है और इस पुस्तकमें वह इसी अर्थमें आया है। खानोंमेंसे यही कोयला निकलता है।

कोयलेके इस प्रदेशमें इतना कोयला निकलता है कि उसको ढोनेके लिए एक रेलवे कंपनीके ९०० एंजिन और ५०००० डब्बे रुके रहते हैं और दूसरी कंपनी इसके लिए ७०००० डब्बे काममें लाती है। इनके अतिरिक्त बहुत-से जहाज भी इस कोयलेको ढोते रहते हैं।

तेलके कुएँ

खनिज कोयलेकी तरह ही पेन्सिल्वेनियाको एक दूसरी महत्त्वपूर्ण चीज़का भी अचानक ही पता चला। वह पेट्रोलियम अथवा खनिज तेल है। इस राज्यमें जगह जगह इस तेलके गढ़े भरे पड़े थे पर कोई उनकी तरफ देखता भी न था। एक किसानके खेतमें यह तेल जमीनसे ऊपर निकल आया, इसलिए वह उस खेतको थोड़ी-सी कीमतमें बेचकर दूसरी जगह चला गया। इसके बाद नये मालिकने इसी खेतमेंसे लाखों रुपयेका तेल निकाला और सन् १८५८ ई०में टायरविलीमें पेट्रोलियमका पहला कुआँ खोदा गया जो सत्तर फुट गहरा था।
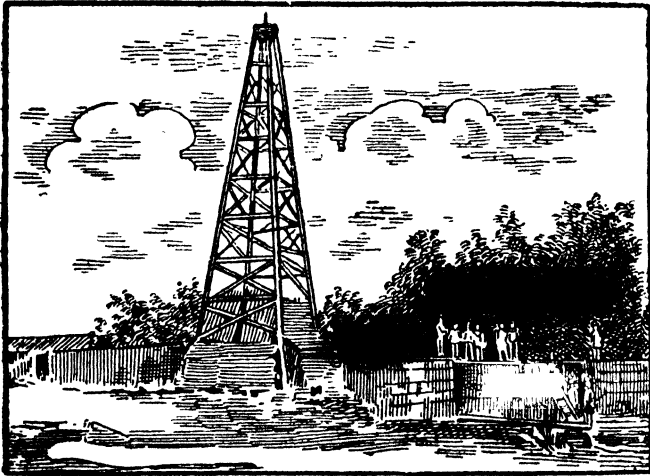
तेल निकालनेका कारखाना

परंतु फिर जल्दी ही लोगोंने समझ लिया कि इस तेलका असली स्रोत बहुत गहराईपर मिलता है। फिर तो दो दो हज़ार फुट गहरे कुएँ खोदे जाने लगे। इतनी गहराई तक खोदना आसान नहीं है और इसलिए अमेरिकनोंको यांत्रिक शक्तिसे काम लेना पड़ा। इसके लिए

पहले जमीनपर एक ऊँचा और मजबूत मचान तैयार किया जाता है जिसमें चट्टानमें छेद करनेका एक यंत्र लगा देते हैं; फिर नजदीकमें ही एक भाफका एंजिन लगा देते हैं जिसकी मददसे वह छेद करनेवाला यंत्र ज़ोरसे चट्टानपर पड़ता है और उसमें छेद करता हुआ नीचे चला जाता है।

कहीं कहीं तो खोदते खोदते तेलतक पहुँचे नहीं कि वह उछलकर ऊपर आ जाता है और आकाशमें उड़ने लगता है। पहले जब लोगोंको इसके महत्त्वका पता न था, तब वे फव्वारोंके उड़नेका मजा देखनेके लिए ही तेलके कुएँ खोदते थे। पहले इस प्रकार लाखों रुपयोंका तेल व्यर्थ नष्ट हो चुका था। तेलकी खानोंका पता लगनेके बाद उस भागमें चारों ओरसे हजारों लोग आकर जमा हो गये और वीरान जंगल आबाद होकर शहर बन गये। तेलकी खानोंसे तेलके नल सैकड़ों मील दूर न्यूयॉर्क, फिलाडेल्फ़िया वगैरह अनेक शहरोंतक लगाये गये हैं और वे इतने ज़्यादह तथा इतने लम्बे हैं कि यदि सबको इकट्ठा जोड़ दिया जाय तो पूरी पृथ्वीको चारों ओरसे कमरपट्टेकी तरह अनेक दफे लपेट लें। पेट्रोलियमसे ही किरासिन या मिट्टीका तेल बनाया जाता है और उसीसे बालोंपर लगानेके वेसलीन आदि। कहते हैं कि पेट्रोलियमसे लगभग दो सौ वस्तुएँ तैयार की जाती हैं।

तेलकी खानोंके प्रदेशमें ही जमीनके पेटमें एक वायु होती है जिसे 'खनिज वायु' कहते हैं। जमीनमें गहरा छेद किये जानेपर यह वायु उस छेदमेंसे बाहर निकलने लगती है और उसके वेगसे पत्थरोंके टुकड़े और पानी जमीनके ऊपर आने लगते हैं। परन्तु ज्यों ही यह वायु ऊपर आने लगती है त्यों ही छेदपर नल लगा दिया

जाता है जिससे पत्थर और पानी ऊपर नहीं आ पाते, केवल वायु ही आती है। इसका वेग इतना तीव्र होता है कि एक बड़ा घन भी इस वायुके निकासकी जगहपर मारा जाय तो वह वैसा ही उलटा लौट आता है। इस खनिज गैसका उपयोग कारखाने चलाने और घरोंमें प्रकाश तथा गर्मी पहुँचाने किया जाता है। इसके भी नल सब जगह ले जाये गये हैं।

फ्लोरिडा : फलोंका वन

दक्षिण भागकी हवा साधारणतया गरम है। वहाँ सर्दियोंमें भी बहुत ठंड नहीं होती और बर्फ़ भी नहीं पड़ती। न्यू इंग्लैण्डमें जब ठंडके दिनोंमें पेड़ोंका एक एक पत्ता झड़ जाता है और जमीन बर्फ़से ढक जाती है तब इस दक्षिण भागके पेड़ोंपर फल आते हैं और बगीचोंमें फूल खिलते हैं। उत्तरके बहुतसे लोग, विशेष करके बीमार लोग, सर्दियोंमें दक्षिणमें आ जाते हैं। इस भागके बिलकुल दक्षिणका फ्लोरिडा नामक राज्य तो फलोंके लिए बहुत ही प्रसिद्ध है। 'फ्लोरिडा' शब्दका अर्थ ही फूलोंका प्रदेश है। उत्तरकी तरफ़ फूलोंके जो पौधे काचके घरोंमें बड़ी मेहनतसे पनपाये जाते हैं वे फ्लोरिडामें सर्दियोंके दिनोंमें भी खुली जगहमें खिलते हैं। इस राज्यमें हरसाल लाखों खरबूजे, तरबूज, टमाटर और शकरकन्द होते हैं। इसी प्रकार केले, नींबू, अंगूर, बेर, आदि भी बहुत होते हैं। फ्लोरिडाके मुख्य फल नारंगी और चकोतरे हैं। वहाँ नारंगीके बहुतसे पेड़ोंमें पान्च पाँच हज़ार तक नारंगियाँ फलती हैं। फ्लोरिडामें नारियल भी बहुत होते हैं।

इस फलोंके प्रदेशसे अब हम तमाखूके प्रदेशकी ओर चलें। दक्षिणके वर्जीनिया स्टेटमें तमाखूकी बहुत बड़ी उपज होती है।

किसी समय वहाँ तमाखूका इतना महत्त्व था कि उसका सिक्केके तौरपर उपयोग किया जाता था। अमेरिकामें अब तो तमाखूकी उपज कभी कभी तीस करोड़ रुपयेतककी होती है। वर्जीनियामें सिगरेट तैयार करनेके बड़े बड़े कारखाने हैं।

सोनेसे भी अधिक क़ीमती

तमाखूके प्रदेशके नीचे कपासका प्रदेश शुरू होता है। अमेरिकामें कपास बहुत होती है। सारी दुनियामें उत्पन्न होनेवाली कपासका दो तिहाई हिस्सा केवल अमेरिकामें होता है। एक आदमीने हिसाब लगाया है कि यदि दुनियाकी सारी खानोंमेंसे निकाला हुआ एक वर्षका सोना एक पलड़ेमें और अमेरिकाकी एक वर्षकी कपासका दाम दूसरेमें रक्खा जाय तो दूसरा पलड़ा नीचे चला जायगा। वहाँकी कपास बहुत बढ़िया होती है, उसका धागा बहुत बारीक निकलता है। हिन्दुस्थानमें भी कपास बहुत होती है, पर बढ़िया कपड़ा तैयार करनेके लिए उसमें अमेरिका या मिस्रकी रुई मिलानी पड़ती है।

इस कपासके प्रदेशमें आबाद होनेके लिए जो अँग्रेज आये वे उत्तरकी ओरके लोगोंकी तरह धार्मिक अत्याचारोंसे तंग होकर न आये थे। वे साहसी और दृढ़-प्रतिज्ञ जमीनदार आदि थे। उनमेंसे बहुतसे तो आस्ट्रेलियन उपनिवेशवालोंकी तरह सोनेकी आशासे इस दक्षिण भागमें आये थे और फिर यहाँकी उपजाऊ जमीन देखकर कपासकी खेती करके बस गये। न्यू इंग्लैण्डकी तरह यह प्रदेश पहाड़ी या पर्वतश्रेणियोंसे मर्यादित नहीं है। इसके अलावा उन्हें कारखानोंमें भी काम न करना था, इसलिए उत्तरके लोगोंकी तरह वे घनी बस्ती करके नहीं रहे और उनको काफी जमीन मिल गई। उस जमीनमें उन्होंने सुन्दर मकान बनाये और ऐशआरामसे रहने लगे। गरम हवामें

कपासके खेतोंमें काम करना आसान नहीं, और फिर यह इंग्लैण्डकी ठंडी हवामेंसे आनेवाले सरदारों और जमींदारोंसे तो हो ही कैसे सकता था? उन्होंने आफ्रिकामेंसे व्यापारियों द्वारा पकड़कर लाये गये हब्शी स्त्री-पुरुष गुलामके तौरपर खरीद लिये और उनसे खेतोंका तथा घरका सब काम कराने लगे। ये हब्शी गुलाम अपने मालिकके घरके आसपासकी झोंपड़ियोंमें रहते थे। एक एक मालिकके पास सैकड़ों गुलाम होते थे। कुछ मालिक तो गुलामोंके साथ अच्छा व्यवहार करते थे, पर अधिकांश उनपर अत्याचार ही करते थे: उन्हें कोड़ोंसे मारते और भूखा रखते थे। हम जिस प्रकार बाज़ारमें पशुओंको ख़रीदते-बेचते हैं उसी प्रकार इन अभागे गुलामोंकी भी खरीद-बिक्री होती थी। गुलामोंके शरीरपर मालिकका पूर्ण अधिकार था इसलिए हज़ारों गुलाम स्त्रियोंके मालिकोंसे बच्चे पैदा हो गये। इनका रंग उजला भी होता था, पर थे ये भी गुलाम ही। बादमें जब इन उजले हब्शियोंके परस्पर विवाह होने लगे तब उनके बच्चे माँ-बापसे भी अधिक गोरे होने लगे, उनके आँख-नाक भी सुन्दर होने लगे।

नये हब्शी

उत्तरकी ओरके धार्मिक उदारता और व्यक्ति-स्वातंत्र्यके कट्टर विचार रखनेवाले लोगोंके वंशजोंको दक्षिणकी यह गुलाम-प्रथा पसंद न आई। इस प्रश्नको लेकर कुछ समयतक दोनों पक्षोंमें झगड़ा होता रहा और अन्तमें गृह-युद्धतक हो गया जिसमें दक्षिणकी हार हुई और अन्तमें हब्शी गुलाम स्वतंत्र कर दिये गये। उनको नागरिक अधिकार मिल गये और उनके लिए शिक्षण-संस्थायें खुल गईं। बुकर टी० वाशिंग्टन नामक प्रसिद्ध हब्शी नेताद्वारा हबशियोंके लिए टस्केजीमें एक बड़ी भारी शिक्षा-संस्था स्थापित की गई जो बहुत प्रसिद्ध है।

हब्शियोंकी ज्यादहतर बस्ती दक्षिणमें ही है। वहाँ वे मिलों, कारखानों और खेतोंमें काम करते हैं। उनमें शिक्षाका प्रचार ख़ूब हो गया है और बड़े बड़े विद्वान् भी उनमें हो गये हैं। इस तरह ये हब्शी स्वतंत्र हो गये हैं और सुशिक्षित भी, पर दक्षिणके अमेरिकन लोग अभी तक उनसे समानताका व्यवहार करनेको तैयार नहीं हैं। गोरोंके होटलोंमें वे नहीं जा सकते, ट्रामगाड़ीमें उन्हें अलग बैठना पड़ता है और गाँवोंमें अलग रहना पड़ता है। उनसे गोरोंका छोटा-मोटा अपराध भी हो जाता है तो गोरे न्यायालयकी राह न देखकर उनपर भयंकर अत्याचार कर बैठते हैं। अमेरिकामें लगभग एक करोड़ हब्शी हैं, उनकी संघ-शक्ति और कर्तृत्वशक्ति भी जबर्दस्त है। फिर भी, यह देखना बाकी है कि कालों और गोरोंके इस झगड़ेका परिणाम आगे क्या होगा।

अमेरिकामें चावल पहुँचा

पहले दक्षिणभागमें पैदा हुई कपास जहाजों और मालगाड़ियोंद्वारा उत्तरके पुतलीघर जाती थी, पर अब दक्षिणके लोगोंने अपने खेतोंमें ही कपासके बड़े बड़े पुतलीघरोंमें खोल लिये हैं। फिर भी कपास वहाँ इतनी अधिक होती है कि वह दक्षिण और उत्तरके पुतलीघरोंको पूरी खुराक देकर भी बच रहती है और इंग्लैण्ड जापान वगैरह देशोंको भेजी जाती है।

सन् १६९४ में आफ्रिकाके पूर्वके मादागास्कर द्वीपसे चला हुआ एक जहाज अमेरिकाके दक्षिण भागके केरोलिना राज्यके चार्ल्सटन बन्दरगाहमें आया। जहाजके कप्तानके पास एक थैला चावल (धान) थे। उसने जानेसे पहले वे एक अमेरिकन सज्जनको दे दिये। उसको अथवा किसी अमेरिकनको उस समयतक धानके विषयमें कुछ मालूम ही

न था। उस आदमीने अपने बागमें उन्हें बो दिया। बहुत अच्छी फसल हुई। दूसरे लोगोंने भी उससे वह नया अनाज लिया। फिर तो दक्षिण भागके निचाईवाले गरम प्रदेशमें धानकी खेती खूब होने लगी। सन् १९१३ में वहाँ दो करोड़ बुशल चावल पैदा हुए।

तारपीनकी बनावट

हम जब घरोंमें रंग करते हैं और कुरसी-मेजोंपर वार्निश करते हैं तब टर्पेण्टाइन या तारपीनका उपयोग करते हैं। यह हमें दक्षिण अमेरिकाके राज्योंमेंके घने उगनेवाले देवदारोंसे मिलता है। टर्पेण्टाइनके एक खेत या जंगलमें देवदारके हजारों ऊँचे ऊँचे पेड़ होते हैं और हरेक किसानके हाथके नीचे हजारों हब्शी मजदूर काम करते हैं। ये मज़दूर कुल्हाड़ीसे पेड़के नीचेके भागमें बड़ा-सा छिलका काटकर उसके नीचे एक बर्तन बाँध देते हैं और काटी हुई जगहसे रस चूँकर बर्तनमें जमा होता रहता है। दूसरे साल उस जगहसे दो-तीन फुट ऊपरका दूसरी जगहका छिलका निकाल देते हैं। इस प्रकार ऊपर ऊपर रस निकालनेकी जगह बनाते जाते हैं। हर दफ़ा रस कम और उसका रंग काला होता जाता है। छः-सात सालमें वह इतना काला हो जाता है कि कामका नहीं रहता और पेड़ मर जाता है।

बर्तनमें इकट्ठा किया गया रस एक बड़े पीपेमें डाला जाता है और फिर वह पीपा टरपेंटाइन बनानेके कारखानेमें भेज दिया जाता हैं। वहाँ उस रसको पानी मिलाकर कढ़ाहीमें डालते हैं और आँच देते हैं। काफी आँच लगनेपर रस उबलने लगता है और उसमेंसे भाफ निकलने लगती है जो कढ़ाहीसे जुड़ी हुई नलीमेंसे जाने लगती है। ये नलियाँ ठंडे पानीके प्रवाहमेंसे गुजरती हैं, जिससे उनके अन्दरकी भाफ गाढ़ी होकर रस-रूपमें दूसरे सिरोंपर लगे हुए

बड़े बड़े पीपोंमें पड़ने लगती है। यही टरपेंटाइन है और कढ़ाहीमें जो तलछट रह जाता है उसे रोज़ीन या बिरौज़ा कहते हैं। यह साबुन बनाने और वार्निश करनेके काम आता है। जॉर्जिया स्टेटके सवान्हा बन्दरगाहसे हज़ारों पीपे तारपीन और रोज़ीन विदेशों और अमेरिकाके दूसरे राज्योंको रवाना होता हैं।

मिसीसिपीकी घाटीमें

अब हम मिसीसिपी नदीके जहाजमें बैठकर उत्तरकी ओर चलें और जाते जाते उसकी घाटी देख लें। यह नदी दुनियाकी तमाम नदियोंसे अधिक लम्बी है। इसमें अनेक नदियाँ आकर मिलती हैं जिनमेंसे बहुतोंमें तो जहाज़ तक चल सकते हैं। नकशेमें देखो तो इन सब नदियोंका जाल एक असंख्य शाखाओंवाले पेड़की तरह मालूम पड़ता है। अमेरिकाका सैकड़ों मील लम्बा मध्यभाग इस नदीकी घाटी ही है। इतनी बड़ी और उपजाऊ घाटी दुनियामें और कहीं नहीं है।

हम अपनी मुसाफ़िरी मिसीसिपीके मुहानेके पासके न्यू ऑर्लियेन्स नामक बन्दरगाहसे शुरू करें। इस बन्दरगाहकी गोदी पच्चीस मील लम्बी है। वह देखो गोदामोंमें शक्करकी बोरियाँ, गेहूँके बोरे, कपासकी गाँठें वगैरह किस तरह खचाखच भरी हुई हैं। न्यू ऑर्लियन्सके आसपासके प्रदेशमें वर्षा काफी होती है इसलिए वहाँ गन्ना बहुत होता है। अब हम नदीमेंसे अमेरिकाके उपजाऊ मध्यभागकी घाटी देखें। वहाँ पैदा होनेवाला माल नदीसे न्यू ऑर्लियन्सको आता है और वहाँसे विदेशोंको जाता है।

यह मज़ा देखो। नदीके दोनों किनारोंका प्रदेश नदीकी अपेक्षा कितना नीचा है! वे देखो हॉलैण्ड-जैसे बड़े बड़े बाँध। उनकी

लम्बाई १८०० मील है, फिर भी जब कभी मिसीसिपीमें बाढ़ आती है, तो पानी कभी कभी इन बाँधोंको लतियाकर दूरतक चला जाता है और आसपासके अनेक गाँवोंको डुबो देता है। अपने सामने उत्तरकी ओर देखो। नदी साँपकी तरह छोटे छोटे मोड़ लेकर बाँकी-टेढ़ी बह रही है। अरे, वे आगेके मोड़के जहाज़ कितने पास दिखाई देते हैं! पर मोड़ लेकर वहाँ पहुँचनेमें तो हमारे जहाजको बहुत समय लग जायगा। मिसीसिपी न केवल मोड़ ही लेती है वरन् अपना पाट भी बदलती जाती है। और अनेक टापू और झीलें बनाती चलती है।

कितना ज़बर्दस्त व्यापार है! एकके बाद एक जहाज सीधे दक्षिणकी ओर जा रहे हैं। हरेक बन्दरगाहमें हब्शी मज़दूर अनाजकी बोरियोंपर बोरियाँ जहाजोंपर लाद रहे हैं। देखो उन जहाजोंको। वे ठेठ पेन्सिल्वेनियाकी खानोंका कोयला लेकर न्यू ऑर्लियेन्सकी तरफ़ जा रहे हैं। कितना सुन्दर प्रबन्ध है!

मकई और सूअर

अब हमारा जहाज मकईके मुल्कमें आ गया। हमारे दोनों ओर सैकड़ों मील तक मकईके खेत फैले हुए हैं। हम यदि यहाँ उतरकर पूर्व अथवा पश्चिमकी ओर रेलगाड़ीमें बैठकर जायँ तो घंटोंतक हमको मकईके खेतोंके सिवाय और कुछ दिखाई ही न देगा। अमेरिकाकी सबसे मुख्य फ़सल मकई ही है और यों तो अमेरिकाके प्रायः सभी राज्योंमें मकई होती है, परन्तु मिसीसिपीके पूर्वके इलिनोई, इंडियाना और ओहीयो राज्योंमें और पश्चिमके मिसूरी, कंसास, आयोवा और नेब्रास्का राज्योंमें वह बहुत होती है। कहा जाता है कि अमेरिकामें हरसाल तीस करोड़ बुशल मकई पैदा होती है। यदि मकईके सब भुट्टे बैलगाड़ियोंमें खचाखच भर दिये जायँ

और वे एक कतारमें खड़ी कर दी जायँ तो सारी पृथ्वीके चारों ओर उनकी बारह कतारें लग जायँगीं !

इसमेंसे बहुत-सी मकई तो अमेरिकामें ही खप जाती है। इसके आटेको गेहूँके आटेके साथ मिलाकर रोटियाँ बनाई जाती हैं और बहुत-से लोग तो केवल मकईके आटेकी ही रोटियाँ बनाते हैं। इसके सिवाय गौओं और सूअरोंको भी मकई खिलाई जाती है। अमेरिकामें ग्वालोंके अपने मकईके खेत होते हैं और वे मकई काटकर कोठोमें भर रखते हैं जिसे सर्दियोंमें पशुओंको खिलाते हैं। इसलिए, जहाँ मकई है वहाँ गौएँ और सूअर बड़ी संख्यामें होते हैं । इस मकईके प्रदेशमें लगभग छः करोड़ सूअर हैं । इन सूअरों और गौओंको ऊपर बतलाई हुई भुट्टोंकी गाड़ियोंके नजदीक एकके पीछे एक करके खड़ा कर दिया जाय तो सारी पृथ्वीके चारों ओर उनकी भी दो कतारें लग जायँगीं !

चलो, अब हम मकईके प्रदेशसे चलकर मिसीसिपीके उत्तरकी गेहूँकी घाटीमें चलें। वहाँ भी गेहूँकी पैदायशका नंबर मकईके बाद ही आता है। डाकोटा और मिनिसोटामें गेहूँकी खेती बहुत होती है। वहाँ बहुत बड़े बड़े खेत हैं और एक एक खेतमें सैकड़ों मज़दूर काम करते हैं। उनके ऊपर अनेक आदमी देख-रेखके लिए और अनेक गुमाश्ते हिसाब रखनेके लिए होते हैं।

मशीनोंकी खेती

एक खेतमें ढाई सौ घोड़े और खच्चर, दो सौ हल, एक सौ पन्द्रह काटनेके यंत्र और बीस भाफसे चलनेवाले दाना अलग करनेके यंत्र रहते हैं। फ़सल काटनेके लिए चार सौ और दाना अलग करनेके

लिए छः सौ मज़दूर लगते हैं। भाफ़के यंत्रोंसे बहुत-सा काम जल्दी होता है, फिर भी गेहूँके खेतोंमें इतने औजार लगते ही हैं।

इस भागमें एक एक खेत औसतन पाँच सौ एकड़का होता है। इन खेतोंमें पुरानी तरहके औजारोंसे काम करना संभव नहीं और केवल आदमियों और जानवरोंके जोरपर भी खेती नहीं हो सकती। इसलिए, बुद्धिमान् अमेरिकनोंने भापसे चलनेवाले हल, उड़ावनीके पंखे आदि औज़ार बनाये हैं। उनका काटनेका यंत्र बड़ा मज़ेदार होता है। उसमें भाफ़का एंजिन लगा होता है और नीचे धारवाले बहुतसे दाँते होते हैं। यंत्र चालू होनेपर ये दाँते फुर्तीके साथ गेहूँकी बालें काटते जाते हैं और कटी हुई बालें एक घूमते हुए पट्टेपरसे ऊपर जाकर यंत्रके एक हिस्सेमें गिरती जाती हैं। इस हिस्सेमें ऐसा प्रबन्ध होता है कि बालोंके ऊपर आते ही उनकी पूलियाँ बनती जाती हैं और साथ ही चारों ओर तार या रस्सी भी बँधती जाती है। अन्तमें ये पूलियाँ यंत्रमेंसे बाहर फेंक दी जाती हैं। दाने अलग करनेका यंत्र भी ऐसा ही विचित्र है। उसे चलानेमें केवल दो आदमियोंकी ज़रूरत होती है। यंत्रमें दाँतेवाले दो पहिए घूम रहे होते हैं। एक आदमी पूलियाँ डालता जाता है और पहिए पूलीके गेहूँके दानोंको बालके दूसरे भागोंमेंसे अलग करते जाते हैं: दाने एक नलीके द्वारा नीचे पड़ते जाते हैं, भूसा बाहर फेंक दिया जाता है। दूसरी ओर दूसरा आदमी थैलेका मुँह खोले खड़ा रहता है और नलीमेंसे नीचे गिरते हुए दानोंको उसमें लेता रहता है। एक थैलेके भरते ही दूसरा रख दिया जाता है। कई जगह तो बालें काटने और दानें अलग करनेका काम एक ही बड़े यंत्रसे होता ह जिसकी रचना बहुत पेचीदा होती है और जो भाफसे अथवा कभी कभी पच्चीस-

तीस घोड़ोंसे चलाया जाता है। वहाँ खेतीमें बैलोंका उपयोग बिल्कुल नहीं होता।

गेहूँको रेलके स्टेशनों या जहाजोंकी गोदियोंमें सुव्यवस्थित रखनेके लिए बड़ी बड़ी बखारें या बण्डे बने हुए हैं जिन्हें 'एलीवेटर' कहते हैं। इनके भीतर अनाज पहुँचानेके लिए लकड़ीकी एक फिरकीका उपयोग होता है जो रेंहटके चक्रकी तरह घूमती है और उससे एक साँकलमें बँधी हुई बड़ी बड़ी बालटियोंमें अनाजके बोरे रखकर ऊपर पहुँचाये जाते हैं तथा बंडेके अंदर फिर नीचे उतारे जाकर खाली कर दिये जाते हैं। बोरे खाली करके अनाज जमीनपर अच्छी तरह जँचा दिया जाता है।

एक एक एलिवेटरमें लाखों बुशल गेहूँ रक्खा रहता है। गेहूँ ले जानेवाली मालगाड़ियों और जहाजोंको एलिवेटरके पास खड़ा कर दिया जाता हैं और फिर एलिवेटरमेंसे बड़े बड़े नलोंके द्वारा वह गेहूँ डब्बों या जहाजोंमें भर दिया जाता है।
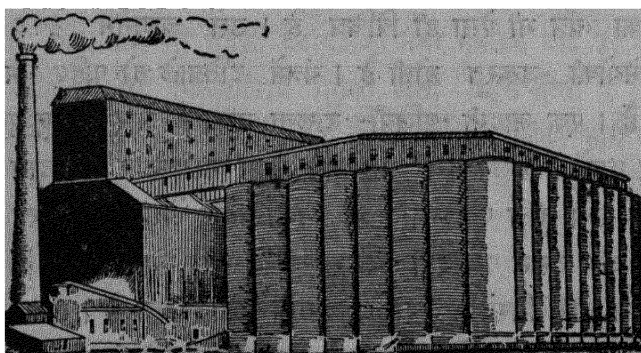
एलिवेटर : गेहूँकी बखार या बण्डा

इस घाटीमें मिनिओपोलिस नामकी गेहूँकी एक बड़ी मंडी है।

वहाँ बहुतसी आटेकी चक्कियाँ हैं जो बिजलीसे चलती हैं। हर एक चक्कीसे हर रोज पन्द्रह-सोलह हज़ार पीपे आटा निकलता है।

शिकागोमें

हम मिसिसिपीका सफर पूरा कर चुके। चलो, अब हम मिशिगन झीलके नज़दीकके शिकागो शहरमें चलें। इस शहरकी जनसंख्या बम्बईसे ढाई गुनी है। सन् १८३० ई० से पहले यहाँ केवल एक दलदल थी और इनेगिने लोग झोपड़ियाँ बनाकर रहते थे। पीछे मालूम हुआ कि आबादीके लिए मिशिगन झीलके किनारे यह जगह बहुत अनुकूल है, क्योंकि इसके चारों ओर गेहूँ, मकई, सूअर तथा गौओंका विशाल प्रदेश है जिसकी उपज मिशिगन झीलके मार्ग-द्वारा पूर्वी किनारेपर और वहाँसे यूरोपको रवाना करनेके लिए यहाँ एक बखारोंके शहरकी बड़ी भारी ज़रूरत है। इसके सिवाय इस दलदलके पास ही कोयले और लोहेकी खाने थीं और इमारती लकड़ीके जंगल भी पड़ोसमें ही थे। कारखानों और बखारोंके लिए यह दलदल इतनी सुविधाजनक निकली कि देखते ही देखते बस्ती बढ़ने लगी।

दलदलपर मकान बनाने हों तो उनकी नींव मज़बूत बनानी चाहिए। हॉलेण्डके लोगोंके सामने भी यही अड़चन थी और उन्होंने उसे जमीनमें पेड़ गाड़ गाड़ कर दूर की। शिकागोके लोगोंने पासकी लोहेकी खानोमेंसे लोहा लाकर और उसकी रेलगाड़ीकी पटरियाँ बनाकर उन्हें पास पास खड़ींकी खड़ीं गाड़ दीं और उनके बीचमें कॉंक्रीट (सिमेंट और रेतका मिश्रण) भर दिया : ऐसी मज़बूत नींवपर उन्होंने फौलादी घर बनाये। जगह थोड़ी और मनुष्य तथा कारखाने बहुत : ऐसी परिस्थितिके सबब उनको पच्चीस, तीस और चालीस मंजिलतकके मकान बनाने पड़े। पहले वे सारे घरका फौलादी

ढाँचा खड़ा कर लेते हैं और फिर बीचके मंजिलसे शुरू करके नीचे और ऊपर फौलादी खंभोंके चौखटोंमें पत्थरोंकी दीवार बनाते जाते हैं। इन आसमानसे बातें करनेवाले मकानोंको 'स्काई स्क्रेपर' कहते
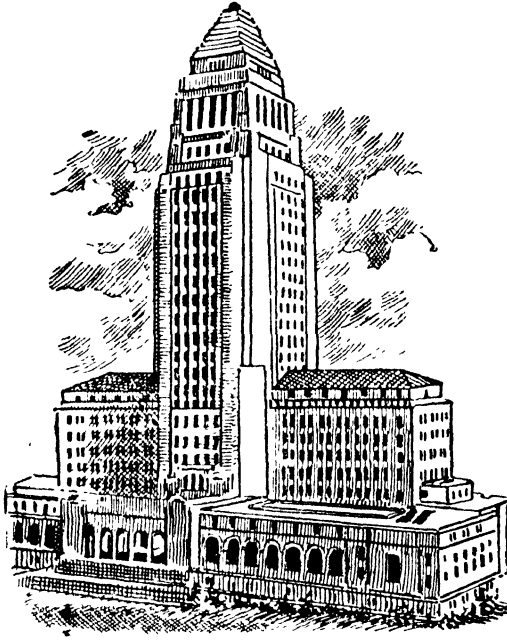
अमेरिकाकी एक गगनचुंबी इमारत

हैं। न्यूयॉर्क और शिकागोमें ऐसी अनेक इमारतें हैं। दूसरे शहरोंमें जगहकी इतनी अड़चन नहीं है फिर भी देखादेखी तथा जमीनकी महँगाई और फ़ैशनके कारण इस तरहके 'स्काई स्क्रेपर' खड़े करनेकी प्रथा चल पड़ी है।

शिकागोमें यों तो बहुतसे कारखाने हैं पर पशुओंको काटकर उनका मांस बेचनेके रोज़गारके लिए वह दुनिया-भरमें प्रसिद्ध है।

मध्यभागकी घाटियोंसे गौओं और सूअरोंको लाद लादकर मालगाड़ियाँ रात-दिन शिकागोकी ओर दौड़ती हुई आतीं रहती हैं और शिकागोसे मांस ले लेकर जहाज़ और माल गाड़ियाँ चारों ओर जाती रहती हैं। शिकागोसे सैंकड़ों मील दूरके अमेरिकन शहरोंको शिकागोसे मांस हर रोज पहुँचता है। इतना ही नहीं, लंडन, पेरिस, बर्लिन वगैरह शहरोंतक भी इस मांसकी खपत होती है।

शिकागोका बूचड़खाना

बाहरसे लाये गये पशुओंके लिए शहरके मध्य-भागमें एक बाड़ा है। वह इतना बड़ा है कि उसे एक शहर कह दें तो कोई हर्ज़ नहीं। इस जानवरोंके शहरमें अक्सर तीन-चार लाख पशु होते हैं, पर आजके आये हुए कल तक शायद ही बच पाते हैं। रेलगाड़ियाँ बाड़ेके दरवाज़े तक जानवरोंको लाकर छोड़ देती हैं। इसके सिवाय झीलसे बाड़े तक एक नहर बना दी गई है जिसमेंसे जहाज पशुओंको लेकर आते हैं और मांस लादकर चले जाते हैं। बाड़ेमें दो दो सौ जानवरोंके लिए अलग अलग हिस्से हैं। इसके अतिरिक्त गौओं, बैलों, भेड़ों और सूअरोंके लिए भी अलग अलग विभाग बने हुए हैं।

बाड़ेसे लगी हुई 'एक्सचेंज हॉल' नामकी एक बड़ी इमारत है जिसमें पशुओंका लेन-देन होता है। पशुओंको मारकर उनके शरीरके भिन्न भिन्न भागोंमेंसे भिन्न भिन्न चीजें बनानेके बड़े बड़े कारखाने भी इस बाड़ेके ही इर्द गिर्द हैं जिनमें सब काम यंत्रों-द्वारा होता है। यंत्रके एक तरफसे जीवित सूअर अंदर जाता है और वहाँ मारा जाकर उसका चमड़ा, हड्डी, मांस और खून अलग अलग होकर बाहर आ जाते हैं। मांस यंत्रके भीतर ही सुखा दिया जाता है और उसके कुछ भागका खीमा बनकर अलग अलग रास्तोंसे यंत्रके

बाहर निकल आता है। जानवरोंकी हड्डियाँ बटनों और ब्रशोंके रूपमें यंत्रसे बाहर निकलती हैं; चमड़ेके बूट, बेग और मोज़े बन जाते हैं। सूअरके बालोंके दाँतोंके ब्रश और हड्डियोंमेंसे स्त्रियोंके बालोंमें खोंसनेके पिन, कंघे और बटन बन जाते हैं। गायोंके कुछ भागोंकी दवाइयाँ बनती हैं और कुछ भागोंका साबुन, मोमबत्ती वगैरह बनानेमें उपयोग होता है। एक आदमीने मज़ाकमें कहा है कि गायोंके क्रन्दन और सूअरोंकी घुरघुराहटको छोड़कर उनके शरीरकी एक भी चीज़ शिकागोके कारखानेमेंसे व्यर्थ नहीं जा पाती।

जंगलोंका महत्त्व

शिकागोके आसपासके प्रदेशमें देवदार, बीच, बलूत वगैरहके घने जंगल हैं। पहले तो पूर्वी किनारेसे लेकर मिसिसिपीतक विशाल जंगल फैला हुआ था। खेती करने और शहर बसानेमें यद्यपि बहुतसे जंगल काट डाले गये हैं, फिर भी अमेरिकाके एक तिहाई प्रदेशमें अब भी जंगल हैं और उनके पेड़ काटनेका नियमन करनेके लिए बड़े कड़े कानून बना दिये गये हैं। पश्चिम भागका तो बीस करोड़ एकड़का जंगल सरकारने सुरक्षित रख छोड़ा है। सरकार प्रयत्न करती रहती है कि, हरसाल जो हज़ारों पेड़ काटे जाते हैं उनके बदले लोग नये नये पेड़ लगाते रहें। स्कूलोंमें विद्यार्थियोंको जंगलों और पेड़ोंका महत्त्व समझाया जाता है और वर्षमें एक दिन पेड़ लगानेका त्यौहार मनाया जाता है। इस दिन स्कूलका हरएक लड़का एक पौधा लगाता है और उसकी हमेशा देख-रेख करता है।

जंगलोंके पेड़ोंको काटकर उन्हें बहाकर ले जानेका व्यवसाय उत्तरीय भागकी झीलोंके किनारोंपर बड़े ज़ोरोंसे चलता है। इस व्यवसायमें लाखों आदमी लगे हुए हैं और उनकी हरसालकी मज़दूरी

तीस करोड़ रुपये तक पहुँच जाती है। यह काम केवल सर्दियोंमें होता है। उस समय बर्फ़ पड़नेसे सारी जमीन चिकनी हो जाती है। लकड़हारे जंगलोंमें जाकर लकड़ियोंके घर बनाकर रहते हैं और उनमें झूले बाँधकर सोते हैं। उनके पास चार महीनेके लिए खाने-पीनेका सामान रहता है। सब काम नियमित ढँगसे किया जाता है। पहले एक जानकार आदमी जंगलमें घूमता है और कौन कौन पेड़ काटने लायक हैं उनको देखकर उनपर निशान करता जाता है। उसके बाद कुछ लोग आरे लेकर आते हैं और सिर्फ निशान लगे हुए पेड़ोंका कुछ भाग काटकर आगे चले जाते हैं। उनके बाद दूसरी टोली कुल्हाडियाँ लेकर आती है जो उन्हें काटकर नीचे गिराती जाती है।

इसके बाद एक बिना पहिएकी गाड़ीमें इन कटे हुए वृक्षोंके बीस-पचीस शहतीर लादकर दो-चार घोड़े जोत दिये जाते हैं। बर्फ़की जमीन चिकनी होती है, इस कारण घोड़े इतना वज़न आसानीसे खींच ले जाते हैं। इन गाड़ियोंको नदी-किनारे तक ले जाकर शहतीर नदीमें डाल दिये जाते हैं। उस समय तो नदीका पानी ठंडके कारण जमा हुआ होता है पर सर्दियाँ खत्म होते ही बर्फ़ पिघलती है और ये शहतीर पानीके प्रवाहमें बहने लगते हैं। तब कुछ लोग उनपर बैठ जाते हैं। इन लोगोंके पाँवोंमें छोटे छोटे कीलोंवाले बूट होते हैं और हाथमें स्विट्ज़रलैण्डके मार्ग-दर्शकोंकी तरह नोकदार छड़ियाँ। ये लोग एक शहतीरपरसे दूसरेपर सरपट चलते हैं और नदीमें उन्हें इधर उधर नहीं जाने देते। इन्हें ले जानेके लिए कई जगह जहाज़ भी होते हैं। मिशिगन झीलके किनारे लकड़ी काटनेके अनेक कारखाने

हैं । उनमें एक ही यंत्रमें अनेक आरे होते हैं जिससे सारे शहतीरके एक साथ बहुतसे तख्ते बनते जाते हैं ।

अमेरिकन ग्वाले और गड़रिये

मध्यभागकी मिसीसिपीकी घाटीको छोड़ कर जैसे जैसे हम पश्चिमकी ओर जाने लगते हैं वैसे वैसे वर्षाका परिमाण कम होता जाता है और घने जंगल कम होते हुए घासके चरागाह बढ़ते जाते हैं । इस भागका मुख्य पेशा भेड़ें और गौएँ पालना है । इस निर्जल भागको बसानेमें बहुत दिन लग गये थे । पहले ग्वाले और गड़रिये बहुत थोड़े थे और वे घोड़ोंकी पीठपर बैठे गौओं और भेड़ोंको साथ लिये पानी और घासकी सुविधाके अनुसार जहाँ तहाँ भटकते फिरते थे। एक ग्वाला यदि दूसरे ग्वालेके सूने घरमें पहुँच जाता तो वह घरमें जो कुछ पाता था उसे खा-पीकर अपने घोड़ेपर बैठकर आगे चल देता
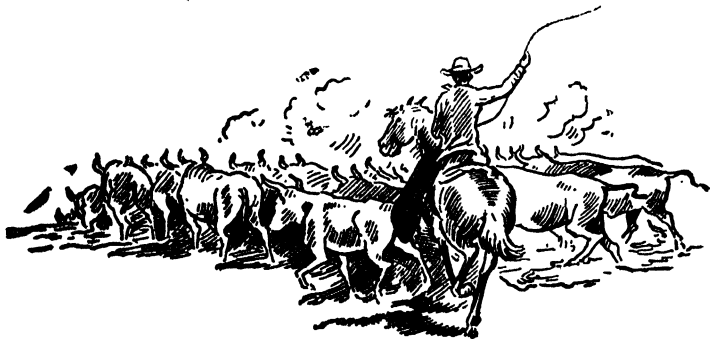
अमेरिकन घुड़सवार ग्वाला या ' काऊ बॉय '

था। फिर बस्ती बढ़ी । पूर्वी किनारेकी घनी बस्तीवाले शहरोंमें अधिक मांस खपने लगा । इससे गौओं और भेड़ोंके झुंड भी बढ़े । हरेक ग्वाले और गड़रियेके लिए चरागाह निश्चित कर दिये गये । इन

चरागाहोंको 'रेंच' कहते हैं। अब तो रेंचोंमें ये अपने बंगले बनाकर रहते हैं। बंगलोंके पास ही उनके बाड़े होते हैं। नहरके पानीसे वे उनमें अल्फाल्फा नामकी एक घास उगाते हैं। उनके पास आने-जानेके लिए मोटरें और घास काटने तथा पूले बाँधनेके यंत्र भी होते हैं। सर्दियोंमें गौएँ और भेड़ें मालिककी संग्रह की हुई घास खाती हैं और गर्मियोंमें रखे हुए चरागाहोंमें चरती हैं। इन ग्वालोंको अमेरिकामें 'कॉऊ बॉयज़' कहते हैं। ये तेज घोड़ोंपर बैठते हैं और हाथमें लम्बा सोटा लिये हुए दौड़ दौड़कर गायोंको गेरते फिरते हैं।

राष्ट्रीय यलो स्टोन पार्क

चरागाहोंके मैदानको छोड़कर पश्चिमकी ओर जानेपर ऊँची रॉकीज़ पर्वत-श्रेणी मिलती है जो दक्षिण-उत्तर आड़ी पड़ी हुई है। इसकी चोटियाँ बर्फसे ढकी रहती हैं और इसका सृष्टि-सौन्दर्य अद्भुत है। इस प्रदेशमें बड़े बड़े धबधबे हैं, सूखे और भयंकर मरुस्थल हैं और गगनचुम्बी वृक्षोंके बड़े बड़े जंगल।

राकीज़ पर्वतोंके समीपकी दो चीज़ें देखने लायक हैं: एक तो यलो स्टोन पार्क और दूसरी सॉल्ट लेक। यलो स्टोन पार्क कोई बनावटी बगीचा नहीं है किन्तु सरकारद्वारा सुरक्षित एक विस्तृत पहाड़ी प्रदेश है। इसमें दो दो मील ऊँची पर्वतकी चोटियाँ, एक एक मील गहरे भयंकर दर्रे, झीलें, धबधबे वगैरह प्रकृतिकी अनेक करामातें हैं। पर यलो स्टोन पार्ककी विशेषता उसके गरम पानीके पाँच सौ सोतोंमें है। इन सोतोंके पानीमें अनेक धातुएँ मिली हुई हैं, इसलिए वह अनेक अनेक रंगोंका होता है जो देखनेमें बहुत सुन्दर मालूम होते हैं। कई सोतोंके गरम पानीके फव्वारे बीच-बीचमें छूटने लगते हैं। कुछ फव्वारे तो वर्षमें एक-दो बार और कुछ थोड़े थोड़े मिनटोंके अन्तरसे

छूटते हैं। 'ओल्ड फेथफुल' नामक फ़व्वारा तो ठीक एक एक घंटेके अन्तरसे छूटता है। 'ग्राण्ड गायसर' फ़व्वारेकी धारा तीन सौ फुट ऊँची जाती है।

दूसरी देखनेलायक चीज़ है 'सॉल्ट लेक'। नामके अनुसार ही यह एक खारे पानीकी झील है जो सौ मील लम्बी है। इसका पानी समुद्रके पानीकी अपेक्षा छः गुना अधिक खारा है। इस झीलसे हज़ारों मन नमक निकलता है। नमकके कारण इस झीलका पानी इतना भारी हो गया है कि ऊँचाईसे यदि कोई इसमें कूदे तो उसका कन्धे तकका भाग ही पानीमें डूब पाता है, सिर शीशीके डाँटकी तरह पानीके ऊपर ही तैरता रहता है।

सोनेकी खोजमें

रॉकीज़ पर्वत और उसके पश्चिमकी ओरका पठार पहले निर्जन था, पर १८४८ में मार्शल नामक एक आदमीको यहाँकी नदीकी रेतमें सोनेके कण मिले। इस खबरके फैलते ही सोनेके लोभसे हज़ारों आदमी इस बीरान भागमें दौड़े आये और उन्होंने तमाम नदियोंकी रेत छान-छून डाली और उसमेंसे लाखों रुपयेका सोना प्राप्त किया। इसके बाद उनका हमला रॉकीज़ पर्वतोंपर हुआ। रॉकीज़को उन्होंने जगह जगहसे मील मील तक गहरा खोद डाला और कल्पनातीत सोना और चाँदी बाहर निकाली। इस समय भी बहुतसे साहसी व्यक्ति हाथमें कुदाल और फावड़ा लिये पीठपर खानेका सामान बाँधे रॉकीज़के ओनों-कोनोंमें सोना खोजते फिरते दिखाई देते हैं। इस सोनेके प्रदेशकी खानोंके मालिकोंने अपने रहनेके लिए और सोना-रूपा शुद्ध करनेके कारखाने स्थापित करनेके लिए शहर बसाये और थोड़े ही समयमें डेन्वर, सानफ्रांसिस्को वगैरह नये शहरोंमें लाखोंकी आबादी हो गई।

केलिफोर्नियाका नंदन-वन

अमेरिकाके पेसिफिक महासागरसे लगे हुए किनारेको नन्दनवन ही समझना चाहिए। केलिफोर्नियाकी सृष्टि-शोभा और जल-वायु अपूर्व हैं। यहाँ गर्मी नहीं और ठंढ भी नहीं : बारहों महीने वसंत ऋतु रहती है। पेड़ सदा हरे-भरे बने रहते हैं तथा पौधोंमें फूल और पेड़ोंमें फल आते रहते हैं। दिसम्बर महीनेमें भी खुले स्थानोंमें गुलाब फूलता है। पासाडेना नामक एक गाँवमें गुलाबकी झाड़ियाँ हैं जिनमें हजारों फूल खिलते हैं।

केलिफोर्नियाके बगीचोंमें असंख्य अखरोट और बादामके पेड़ भी दिखाई देते हैं। नारंगी और नीबूके पेड़ तो हज़ारोंकी संख्यामें हैं। केलिफोर्नियाके कुछ हिस्सोंमें हमें मीलोंतक अंगूरकी बेलोंके सिवाय कुछ भी नहीं दिखाई देता। अंजीर भी यहाँ खूब होते हैं। एक एक पेड़में पाँच पाँच सौ सेरतक अंजीर होते हैं। कहीं कहीं इतने भारी चुकन्दर होते हैं कि उनका वज़न दस-बारह वर्षके लड़केके वजनसे कम नहीं होता। किन्हीं किन्हीं बगीचोंमें चलो तो तुम्हें पेटभर तरबूज़ मुफ्त खानेको मिलें।

केलिफोर्नियामें फलोंके छोटे मोटे बग़ीचे हैं और वे नहरके पानीसे सींचे जाते हैं। आठ-दस एकड़के बगीचेमें एक कुटुम्बका अच्छी तरह गुज़ारा हो जाता है। कुछ उपजाऊ जगहोंमें तो एक एकड़के बगीचेसे ही एक कुटुम्ब मजेसे पल जाता है। कहीं कहीं बड़े बगीचे हैं भी। 'वीना रेंच' नामक बगीचेमें लगभग साठ हज़ार एकड़ ज़मीन है और इस बग़ीचेमें जो नहर बहती है उसकी लम्बाई सौ मील है। वीना रेंचके अंगूरोंके बग़ीचेके बराबर बड़ा अंगूरोंका बग़ीचा दुनियामें कहीं नहीं है। इस बागमें इतने अंगूर होते हैं कि यदि वे सारे अमेरिकामें बाँट दिये जायँ तो हरेक स्त्री, पुरुष और लड़केको

पाव पावभरसे कम न मिलें। वीना रेंचके चरागाहमें तीस हज़ार भेड़ें चरती हैं और सारे बागमें पन्द्रह सौ आदमी काम करते हैं। इस विशाल बगीचेकी आश्चर्यजनक बात यह है कि यह पहले लीलैन्ड स्टेन्फर्ड नामक एक धनी व्यक्तिका था और उसने इसे एक यूनिवर्सिटीको दान कर दिया था। 'लीलैन्ड स्टेन्फर्ड यूनिवर्सिटी' इस बगीचेकी आमदनीपर ही चलती है।

केलिफोर्नियामें जितने बड़े पेड़ हैं उतने बड़े दुनियाके किसी भी भागमें नहीं हैं। वहाँ किसी किसी पेड़का तना इतना बड़ा होता है कि यदि उसको पोला कर दिया जाय तो उसमें साठ लड़के एक साथ बैठकर पढ़ सकें।

कोई कोई पेड़ तीन सौ फुटसे भी ज़्याहद ऊँचे हैं। 'स्टार किंग' नामका पेड़ तीन सौ अड़सठ फुट और 'जंगलकी माँ' तीन सौ पन्द्रह फुट ऊँचा है। एक पेड़के तनेमें एक छेद किया गया है जो इतना बड़ा है कि उसमेंसे एक घोड़ा-गाड़ी चली जा सकती है। ये पेड़ हजारों वर्ष पुराने हैं और कहा जाता है कि दुनियामें इतने पुराने पेड़ कहीं नहीं हैं। यहाँके पेड़ोंकी लकड़ी इमारती कामके लिए बहुत अच्छी होती है, इसलिए केलिफोर्निया, वॉशिंग्टन और ओरेगन नामके तीन राज्योंमें जंगलकी लकड़ी काटनेका रोजगार बहुत जोरोंसे चल रहा है।

केलिफोर्नियाका एक विशाल वृक्ष

हमने अमेरिकामें बहुत दिन बिता दिये और देखा कि इस विशाल और समृद्ध देशके भिन्न भिन्न भागोंमें अमेरिकन लोग अपनी बुद्धिमत्ता और यांत्रिक बलपर भिन्न भिन्न उद्योग-धंधे कितने बड़े पैमानेपर करते हैं। अमेरिकाकी यही एक विशेषता है कि वह जो कुछ पैदा करता है वह इतना अधिक होता है कि चीज़के सस्तेपन और अच्छेपनके कारण दुनियाभरके बाज़ार उसके हाथमें आ जाते हैं, क्योंकि कोई भी चीज़ एक साथ ज़्यादह तादादमें पैदा की जाय तो वह सस्ती बेची जा सकती है। बहुत वर्ष इंग्लैण्ड जैसे उद्योग-प्रधान देशमें भी अमेरिकाकी मोटरें इंग्लैण्डकी मोटरोंकी अपेक्षा ज्यादह बिकती रही हैं। आजकल इंग्लैण्ड, फ्रांस, और जर्मनीमें जो फिल्में दिखाई जाती हैं उनमेंसे अधिकांश अमेरिकाकी ही बनी होती हैं

यंत्रोंका साम्राज्य

थोड़े समयमें बहुत माल पैदा करना केवल यंत्रबल-द्वारा ही संभव है। आजकल अमेरिकामें यंत्रोंका ही राज्य है। हम देख चुके कि अमेरिकाके खेतों और कारखानोंमें सब काम यंत्रोंसे होते हैं। इसके अलावा शहरों और गाँवोंके घरोंमें भी यंत्रोंका राज्य है। बिजलीके चूल्हेपर रसोई होती है, बिजली ही झाड़ू देती है, कपड़े धोती है, दीए जलाती है। घरकी मालकिन टेलिफोनद्वारा दूकानदारसे मांस, रोटी, शाक-सब्ज़ी, अंडे वगैरह चीज़ें मँगाती है और तत्काल ही दूकानका नौकर हाथ-गाड़ीमें सब चीजें लाकर नीचेसे ऊपर जानेवाले लिफ्टमें रख देता है और बिजलीका बटन दबा देता है। घंटीके बजते ही मालकिन बिजलीका बटन दबाती है और लिफ्ट ऊपर आ जाता है। बस, वह उसमेंकी चीज़ें ले लेती है। घर घर

बिना तारका रेडियो यंत्र होता है। उसमेंसे घर बैठे मीलों दूरके गाने और व्याख्यान सुनाई देते हैं और बाजारके भाव और ताज़ी ख़बरें भी मिल जाती हैं। शहरसे दूर रहनेवाला किसान भी शामको आराम-कुरसीपर बैठकर न्यूयॉर्क, शिकागो, लॉसएंजिलिस वगैरह शहरोंके गाने सुनता है।

यंत्र एक ही तरहका काम करता है और हमेशा एक ही तरहकी चीज़ तैयार करता है। मनुष्य हाथसे काम करे तो अपनी मर्जीके अनुसार उसमें रद्दोबदल भी कर सकता है और उसमें अपना हस्त-कौशल और अभिरुचि भी बता सकता है। दो आदमियोंकी बनाई हुई दो चीज़ोंमें कुछ न कुछ फर्क रहेगा ही, और उनकी विशेषता भी उनमें दिखाई देगी। परंतु यंत्रके काममें यह बात नहीं हो सकती। यंत्रोंका ज़्यादह प्रचार होनेसे अमेरिकामें एक प्रकारका एक-जैसापन सर्वत्र दिखाई देता है। एक अमेरिकन लिखता है कि अमेरिकाके दसमेंसे नौ शहर बिल्कुल एक जैसे हैं। कहीं भी जाओ, एक ही तरहका स्टेशन, स्टेशनके पास एक ही तरहका मोटरका स्टेंड, उसके आगे एक ही तरहका मक्खनका कारखाना, दो-मंजिली दूकानें और सन्दूकके आकारके रहनेके घर दिखाई देते हैं। दूकानोंमें भी वही इश्तिहार और वही माल। इतना ही नहीं, हज़ामत करनेवाले नाई और कालेजमें पढ़नेवाले विद्यार्थीकी जबानपर भाषा भी एक ही तरहकी चढ़ी दिखाई देगी।

अमेरिकाकी आविष्कारिणी वृत्ति

इस यांत्रिक एकजैसेपनके साथ साथ अमेरिकनोंमें एक ऐसा गुण भी दिखाई देता है जो इससे मेल नहीं खाता। वहाँ नई चीजकी माँग बहुत है और कुछ न कुछ नया खोज निकालने और उसका प्रचार

करनेकी उत्कंठा भी हदसे ज्यादह है। स्कूलोंका ही उदाहरण ले लो। क्या सिखाया जाय, कैसे सिखाया जाय, अध्यापक सिखाएँ या विद्यार्थी स्वयं सीखें, इत्यादि बातोंपर अमेरिकन लोग हमेशा ही विचार करते रहते हैं। उन्हें जो पद्धति अच्छी लगती है उसका वे प्रचार करते हैं, उसके सुन्दर सुन्दर नाम रखते हैं, उसपर किताबें लिखते हैं और उसका प्रसार करते हैं। वहाँ लड़कोंकी बुद्धि मापनेके लिए इतनी ज़्यादह कसौटियाँ निकली हैं कि पूछो मत। जिसे देखो वही अपनी कसौटी (Tests) तैयार करता है और बाज़ारमें बेच देता है। ऐसा कोई भी सामाजिक प्रश्न नहीं जिसके विषयमें अमेरिकनोंने नई तरहसे विचार न किया हो या प्रयोग न किये हों। इस आदतके कारण अक्सर उनके आचार-विचारमें एक अतिशयता दिखाई देती है और समाजके स्वास्थ्यके लिए जिस धीमेपनेकी ज़रूरत है उसकी परदेशियोंको वहाँ बहुत कमी मालूम होती है। पर अमेरिका तो कलका लड़का है, वह हिन्दुस्तानकी तरह न तो बहुत बूढ़ा ही है और न इंग्लैण्डकी तरह अधेड़ उम्रका स्थितिशील (Static) गृहस्थ ही।

अमेरिकन लोगोंकी प्यारी राजनीति है : न यूरोपकी राजनीतिके झंझटोंमें पड़ना और न यूरोपको ही दक्षिण-उत्तर अमेरिकाके झगड़ोंमें पड़ने देना। परन्तु व्यापारके विषयमें यूरोप और अमेरिका दोनोंको ही प्रतीत हो रहा है कि अमेरिकाकी यूरोपियन राष्ट्रोंसे प्रतिद्वन्द्विता अनिवार्य है, और उसके परिणाम-स्वरूप युद्ध भी हो सकता है। इसीसे अब अमेरिकाने अपनी जलयुद्ध-शक्ति इंग्लैण्डके बराबर बढ़ा ली है। बढ़ती हुई युद्ध-सामग्रीके कारण इंग्लैण्ड, फ्रांस, जापान और इटलीकी प्रजापर करोंका भारी बोझ लद गया है। अमेरिकामें भी यह करका

बोझा बहुत ज़्यादह है और बढ़ता ही चला जा रहा है। पर अमेरिकामें धन बहुत है इसलिए वह महसूस नहीं होता। एक दूसरेकी दानतमें संदेह करना, गलतफहमी और स्पर्धा आदि बातें सब तरहसे बुरी हैं। इस ख्यालसे कि इससे फिर भयंकर महायुद्ध शुरू होकर दुनियाका संहार हो सकता है, सब राष्ट्रोंके नेता नौका-सेना और युद्धसामग्री कम करनेके प्रयत्नमें लगे हुए हैं। जिस समय लंडनमें इस पुस्तकका अन्तिम पृष्ठ लिखा जा रहा है, उस समय वहाँ इस प्रश्नका निर्णय करनेके लिए जल-सेनावाले पाँच राष्ट्रोंके नेता इकट्ठे हुए हैं और उन्होंने सौगन्ध खाई है कि यदि कभी इन मुख्य राष्ट्रोंमें झगड़ा खड़ा होगा तो वह आपसमें शान्त उपायोंसे निबटा लिया जायगा।

दुनियामें बन्धु-भाव या भाईचारा तभी बढ़ेगा जब यह शुभेच्छा आचारमें भी उतरेगी, नौका-बल और युद्ध-सामग्री कम हो जायगी या बिलकुल नष्ट हो जायगी और मानव-समाजमेंसे युद्ध बिलकुल निकल जायगा। उस समय आधुनिक यंत्रोंकी सहायतासे राष्ट्र एक दूसरेके अधिक नज़दीक आ जायँगे, विज्ञान, साहित्य और ललितकलाओंका परस्पर खूब लेन देन होगा और हरेक राष्ट्रको अपना ध्येय प्राप्त करनेमें सारी दुनिया मदद करेगी।

अभ्यास

१ अमेरिकाको 'नई दुनिया' क्यों कहते हैं? नई दुनियाका किसने पता लगाया? 'अमेरिका' नाम कैसे पड़ा?

२ कहते हैं कि अमेरिकामें यूरोपियन लोगोंके आनेसे पहले कई ऐसी जातियाँ रहतीं थीं जिनकी संस्कृति ऊँचे दर्जेकी थी। इनमेंसे पेरूकी इन्का नामक जातिके और मेक्सिकोकी प्रजाके विषयमें कुछ जानकारी प्राप्त करो।

३ 'अमेरिका वर्ण-संकरता और राष्ट्र-संकरताका उत्तम नमूना है' इस वाक्यकी यथार्थता समझाओ।

४ संयुक्त राज्य अमेरिकामें कोयलेका पता कैसे लगा? नकशा खींचकर बताओ कि इस देशमें कहाँ कहाँ कोयला निकलता है।

५ जमीनमेंसे पेट्रोलियम कैसे निकाला जाता है और वह मुख्यतासे किस काममें आता है? यदि हमें यह तेल मिलना बन्द हो जाय तो हमारी क्या हालत हो?

६ फ़्लोरिडा और केलिफोर्नियामें फल बहुत होनेका मुख्य कारण क्या है? इस प्रदेशके किसी जंगी बगीचेका वर्णन करो।

७ किस प्रकार सानफ्रांसिस्कोके ताजे और हरे अंजीर और नारंगियाँ तीन हज़ार मील दूर न्यूयॉर्क तकमें मिलती हैं? हमारे यहाँसे कौनसे फल इस प्रकार विदेशोंको जाते हैं?

८ क्या यह सच है कि अमेरिकाकी कपासकी फ़सल सोनेसे अधिक कीमती है? कैसे? इसकी खेतीमें मज़दूरके तौरपर कौन लोग काम करते हैं?

९ अमेरिकाकी रुई हिन्दुस्तानकी रुईसे अच्छी क्यों समझी जाती है? हिन्दुस्तानमें सबसे अच्छी रुई कहाँ पैदा होती है? अमेरिकन रुईकी खेती हिन्दुस्तानमें कहाँ होती है?

१० बतलाओ कि अमेरिकाके हब्शी गुलाम कैसे और कब स्वतंत्र हुए? अब्राहम लिंकनने इस कार्यमें क्या हिस्सा लिया?

११ बुकर टी० वाशिंग्टनके विषयमें अधिक जानकारी प्राप्त करके एक लेख लिखो और उसमें उसके जीवन और कार्यकी रूप-रेखा खींचो।

१२ उदाहरण देकर बताओ कि अमेरिकन प्रजा काले हब्शियोंके साथ कैसा व्यवहार करती है। इस विषयमें अपनी सम्मति भी लिखो।

१३ टर्पेण्टाइन बनानेकी रीति संक्षेपमें लिखो। हिन्दुस्तानमें भी हिमालय पर्वतके चीड़के वृक्षोंमेंसे यह बनाई जाती है। हिन्दुस्तानमें टर्पेण्टाइनके कारखाने कहाँ कहाँ हैं?

१४ क्या कारण है कि मिसीसिपी नदीमें अनेक बार बड़ी बड़ी बाढ़ें आती हैं। इनसे बचनेके लिए कौनसे उपाय किये गये हैं?

१५ मिसीसिपीके भौगोलिक महत्त्वपर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखो।

१६ मकईके लिए किस प्रकारकी जमीन और जल-वायु चाहिए? अमेरिकामें मकईका क्या उपयोग होता है?

१७ अमेरिकाकी खेतीमें यंत्रोंका खूब उपयोग होनेके भौगोलिक कारण बतलाओ। किसी एक महत्त्वपूर्ण यंत्रका वर्णन करो। अपने देशमें खेतीके लिए यंत्रोंका उपयोग किस हदतक संभव है? हो सके तो इस विषयमें किसी जानकार किसानसे पूछ कर उसकी सम्मति लिखो।

१८ एलिवेटर और स्काईस्क्रेपरके विषयमें संक्षिप्त टिप्पणी लिखो।

१९ शिकागो शहरकी विशेषताओंका वर्णन करते हुए एक पत्र अपने मित्रको लिखो। न्यूयॉर्कका विस्तारपूर्वक वर्णन इस पुस्तकमें नहीं दिया गया है, दूसरी पुस्तकोंमेंसे उसका वर्णन पढ़कर एक छोटा-सा लेख लिखो और उस लेखमें देने लायक चित्रोंको भी ठीक तरहसे चुनो।

२० अमेरिकन जंगलोंके एक लकड़हारेके जीवनको संक्षेपसे लिखो। जंगल बिलकुल नष्ट कर दिये जायँ तो क्या हानियाँ हों?

२१ 'यलो स्टोन पार्क'के विषयमें अधिक जानकारी प्राप्त करके एक सुन्दर निबन्ध लिखो।

२२ केलिफोर्नियाके राक्षसी वृक्षोंका संक्षिप्त वर्णन करो। ऐसे जंगी पेड़ और कहाँ कहाँ होते हैं? इनमेंसे कुछके नाम दो।

२३ अमेरिकन लोगोंके जीवन-विकासमें यंत्रोंने बड़े महत्त्वका भाग लिया है। यंत्रोंके उपयोगकी हानियों और लाभोंका वर्णन करो। यंत्रोंके बिना क्या हमारा गुज़ारा हो सकता है?

२४ अमेरिकाके लोगोंकी आविष्कारिणी-वृत्तिके विषयमें एक टिप्पणी लिखो। वहाँके सबसे बड़े आविष्कारक टामस एडिसनके विषयमें क्या जानते हो?

२५ उदाहरण देकर सिद्ध करो कि अमेरिकाकी भौगोलिक परिस्थिति, नैसर्गिक संपत्ति और उसका अमेरिकन लोगोंने जिस प्रकार उपयोग किया उसपर उसकी आजकी समृद्धि अवलंबित है।

समाप्त

जीवटकी कहानियाँ

लेखक—श्रीश्यामनारायण कपूर बी० एस-सी०। ये कोई कल्पित कहानियाँ नहीं, किन्तु विज्ञानके युगकी सच्ची और प्रत्यक्ष घटनाओंका वर्णन है। इसमें हिमालयकी दुर्गम चोटियोंपर बारबार चढ़नेका प्रयत्न करनेवाले, दक्षिण ध्रुवकी खोज करनेवाले, ज्वालामुखी पर्वतोंके दहकते हुए गर्भमें भी घुस जानेवाले, घोड़ेपर दस दस हजार मीलकी सफर करनेवाले, वीरान और डरावने जंगलोंमें भटकनेवाले, विज्ञानकी खोजोंमें अपने प्राणोंकी बाजी लगा देनेवाले और सिनेमाके चित्रोंके लिए समुद्रकी गहराईमें और हवाई जहाजोंपर जान गवाँ देनेवाले जीवटदार आदमियोंकी रोमांचक और सनसनीखेज घटनायें लिखी गई हैं। जीवनको हथेलीपर लिये फिरनेवाले इन साहसी धीर-वीर स्त्री-पुरुषोंके चरित्र और उनके कामोंका हाल पढ़नेसे पता लगता है कि जातियाँ महान् कैसे बनती हैं और दुनियापर कैसे हुकूमत करती है। हर एक विद्यार्थीको पढ़ना चाहिए। यू० पी० की सरकारने इस पुस्तककी ३५० प्रतियाँ अपनी लायब्रेरियोंके लिए खरीदकर इसकी उपयोगिताको स्वीकार किया है। बहुत सुन्दर छपी है। २०-२५ चित्र भी हैं। मूल्य सिर्फ एक रुपया।